

यश की धरोहर

धर्मर शहीद भगतसिंह, चन्द्रशेखर 'भान्साव' राजगुरु, सुखदेव,
और नारायणदास सर के स्मरण

लेखक

भगवानदास माहौर

सदाशिवराव मसकापुरकर -

शिव वर्मा

संपादक

बनारसीदास चतुर्वेदी



सूक्तों तथा पुस्तकालयों में संग्रहयोग्य
साहित्य-ग्रन्थ-मासा

सं० बनारसीदास जयसेठी

१ भारतभूषण रामप्रसाद 'विस्मिल' २ २०

२ यश की घण्टी ३ २०

३ पत्थर पड़ी पलेष्वर्ककर विद्यापी

भूमिका—श्री बहादुरसाहब मेहता प्रेस में

इस मासा की ग्रन्थ पुस्तकें भी थीं ही

प्रकाशित हो रही हैं ।

COPYRIGHT © BY ATMA RAM & SONS DELHI-6

प्रकाशक

रामसाहब पुरी, सचामक

आत्माराम एण्ड सन्स

बासमोरी गेट, दिस्ती ६

ग्रन्थ	:	३ अण्ड	२०	नए बीते
प्रथम संस्करण		१	६	२
माहिका	:	मा०	मा०	इंदोमे
मुद्रक		शुधीर प्रेस		दिस्ती ६

दो शब्द

महाकवि भास ने कहा है "दुःखम्यासस्य रक्षणम्" अर्थात् किसी की धरोहर की रक्षा करना बड़ा दुष्कर कार्य होता है। इसकी गम्भीरता बे ही समझ सबसे है जिन्हें कभी किसी की धरोहर की रक्षा करनी पड़ी हो और यदि वह धरोहर किसी के यश की धरोहर हो तो उसकी रक्षा करना और भी अधिक कष्टसाध्य होता है। किसी की धरोहर के धन से अपने प्राप को धनी समझे जाने से कितनी उसमन कितनी बेचैनी, कितनी असुविधा होती है इसे मुक्त भोगी ही जानता है। दुर्भाग्य से— नहीं नहीं महान् सौभाग्य से—हमें भी कुछ स्वातन्त्र्य वीरों के यशोम्यास को अपने मन में छुपाए रखने का उत्तरदायित्व बहन करना पडा है और उनके यशोधन से अपने प्रापको धनी समझे जाने से उत्पन्न हानेवासी बेचनी उत्पन्न और असुविधाओं को सहना पडा है। उनकी देशभक्ति से देशभक्त उनके त्याग से त्यागी उनके साहस से साहसी और उनकी वीरता से वीर समझे जाने और फिर भी चुप रहने की एसी विक्षोभकारिणी परिस्थितियों में हमें रहना पडा है जिसमें अपना मन तो अपने प्रापको सदैव कटता ही रहना है किन्तु साम ही बोंगी और यशकोर समझे जाने की घाघका भी निरन्तर बनी रहती है।

राहीदो के ये मस्मरणा उसी यश की धरोहर को वास्तविक अधिकारियों को सौगाने का प्रयास है जिसे करके आज हम

सहाकवि कामिदास के कृष्ण के समान मन पर से एक भार हटा हुआ अनुभव करना चाहते हैं और कहना चाहते हैं

जातो ममार्य विशद प्रकारं
प्रत्यपितम्यास इवास्तरात्मा

सोग घबरा शिकायत करते हैं कि राजनीति के क्षम में भ्रष्टाचार हो रहा है। हर तरफ स्वार्थपरता और अधिभार पदों की छीना छपटी ही लोगों को दीख पड़ती है। एक व्यापक क्रमोप जनता के मन पर बढ़ता जाता है। ऐसी परिस्थिति में सहोदों व चौक-शहादत की याद में से एक चुन्नु भरकर इस क्रमोप को घोने का प्रयत्न करना व्यर्थ न होगा। स्वार्थ की विपसी वायु से मूर्च्छित जनता के मन को पावन बसिदासों के स्मरण-वारि के छीटे मगने से कुछ होश तो घायगा ही। सहोदों की याद हम मनुष्य मात्र को स्वार्थ के पुनसे समझने की भूम न करने दगी। बह हमारे हृदय में मनप्यता की घाया को जाग्रत रमेगी। संभ और स्वार्थ के रोग से पीडित और विन्न मन को पुन स्वस्थ करने के लिए सहोदों के स्मृति-सरोवर में एक दुबकी सगाने से अधिब घच्छा उपचार और हो ही क्या सकता है ?

धमर गहीरा राजगुरु भगतसिंह अद्वैतगर घाडाद मारापणालस गरे और मुगदब के घ मस्मरण श्रद्ध घ पं० बनारगीदाग पनुवैरी का प्रेरणा और उन्हा के प्रात्माहम मे तिगे गग है। यद्यपि गहीरा राजगुरु धमर गहीरा मरदार भगतसिंह अद्वैतगर घाडाद 'यद्य की पराहुर और गहाद

नारायणदास क्षरे' शीर्षक लेख भगवानदास माहौर के नाम से 'चन्द्रसेखर भावाव के साथ शीर्षक लेख सदाशिवराव मलका पुरकर के नाम से और 'सुसदेव' शीर्षक लेख शिव वर्मा के नाम से लिखे गये हैं तथापि समस्त लेखन-कार्य हम सबके ही सम्मिलित प्रयत्न से हुआ है अतएव इन सस्मरणों में बहिष्कृत घटनाओं की वास्तविकता का आधार हम सबकी सम्मिलित स्मृति है ।

—भगवानदास माहौर

—सदाशिवराव मलकापुरकर

—शिव वर्मा

प्रकाशकीय

राहीर-रम्य-नामा' के प्रथम पुष्प के रूप में धमर राहीर "रामप्रसाद 'विस्मय' की धामकथा" हम जनता को भेंट कर चुके हैं। पाठका धीर पत्र-पत्रिकाओं ने जिन उल्हास और सहृदयता से इस पुस्तक का स्वागत किया है उससे पता चलता है कि सर्वसाधारण अपने देश के राहीरों के सम्बन्ध में जानने-सङ्गने को उत्सुक है।

धमर हमारे पुष्प के रूप में "यश की बरोहर" प्रस्तुत है। इसमें संस्मरण के रूप में उन पाँच धमर राहीरों की बलिदान-कथाएँ हैं जिन्होंने देश की स्वाधीनता के लिए अपने प्राणों का निर्जय-निर्जम होकर होम दिया था और जिनकी कीर्ति स्वाधीनता-अग्राम के इतिहास में महा-धमररक्षीय बनी रहकर देश के भावी सपुत्रों को प्रेरणा देनी रहेगी। य है— सरदार सयतसिंह बन्दोखर 'साहाय' राजगुरु मारापगदास जरे और सुनबंध। इस पुस्तक की मुख्य विशेषता इसकी प्रामाणिकता है क्योंकि इन पुस्तक में प्रकाशित सभी सम्मरण उन देश भक्तों द्वारा लिखे हुए हैं जिन्होंने स्वयं इनके सहयोगी के रूप में कार्य किया था।

इन माता की धमरी पुस्तक "धमर राहीर मरुदासकर विद्याधी भी दीप्र ही पाठकों के हाथों में पहुँचनी। यह पुस्तक भी देशरक्षा शास्त्री न लिगी है और इसकी प्रविका भी अक्षररसात् लेख ने लिखी है।

धमर ने हम इस रम्य-नामा क धर्मनतिक लम्पाटक भी बनारसीधाम बनुरेरी के प्रति बगवदाह प्रवट करना भी अपना पत्र कतव्य समझत है जिन्होंने इन नामा के प्रकाशन की योजना ही हमारे सामुह नहीं रगी धर्मनु लम्पम्बर्धी माधवी-जबलन म श्री हमे पूर्ण सहयोग दिया है।

हमारा विश्वास है कि हिन्दी पाठकों द्वारा इन नामा के धमर पुणों का भी स्वागत होगा।

—रामसात पुरी, मध्यासप



क्रम

१	राजगुरु	१
२	सरदार भगतसिंह	२७
३	बन्धुसेखर भाबाद	६२
४	बन्धुसेखर 'भाबाद' के साथ	१३४
५	यक्ष की धरोहर	१४८
६	नारायणवास क्षरे	१६५
७	सुसदेव	१७१

प्रकाशकीय

‘सहीद-ग्रन्थ-माला’ के प्रथम पुष्प के रूप में धरम सहीद “रामप्रसाद बिस्मिल” की प्रामाण्यता हम जनता को भेंट कर चुके हैं। पाठकों और पत्र-पत्रिकाओं में जिस उन्माह और सहृदयता से इस पुस्तक का स्वागत किया है उससे पता लगता है कि सर्वमानस ए अपने देश के शहीदों के सम्बन्ध में जानने-पढ़ने को उत्सुक है।

यह दूसरे पुष्प के रूप में “यस की बरोहर” प्रस्तुत है। इसमें संस्मरण के रूप में उन पाँच धरम सहीदों की बलिदान-कथाएँ हैं जिन्होंने देश की स्वाधीनता के लिए अपने प्राणों को निर्मम-निर्मम इत्तर हार दिया था और जिसकी नीति स्वाधीनता-संग्राम के इतिहास में सदा अविस्मरणीय बनी रहकर देश के भावी सपूतों को प्रेरणा देती रहती। ये हैं— सरदार भगतसिंह, बख्तखान, ‘माजार’ राजकुमार नारायणदास लरे और सुपदेव। इस पुस्तक की मुख्य विशेषता इसकी प्रामाणिकता है क्योंकि इन पुस्तक में प्रकाशित सभी लेखन उन देश-भक्तों द्वारा लिखे हुए हैं जिन्होंने स्वयं इनके महयोगों के रूप में कार्य किया था।

इन माला की अगली पुस्तक “धरम सहीद गुरुदासकर पिछोधी” भी शीघ्र ही पाठकों के हाथ में पहुँचेगी। यह पुस्तक भी वैराग्य शास्त्री ने लिखी है और इसकी श्रुतिका भी असाधारण रूप में मिली है।

धरम में हम इन ग्रन्थ-माला के ऐतिहासिक सम्पादक श्री बनारसीदास बनुरबारी के प्रति अग्रदूत प्रणत करनी भी अपना परम कर्तव्य समझते हैं जिन्होंने इन माला के प्रकाशन की योजना ही हमारे सामुहिक नहीं रखी बरितु लक्ष्मणजी मामठी-लखनऊ में भी हमें पूर्ण सहयोग दिया है।

हमारा विश्वास है कि जिन्हीं पाठकों द्वारा इस माला के अर्थ जुगों का भी प्रदान होगा।

—रामसाह पुरी, सधासक



क्रम

१	राजगुरु	१
२	सरदार भगतसिंह	२७
३	बन्धुसेखर भाजाद	६२
४	बन्धुसेखर 'भाजाद' के साथ	१३४
५	यस की भरोहर	१४८
६	नारायणदास खरे	१६१
७	सुखदेव	१७१

यश की धरोहर

१

शाहीब राजगुरु

जब जब क्रांतिकारी वीर देशभक्त शाहीदों और उनके शोक-शहादत की बात खसती है तब तब जो एक मूर्ति मेरे मन की धाँखाँ के सामने सबसे आगे और सबसे अधिक स्पष्ट रूप में आकर खड़ी हो जाती है वह होती है राजगुरु की। सप्तसत्र-क्रान्ति के प्रयास में जिन अग्रणीत भारतीय युवकों ने अपना जीवन समिदान किया है उनमें से कुछ थोड़ों ही के निकट सम्पर्क में आने का महान् सौभाग्य मुझे मिला है। मृत्युञ्जयी अमर शाहीद वीर जतीनदास भगवतीचरण अन्द्रसेलर भाजाद, भगतसिंह, सुरदेव राजगुरु महावीरसिंह और शासिगराम शुक्ल उस दस के शाहीद हुए हैं, जिसका सम्बन्ध साहीर पद्म्यत्र केस से था और जिसका नाम था 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी'। श्री जतीनदास बगाल के दस के व्यक्ति थे और वे हम लोगों को बम बनाना सिखाने के लिए यू० पी० में आए थे। भगतसिंह आदि के साथ वे भी साहीर पद्म्यत्र केस में अभियुक्त हुए। श्री जतीनदास साहीर केस में घनघन करके शाहीद हुए भगवती भाई रावी के तट पर एक बम की परीक्षा करत हुए, बम हाथ में ही फट जाने की दुर्घटना से मार गए। सेनानी अन्द्रसेलर भाजाद ने इसाहाबाद के एल्फेड

यश की धरोहर

१

शहीद राजगुरु

जब जब क्रान्तिकारा वीर देशभक्त शहीदों और उनके पीछे-घाहाहत की बात चसती है तब तब जो एक शूरत मेरे मन की प्रांक्षा क सामने सबसे प्राये और सबसे अधिक् स्पष्ट रूप में आकर खडा हो जाती है वह होती है राजगुरु की । सदास्त्र-क्रान्ति क प्रयास में जिन अगणित भारतीय युवकों ने अपना जीवन बसिदान किया है उनमें से कुछ भाइँ ही के निकट सम्पर्क में आने का महान् सीमाभ्य मुझे मिसा है । मृत्युबपी अमर शहीद वीर जतीनदास भगवतीधरण चन्द्रसेखर भाजाड, भगतसिंह, सुखदेव राजगुरु महावीरसिंह और दामियराम शुक्ल उस दस के शहीद हुए हैं, जिसका सम्बन्ध साहीर पद्मयत्र केस से था और जिसका नाम था हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी । श्री जतीनदास बगास क दस के ब्यक्ति वे और वे हम लोगों को बस बनाना सिक्नाने क लिए ५० पा० में आए थे । भगतसिंह भाति के साथ व भी साहीर पद्मयत्र केस में अभियुक्त हुए । श्री जतीनदास साहीर जैस में अनगुन बरक शहीद हुए भगवती भाई रावो क सट पर एक बन की परीक्षा करत हुए, बस शाम में ही पत्र जाने की दुपटना से मारे गए । मनाना चन्द्रसेखर भाजाड न इनाहाबाद क एन्ड्रे

पार्क में पुमिस से युद्ध करते हुए बीर-गति पाई । भगतसिंह राजगुरु और सुखदेव सीनों एक साथ साहौर की जेल में फाँसी चढ़े । महावीरसिंह ने घण्टमांस (कासा पानी) की जेल में घनदान करते हुए साहादत पाई और दालिगराम दुबल कामपुर में पुमिस से युद्ध करते हुए दाहीद हुए । ये सभी दाहीद देश के स्वातन्त्र्य यज्ञ में अपने प्राणको बलिदान कर देना चाहते थे । दाहादत से सभी का प्यार था और सभी को यह बिस्वास था कि कभी न कभी किसी न किसी रूप में वह उठें मिनगी । व दाहादत के बीरादास प्रेमी कहे जा सकते हैं । दाहादत के लिए इतनी उतावला बंताबी व सब जाहिर न करते थे जितनी राजगुरु और मम्मबन इमी कारण दाहीदी के मघन्य में दीके दाहादत या इधक दाहादत व एतबार से—घपने परिचय के दाहीदी में—मबम पहले और सबसे घाने दाहादत के बेलाव धार्मिक राजगुरु की मूर्ति ही मेरी मऊर के सामने मड़ी हो जाती है ।

बिना रबीव (प्रतिद्वन्दी) व एधक का मडा ही क्या ? दाहादत के इस एधक में राजगुरु घाना रबीव मममने थे भगतसिंह का । भगतसिंह के लिए यह एक घच्छी गार्मी निम्सगी थी परन्तु राजगुरु के लिए यह तक पूरी तरह से निम्सगी थी । भगतसिंह धारीमिक मुधरता में साधारण न जितने धपिक धरुध थे राजगुरु उतने ही कम । दस व अधगिकारी नबपुवका की गिद्या-गीद्या वे धीमन स्तर स भगतसिंह जितन ऊपर थे राजगुरु उतने ही नीच । दस में एक दूसरे के प्रति घान्य और मम्मन का जा धीमन मान था भगतसिंह का उमने जितन धपिक मिनता था राजगुरु का उमने उतना ही कम ।

राजगुरु की धाम शिक्षायत यही रहती थी कि रगगीत (भगतसिंह की पार्टी का नाम) कहता है वाटर उस सब मान सेते हैं और मैं बघता हूँ धानी तो उमकी तरफ कोई ध्यान भी नहीं देता ।”

राजगुरु का यह दौक-साहान्न और भगतसिंह के प्रति उन की मह रक्षावन (प्रतिद्वन्द्विता) दल के मन्म्या के जोल्लिम मरे जीवन में बिनोद का एक अजल्य स्रोत था इससे हम लोगो का सदैव बडा मनोरजन होता रहता था ।

जब जब दल में कोई ऐसी बात चली जिममें दल के किसी साथी के दाहीद होने की सम्भावना हुई तो राजगुरु हुए अज्ञात और वहीं भगतसिंह को ही साहान्न मिसने की बात धाई फिर तो राजगुरु की तड़फ और बेताबी काविसन्दी हो जाती थी । उस समय दल के हम सिपाही माधियों क लिए राजगुरु मनो रजम के एक अल्लिना लिलौना बन जात थे और लल क नताधा के लिए एक गम्भीर समस्या । धनर बार एना हुमा है कि किसी काय विशेष के लिए दल के नायक अन्द्रगेयर आशाद आदि द्वारा अस्यथा अयोग्य या अनुपयुक्त समझे जात पर नी अपनी इस बेचैनी और दल क लिए एक समस्या बन जाने के कारण ही राजगुरु का उक्त काय क लिए नियुक्त करने का निदक्षय दल को करना पडता था ।

श्री जोगेय अटर्जी को जेस स निकामने की योजना बनो । राजगुरु ने धागे धागे उपकमाना धुरू किया और दल वासों की नाक में दम करके ऐसे काम अपने जिम्मे स लिए जिनक लिए आशाद आदि नायका की राय में दल में सय से उपयुक्त

व्यक्ति के ही न थे। परिणामतः साधियाँ की भिडकियाँ चिड़चिड़ाहट और खोज बितनी अधिक राजगुरु को सहनी पड़ती थी उसी दल में अग्य किसी को नहीं। साथ ही दल के लोगों और राजगुरु के प्रति 'चाय' के लिए दसों मास में यह भी कह देना आवश्यक है कि दल के प्रति बफादारी का विश्वास भा राजगुरु को शायद सबसे अधिक प्राप्त था।

भगतसिंह ने प्रस्ताव रखा कि सासा साजपठराय की पुलिस की माटियाँ के प्रहार के कारण हुई मृत्यु और उससे राष्ट्र का जो अपमान हुआ है उसका बदला लिया जाय और इस प्रकार दल में आन्विकारियों के सक्रिय अस्तित्व का जनता को परिचय दिया जाय। इस पर सब ने आगे और सब से पहले उबरना शुरू किया राजगुरु ने। निश्चय हुआ सासा जी पर साठा चलाए जाने के लिए जिम्मेदार साहीर के पुलिस सुपरिन्टेंडेंट स्कॉट को माली से उड़ा दिया जाय। राजगुरु ने ब्रिद पकड़ी— 'मालींगा मैं। भगतसिंह ने कहा— मगर मगर पकड़े जाने पर बेम खसन पर एक अश्रद्धा ययानदिए जाने की अपने व्यवहार से जनता को प्रभावित करने और फाँसा जात हुए एसा बर्ताव करने की आवश्यकता सर्वोपरि है जिसे जनता और अधिकारोपण भा हमारे काम का सबसे जोर और पागलपन की बात न गममें हमारे काम से ब्रिद और गिगा-गीगा सम्पन्न बनिष्पन की भावना ही जनता के हृदय में जाग्रत है। अन्त में निश्चय यह हुआ कि साहीर के पुलिस सुपरिन्टेंडेंट का गानो मारा जाय और उसके लिए राजगुरु भगतसिंह और स्वयं राष्ट्रोपरि आजाद आयें। जय-

गोपाल को मौका देखने और स्कॉट साहय को पहचानने तथा उनके गति विधि की खबर रखने आदि के निगम नियुक्त किया गया। (यही जयगोपाल बाद में साहौर पञ्चमय केस में सरकारी माफीखोर गवाह बना)।

चार दिन बराबर यह टुकड़ी अपने काम पर आती रही थी। परन्तु स्कॉट निर्विष्ट स्थान मान रोड पर पुलिस कार्यालय के सामने से निकलता ही नहीं। बेकरार राजगुरु ने आज्ञा से कहा— अन्दर जाकर ही ठीक किए जाता हूँ। यानी पुलिस दफ्तर के अन्दर ही काम करते हुए स्कॉट को गोली मारे जाता हूँ !! आज्ञा ने भीम तरेरी, लुक लुक न किया कर, लुक लुक करना है तो घर जा। आज्ञा ने मौका देख कर इस काय की पूरी योजना भली भाँति बना रखी थी। काय में अनुशासन के मामले में वे बड़े कट्टर थे। स्कॉट को गोली मारने के लिए आज्ञा भगतसिंह और राजगुरु की टुकड़ी थी जो मौक़ पर मोर्चाबन्दी करके सड़े थे। जयगोपाल स्कॉट का पहचानने और इस टुकड़ी को इशारा करने के लिए नियुक्त था और यदि पुलिस से मुठभेड़ हो पड़े और कुछ अधिक संख्या में पुलिस द्वारा इस टुकड़ी का पाछा किया जाय तो पुलिस को पीछे से चपेट में लेने के लिए एक और सशस्त्र टुकड़ी नियुक्त थी जिसमें थे सुखदेव विजयकुमार सिन्हा और मैं।

हम लोगों ने देखा कि कोई अग्रेज पुलिस अफसर कार्यालय से निकलता। उसका मुँही मोटर साइकिल लिए उसके साथ था। जयगोपाल ने इशारा किया कि देखो शायद वह भाया। भगतसिंह ने इशारा किया, धरे यह वह नहीं मामूम

हाता । राजगुरु ने समझा कि भगतसिंह कहते हैं—धमो मत मारो जरा इधर घाने दो । यानी वह इधर भगतसिंह की रेंज में घा जाय तो भगतसिंह गोली चलाएँ । भसा राजगुरु को यह कद मजूर हो मकता था । अक्रमर मोटर साइक्स पर पर रखने ही वाला था कि राजगुरु के रिवास्वर की गोली उमके सिर के पाय हो गई । वह वहाँ डेर हा गया । भगत सिंह ने घाने बहुत बर अपने फाँटासटिक कोसट पिस्तौल की घाठ गोमिया से पुसिस अक्सर की साय का माम रोड पर जड सा लिया । इगक लिए राजगुरु ने बाद में धर घाने पर मुक्त से अकेल म कहा था 'रएजीठ ने घाठ बारतूम बकार गुगय विग ।

पुसिस अक्रमर मर गया और पुसिस कार्यालय म लल बसा मक गई । अक्रम स लोग बाहर निक्स घाए । फुसँ मामक एक महालय का बीरता करने की सुमी । वह राजगुरु की तरफ उल पकाने क लिए लपका । राजगुरु न अपना रिवास्वर उमकी तरफ सोधा किया और ट्रिगर दबाया । मगर घासी न घनी । बलता कम ? इगक लिए रि निगना ठोक लगे अनाय दानों हाया स रिवास्वर घसाया करत थे । घादाय ने इगक लिए उह यह तरकीब बतार्द थी कि रिवास्वर की नवी क घगल छार पर एक मजकून रम्मी बाँध सा जाना थी और उमका इमग विग रिवास्वर के बट क बुल म बंध रहता था । बाँध हाय म लग रम्मी का गीय कर पकट लिय जाना थ और लाहिने हाय में रिवास्वर का घट होना हो था इगम हाय हिलने की गुजायश कम हाठी थी और निघा

ठीक सगता था । मगर इस समय राजगुरु के रिवाल्वर में बैसी बोरी बँधी ही न थी । अतएव जनाब ने इस वक्त अपने बाँध हाथ में रिवाल्वर के घूमने वाले गिरों को ही पकड़ रखा था । फिर मला गोसी कैसे चलती ! आपने समझ रिवाल्वर छूटा ही गया । अस्तु, फर्न्स सिर पर धा पहुँचा । राजगुरु ने अपना 'प्रिडियस' रिवाल्वर कोट की जेब में डाला और आप धागे बंध के सपक कर फर्न्स से भिड़ गए और उसे मास रोड की सख्त जमीन पर ऐसा पछाड़ा कि फिर वह वहाँ से उठ न सका । राजगुरु ने देखा कि भगतसिंह ने पिस्तौल को सासी मैगजिन जमीन पर गिरा दी है । आप कार्यालय की तरफ गए और सासी मैगजिन उठा साए । आश्चर्य देखते ही रह गए कि यह 'मूर्ख उधर कहाँ जा रहा है मरने । बेचारे को इसके लिए भी भिड़को सुननी पड़ी— अब तू उधर उस्ता कहाँ मरने गया था ? अब राजगुरु ने जेब में से सासी मैगजिन निकाल कर पेश की तब भी आश्चर्य ने मर्यादा निर्भीकता के लिए मन ही-मन उसकी प्रशंसा की होगी परन्तु प्रकट रूप से राजगुरु के प्रति साहस के लिए उन्होंने उसे भिड़का हा गिर गई थी तो गिर जाने देना । उसके लिए उधर जाने की क्या जरूरत थी ? तेरा बस बसता तो तू जले कारतूसों के सोल भी उठा साता ? मूर्ख कही का ! यहाँ यह भी कह देना चाहिए कि जो अज्ञान अकसर मारा गया और जिसको न मारने के लिए भगतसिंह ने इशारा किया था, वह राजगुरु और दस की अशुभ सखीर से नायब पुलिस सुपरिन्टेन्डेण्ट सर्जिंस निकसा जो सासा साजपठराय पर लाठियाँ बरसाई

जाने के लिए उठना ही जिम्मेदार था जितना स्पोर्ट घोर जिसने स्वयं भी माना जी पर मारात्मक प्रहार किए थे। साण्डस का वह मुन्शी बननसिंह भी इनकी धार पकड़ने को सपना तो घाजाल ने पहल एक गाली उसक पैर में मारी मगर जब वह पर मटक कर फिर भी आगे बढ़ा तो फिर घाजाल के माउजर की गोली उसके सीने से पार हो गई। घाजाल भगतसिंह राजगुरु तीनों बटनाम्बल से माफ़ निकल आए।

राजगुरु के छोड़ दाहादत घोर भगतसिंह के प्रति उनकी प्रतिद्विष्टता का एक घोर प्रबल उद्भव सब हुआ जब भगत सिंह ने दिल्ली की असेम्बली में बम फेंकने का प्रस्ताव रखा। निश्चय यह हुआ कि असेम्बली में बम फेंका जाय वहाँ अपने कार्य का स्पष्टीकरण करते हुए पर्षे भी पके जाय वहाँ से भागा न जाय और अदालत में केस चलने पर एक बड़िया सा बयान दिया जाय तथा मुकद्दमे को प्रचार और स्पष्टीकरण का साधन बनाया जाय। भगतसिंह ने ही यह प्रस्ताव रखा और यह हठ था की कि उन के ही पुरा करगे। राजगुरु इन काम के लिए स्पष्ट है उपयुक्त न थे। अपने माथ चलने के लिए भगतसिंह ने बटुकस्वराम का पुत्रा। राजगुरु का जब यह मामूला हुआ तो माना उनके सार बदन में घाग मग गई। उन तिनों घाजाल भाँसी चले आए थे। भगतसिंह बटुकस्वराम दत्त घालि वा पार गाया ही दिल्ली में रू गए थे। राजगुरु घाजाल के पाग आए और हर तरह से उन्होंने घाजाल का यह सम्मानने की कोशिश की कि व भगतसिंह के गाय जाने के

सिए विल्कुल उपयुक्त हैं। उनकी सबसे बड़ी त्रुटि यह थी
 रही वक्तव्य देने को घात इसके लिए यह क्या जरूरी है कि
 वह अंग्रेजी में ही दिया जाय ? यह हिन्दी में भी दिया जा
 सकता है। यदि अंग्रेजी में ही देना हा ता मैं उसे जमा कहो
 वैसा रट लूंगा। पण्डित जी ! इसमें से एक भी भ्रम नहीं
 होगी। अरे मधु सिद्धान्त की मुनी पूरी 'अ इ उ ए' से 'भूनस्ति'
 तक रगड़ कर फरक बो है तो क्या अंग्रेजी का दो बार पन्ना
 का एक छोटा वयान में रट सकूंगा ? अपना पण्डित छुड़ाने के
 लिए आजाद ने उसे एक चिट भगतसिंह के लिए लिख कर दे
 दी कि यदि भगतसिंह ठीक समझे और कोई बिषय हानि न
 हो तो बट्ट के बजाय राजगुरु को ही अपने साथ ले जायें।
 राजगुरु बड़ी हीस से चिट लेकर दिल्ली पहुँचे परन्तु भगत
 सिंह ने उन्हें उमटे पैर वापस भगा दिया। राजगुरु फिर आजाद
 के पास भगतसिंह की शिकायत करने के लिए भौंसो आए
 परन्तु अब आजाद ने उनके शीक-शहादत पर कोई ध्यान नहीं
 दिया और उमटे उनकी जिद पर मुँकवाए तो राजगुरु विगड़
 कर वहाँ से हम लोगों से यह कह कर चस गए कि देखता हूँ
 अकेले भी कुछ कर सकता हूँ कि नहीं।

राजगुरु वाह में पूना में पकड़ गए और भगतसिंह और
 सुखदेव के साथ साहौर पडयत्र बस में उनको कान्तिवारी
 देसभित का सर्वोच्च पुरस्कार—फौसी मिला। जिस प्रकार
 उस के जीवन में ब्रिटिश साम्राज्यवादी शक्तियों के साथ जीवन
 मरण के गम्भीर सघप में राजगुरु अपने साथियों के लिए
 अपने भुक्तकडपन अपनी खड्युसहवासी, अपनी असाधारण

विचित्रताओं से विनोद हास्य आश्चर्य और कभी-कभी चिड़के भी आसम्बन्ध बने रहते थे उसी प्रकार वेस खमक सन्ने बाव में सम्बी सम्बी भूल हड़ताओं में अपने व्यवहार से अपने अस्मिन् दृश्य तक वे मनोविनोद की सामग्री प्रस्तुत करते रहे । जैसे क धातुर दस के जीवन में मदव उनका यही हाम रहा कि कहिए तो विम मर छींकते हो रहें । कभी इससे भी अधिक वीभत्स बात घाप अपनी मौज में करते रहते थे और नाच पर बपड़ा रन्ध माधियों का झिड़कियाँ वही शान्ति और उद्वेग हीनता से मुक्त रहते थे और उमका रस मते थे । घपना यह काम घाप इतने निर्विकार विल से करते थे माना घाप कोई मनाबजानिक प्रयोग कर रहे हों ।

सोच तो घाप प्राय रहते ही थे । कभी कभी ऐसा प्रतीत जाना या माना घापका यह म्दर सवार हो कि सोने क सामर्य में कुछ और अन्वयम बढ़कर वे कुमरुण का प्रतिद्विष्टता क लिए समकारण । एक बार मैंने परिहास में उनसे कहा था रहने भी इ यात्र क्या जाने कुमरुण कुमरुण कोई या भी या नहा तू किस से कम्पाटागत में लगा है ? यह ता एक पीरालिनर गण्य है । तू क्या इग बकटर म पड़ा है । ता घापने उत्तर दिया था 'पुराण एषदम गण्य नहीं होते । कुछ बास्त्विकता का घापार उनसे जाना हो है । और नहीं तो गाने क सामर्य में कभरुण का सभाबना को तो मैं व्यावहारिक रूप में प्रमाणित कर ही रहा है ।

गाधियों में घापक माने क क्लिप्त मगहर ये और पार्श्व म माधियाँ क अगिम भरे जावन को वे हास्य रस के ग्राव

सं हुरा भरा रसते थे । भगतसिंह घड़ी सीज से एक घटना बार बार सुनाते थे जिसमें अग्र्य और साधियों को बड़ा आनन्द मिलता था । भगतसिंह और राजगुरु दोनों एक रसवे स्टेशन पर थे । रात के शायद दो बजे की गाड़ी से जाना था । भगत सिंह लगातार दो रातों के जागे हुए थे । उन्हें नींद रोके रहना असम्भव-सा हो रहा था । मगर यह देखकर कि जनाब उनके साथ हैं वे बेचारे सो जाने का साहस न कर सकते थे । न जाने य हजरत जब सो जायें और क्या हो जाए । फिर भी जब भगतसिंह के लिए जागते रहना एकदम असम्भव हो गया तो उन्होंने राजगुरु से कहा 'रघुनाथ ! (पार्टी में राजगुरु का यही नाम था) देख भाई ! तू दस रहा है मुझ से अग्र्य और जागते रहना नहीं बनता, मगर तू अपनी पूरी जिम्मेदारी समझे, तो मैं एक-आध घंटा सो सँ । गाड़ी दो बजे आती है मुझे तू आप बड़ सपाक सं घात जाट कर दोले 'हाँ हाँ हाँ हाँ' सेट जाओ । (भार आपने विस्तर बिछा दिया) तुम क्या मुझे विल्कुल यूँ ही समझते हो । मजाक की बात दूसरी है । वसे मैं क्या जाग नहीं सकता ? तुम सा जाओ मैं बक्त सं जगा दूँगा । भगतसिंह ने अपना ओबर कोट उतार कर आपको पहना दिया और अठा दिया कि होशियार रहना । चीज (मानी भरी हुई पिस्तौल) जेब में है । करीब डेढ़ बजे मुझे जगा देना । भगतसिंह अट गए और भप गए । बटिकुल हाल के गुप्त-गपाड़े से जब उनको नींद टूट सी रही थी तो उन्होंने सुना कि हाम की घड़ा परघरान सगी और बजा—टन् । उन्होंने सोचा एक बज गया । मगर घड़ी ने दूसरा टन् भा बजा दिया । भगतसिंह

हृदयदाण । मगर जब तक उठें उठें तब तक तीसरा टनू भी बज गया । अथ भगतमिह सिवाय इन व कि यह घाटा करें कि घायल घटा चार ही बजा रही है और कर ही क्या सकते थे ? मगर घटा ता चार बजा कर रक गई । भगतमिह तिन मिमा कर उठे । वया तो जनाब राजगुरु साहब घेंच पर छट बड़ इरमीमान से पुरघों कर रहे हैं । भगतमिह ने तदा में घाबर जा ठोकर मारी ता घायल वह घेंच में ही अधिक सगी । राजगुरु जब उठे तो घायलें मसते हुए परिस्विति को बुद्ध-बुद्ध समझ कर भाले— 'त क्या हुआ ? तुम्हारी बसम मुझ नहीं मालूम क्या हुआ !'

घागर में दन के बहुत से सदस्य एकत्र थे । श्री जागेरा ग्र पटवर्ती को जेय न निवासने की योजना बन रही थी । घागरे में हम सागा के न मजाम थे । एक में अमर गहीद अतीनवास साधिया का यन यनाना सिमान थे । वही पर आजाद भगत मिह जग ब-दाय समिति के गम्भीर सदस्य रहते थे । दूसरे महान में दाको और सब भोग रहते थे । उस समय में ग्वात्रियर में बिस्तरिया पालक में बी० ए० का विद्यार्थी था और वहीं होम्स में रहता था । साथी जयन्त घायल मसुरा में रहत थे । श्री जागर पटवर्ती को पुस्तिम के हाथ से छुटाने व पाम के लिए मरा और माया जयन्त की भा घायल-वज्रा गमभी गई । आजाद ने श्री विजयकुमार सिन्हा से सुरन्त हा हम सागों का सुतबा देने का वग । विजयकुमार सिन्हा न दूसरे महान में आकर मुझे सुना जाने के लिए मारि मदागिब से कहा और जयन्त का यना गाम व लिए राजगुरु से कहा क्योंकि उस

पमय जयदेव का पता वहाँ पर केवल राजगुरु का ही मामूम था। राजगुरु को सोते स उठा कर झन्डी तरह झकझोर कर विजय ने उन्हें उनका काम समझाया। भाई सदाशिव और राजगुरु दोनों राजा मण्डी रेलवे स्टेशन के लिए चले। रास्ते भर राजगुरु बेक्रीमी स सोत जा रहे थे। घापकी सिद्धियो में यह भी एक थी कि घाप पदम बनसे घसते भी सो सकते थे। भाई सदाशिव को लका हुई कि कहीं हजरत सोते हुए ही तो विजयकुमार की बात नहीं सुन रहे थे? इन्हें क्या करना है इसे इन्होंने झन्डी तरह समझा भी है या नहीं? अतएव स्टेशन पर पहुँच कर सदाशिव ने राजगुरु को सावधान करने के लिए कहा कहाँ जा रहे हो? गुप्त दस में गोपनीयता का जो नियम था यह पूछता उसके विरुद्ध था। अतएव जब राजगुरु ने दिल्ली जाने वाली रेलवे साइन की ओर इशारा करते कहा 'इस तरफ ता सदाशिव चुप हो रहे मगर उन्हें उसी समय धका हो गई किये हजरत घपनी सोने को धुन में कहीं के कहा न पहुँच जायें और काम के लिए जहाँ और लोगों को यहाँ बुसाया जा रहा है वहाँ और यह एक गाँठ के न निकल जायें। अस्तु भाई सदाशिव ग्वालियर से मुझे लेकर दूसरे दिन भागरे पहुँच गए। इसका ही इस्तजार हो रहा था कि राजगुरु जयदेव को साथ लेकर आ जायें।

बाहर से कुण्डी लटकी और मैने जाकर अन्दर की सज्जत जोसी। राजगुरु साहबु अपना म्भसा लिए हुए अकेल घर में घुसे। विजयकुमार सिन्हा ने समझा कि हरीश (जयदेव) मञ्जाक के लिए पीछे घाट में छिपा है। उन्होंने मञ्जाक के

सहजे में जयदेव को पुकारा । राजगुरु साहय घाँगन में भीषक लड़े रहे । घाप उम बकन तक बुद्ध नहीं बास । विजयकुमार सिन्हा जयदेव को देखने के लिए बाहर रास्ते तक हो घाए घौर वहाँ स बड़ी परेधानी में सौटे । राजगुरु साहब घाँगन में वैसे ही लड़े थे । विजय ने पूछा 'हरीश कहाँ है ? उसे दूसरे मकान में क्यों भेजा ! यही जाने का कहा था न ? मगर हजरत हरीश को माय ही कब थे ! विजयकुमार ने घापसे हरीश को जन्म से जन्म माने को कहा था । घापका बुद्ध ग्यय भी इमक लिए हा यह कह कर लिए थे कि इन्हें हरीश को द देना घौर कह देना कि यदि बहुत ही शायक हा तमी एनमें स लख करे करना इनको वापस साथ में लोटा माए, यहाँ ग्यय की घटी कमी है । मगर जमाब जब हरीश के पास पहुँचे तो घापने ग्यये के लिए घौर बास, 'जो शायक हो लख करे घौर यही रहना । यहाँ स एक मिनट क लिए भी बाहर मत जाना । हरीश ने कहाँ कहा भी कि मुझे सुनाया क्या नहीं मुझे तो घुनाए जान की बात थी मगर घापने फिर भी यही कहा 'नहीं तुम यही रहा घौर यहाँ स कही मत जाना । यह ग्यया भी घापने पास मुग्धित ग्यना । बात यह थी कि विजय ने जो बुद्ध इम स कहा था गा ता माने में इन्होंने ठीक स मुता ही नहीं था । बास स घपनी बुद्धि स तक यह मगाया था कि हरीश ऐसी जगह रहता है जिम को दस क एक दो साग ही जानन है । घतएय इग जपठ का ही इग बात क लिए ठीक गममय गया हागा कि जोगेन बाबू को जेत स मिकाम कर यहाँ । जाय । घतएय हरीश को यहाँ ही रहना चाहिए घौर

महं स्वयं भी सुरक्षित रखना चाहिए । इस प्रकार आप वहाँ गाँठ का कुछ स्वयं घोर रख कर लौट आए जबकि मेजा आपको इस लिए गया था कि हरीश को साथ से धायें । विजय कुमार बहुत विगड़े घोर जा कर इनकी इस सम्बन्धवासी की बात आजाद से कही । आजाद उमटे विजय पर ही विगड़े 'तुम्हें कोई घोरन मिसा भेजने को जो रघुनाथ को ही मेजा ? वह तो जाना-माना लुक लुक है । भ्रष्टा भ्रष्ट उमसे कठना-सुनना कुछ नहीं । इस समय हमें उसके पूरात उरसाह में रहने की आवश्यकता है ।

एक रोज मकान में महं वावेसा मचा कि राजगुरु कहीं सो गया । बड़ी आश्चर्ये कुशकामे होने लगी क्योंकि विना कहे मकान के बाहर कोई जाता न था घोर घर पर बही राजगुरु का पता न था । वो एक मोग उसे बाहर भी जा कर देख आए । सब बड़ी परेशानी में थे कि राजगुरु गया तो आखिर कही गया । लोगों की बातों का कही उसे कुरा तो नहीं लगा कि वह किसी से कुछ कहे-सुने विना सठ कर चुपके से चला गया । इस तरह की बातें लोगों के मन में आईं । इतने में एक कोने में लूँटी पर टेंगी हुई चादरें घोर कपड़े नीचे गिर पड़े । लोगों ने उपर देखा तो जनाव राजगुरु साहब लूँटी के नीचे भीत के सहार कोने में लड़े-लड़े सो रहे थे । जब इन्हें जगाया गया तो सोठ हुए ही बोले— 'ठैं हूँ ! बोसो मत साने दा ।

एक रोज यों ही इस बात का चर्चा हो रही थी कि कान्ति कारियों पर पुलिस क्या क्या धर्याचार करती है, कौसी कमी धारीरिक यत्रणायें उग्हें देती है । शायद भगतसिंह हा पुलिस

के प्रमानुषिक प्रत्याचारों का अपमानियों का घेय डिगा देने वाला बगुन कर रहे थे। उस रात जब गुलाम खोर में हारने के बाद पनास्टो के रूप में राजगुरु सब साधियों के लिए खाना पकाने बठे ता प्रायन सैंडाली धगीठी में गरम होने के लिए रख दी। एर अन्य साथी से प्राप बड़े मज में हम हस कर यारों करे बसे जात थे और धगीठी में सैंडाली गरम हा रही थी। यह पूरा साल हो गई तो प्रापने बसे हा हंसते-हंसते उस उठया उमे एर धार बड़ी धगड़ी तरह बसा मानो उमने तेज नाम रग की मन-ही-मन प्रशंसा कर रहे हों। जिसम प्राप बातचीत कर रहे थे वह साथी इनकी इस खेप्टा को इमना बचपन समझ कर यों ही इन्हें देखता रहा। जब प्रापने सहसा उस नाम जसनी हुई सैंडाली को छम् छम् छप तीन जगह धपनी छाती पर लगा लिया ता उसन सपक कर इनके हाप स वह सैंडाली छुड़ाई हैरत से बाना 'यह क्या करता है बे ? प्राप बोले 'बुद्ध मही पार ! दग रहा था कि टार्वर स में बिचलित तो नहीं होगा। और प्राप बिना किसी पाड़ा के प्रकाशन के उसी प्रकार स्वल्पता ग काम करत रहन में प्रवृत्त हुए। धस्तु, साधियों ने इ हें बहुत झिड़का और इनके पावों की मरहम पट्टी करवाई। सब ऊपर स बड़े हिराम थे कि कैसा मिड़ी है। बहा गिरी ने भी मही परन्तु भीतर से बाबक मन में धव्यकत रीति ग ही मही यह बात पकती तरह जम गई कि रपुनाथ (राजगुरु) किसी और हा पानु का बना हुआ है। मेरे लिए तो प्रात्र तर यह गमग्या ही बनी हुई है कि राजगुरु ने धपनी ता का स्वयं धपने प्रापका परगन के लिए और धारम

विश्वास उत्पन्न करने के लिए बलाया था या अपने विषय में मगर्तसिंह आज़ाद आदि साधियों को विश्वास दिलाने के लिए ।

राजगुरु को बातें करने का बड़ा शौक था और जब बातें करने पर आप पिन पड़ते थे फिर उनसे पिण्ड छुड़ाना मुश्किल हो जाता था और जब तक बात का और बात सुनने वाले का भी कबूल न निकल जाए आप बाज न आते थे । इनकी बातों से सभी प्रायः घबराते से रहते थे । एक बार आज़ाद, ये और मैं पुलिस की मजदूरों से बच कर कानपुर से भाँसी आ रहे थे—रेम से । हम लोग साधारण बेपढ़-सिले मजदूर छोड़ों के वेश में थे और वैसे ही गन्दे कपड़ पहने थे । आज़ाद की हिंदायतों के अनुसार मैं बात बात पर गाली बकता कभी रेम के डिब्बे की सड़त लिङ्को की माँ से निकट सम्पर्क स्थापित करता कभी दरवाज़ा को धपना साला बना कुछ सोफ़रों जसी सस्ती ग़ज़बों गुनगुनाता आ रहा था और आज़ाद भी बसा ही कर रहे थे और मेरी ग़ज़बों और धेरों पर सिर हिसासे जाते थे और बहुत मजे में आने का अभिमय करते जाते थे । कुछ दूर तक तो राजगुरु भी इसी के अनुसूप व्यवहार जैसे तैसे करते रहे । उनसे कह रखा गया था कि जनाव आप कम ही बोमें नहीं बोमें तो और भी अच्छा । मगर जैसे ही कालपी के इधर बुदेसक्षण की सीमा में गाड़ी पहुँची और ऊँची नीची जमीन पहाड़ियों और उन पर धमी हुई गढ़ियों पर राजगुरु की मज़र पड़ी फिर तो छापामार युद्ध के लिए उपयुक्त बुदेसभूमि को देखकर उन्हें शिवाजी की छापामार युद्ध-जसा की याद आए बिना न रही । फिर वे घूम गए कि इस समय वे अकेल में

साधियों में बैठे देग के स्वातन्त्र्य युद्ध घोर उसमें छापाकार युद्ध व स्वान की भाँत नहीं कर रहे हैं बल्कि पुत्रिस की मत्रों से बच कर रेल में सफर कर रहे हैं घोर लोगो या घोर सी० धार्डि० डी० वासा का ध्यान हमारी घोर घाकूट न हो इस लिए वृत्त साधारण स्तर के मजदूर छोरों जैसे मानो से मन सहसाते बच जा रह रहे हैं । मगर राजगुरु ने गुरिल्ला युद्ध घोर शिवाजी की राजनीति पर अपने बिचार व्यक्त करने का उपक्रम कर ही तो दिया । धाजाद ने बहुत टासा मगर जब राजगुरु ने बार बार शिवाजी शिवाजी 'तो फिर पण्डित जी शिवाजी पिपा तो धाजाद मुँसला के बोले 'शिवाजी की तो घोर तुम स कह क्या ?' ताफे ने सब मजा बिरकिरा कर लिया । हाँ पार ! यह सुना जब कुपम से साय निवसी सुखबुध सागाद की राजगुरु हृत्प्रम हो कर रह गए । मैं सबसे फिर उड़ाने लगा । पर पहुँचे ता धाजाद बोले देता ? कहते हाँ कि रघुनाथ पर ब्रह्म हो लोग विगड़ पड़ते हैं । सब इने वही रन में गुरिल्ला युद्ध घोर शिवाजी की मूर्खी । मना बडापो राम राम बगने पर पा रहे थे । जानता है सी० धार्डि० डी० पीछा कर रही है पार फिर ऐसी बाने करता है । धाजाद की घोषा में घोषु न घा गए, बोले "इने धात्र मुक्त म शिवाजी या गानी निववा सी ! फिर गृहसा निमतिना कर धाजाद राजगुरु का बाहों में भर कर पकड़ कर बैठ गए घोर बाए 'गे कहन ठीक हा यह कुम्भगण की जमीन गुरिल्ला युद्ध के लिए है बहुत घण्टी शिवाजी का राजनीति महा घण्टी तरह बनाने जा सकती है

किसी से मन मिलने पर राजगुरु बड़ी कुशादादिसी से बात चीत करते थे । अपने मन के किसी भी पहलू को छुपा रखना फिर आपने लिए असम्भव ही हो जाता था और आप उसे अनावश्यक भी समझते थे । आपस में ऐसी ऐसी बातें कह बैठते थे जिसे शिष्ट भाषा में नग्न सरस ही कहा जा सकता है और जो अतएव ही अशिष्ट समझी जाती थीं । अपने चरित्र के सम्बन्ध में न जाने आपने मुझे ही कब कब क्या नहीं सुना हुआ होगा । वह सब याद रखने की न मेरी कमी प्रवृत्ति हुई और न वह अब मुझे याद ही है । बस, उस सब की हसरत भरी सम्मिश्रित छाप आज तो दिल पर यहा है आदमी क्या था सजीव सरस था ।

साथियों में राजगुरु सामान्यतः नितान्त अभावुक समझे जाते थे । इससे आपको कमी कमी बड़ी पिढ़ होती थी । पार्टी का अहा भागरे में था । एक रोज कुछ साथी मिल कर चाँदनी रात में ताजमहल देखने गए । हम में से प्रायः सभी (शायद मुसवेक का छोड़कर) अपने आपको भावुक धार कवि हृदय समझते थे—कम से कम धाढ़ रूप में भावुक और कवि हृदय जैसा व्यवहार करने का प्रयास तो करते ही थे । अतएव हम और सब के लिए भावुकता के प्रदर्शन के लिए—प्रदर्शन नहीं तो साधना कह लीजिए उसके लिए—यह नितान्त आवश्यक था कि चाँदनी रात में ताजमहल को देखकर यदि कुछ मौलिक काव्य रचना न कर सकें तो कम से कम मौन तो बने रहें आपस में बातचीत कम करें और भावना से सबासब भरा हृदय लिए बैठ रहें । अतएव हम सब भावुकता में चुपचाप थे ।

मगर राजगुरु ब्रह्म मानने वाले थे ? घोरों को पुप बेल कर उन्हें स्वयं वातपीत करने का प्रच्छा भवसर हाथ लगा घोर प्राय ममी की भावुकता की साधना में आप बाधक हुए। किसी ने ता आपकी तरफ से यों ही मुँह फेर लिया कोई बड़ी गहरी भावुकता में उठ कर इधर-उधर घूमने लगे। राजगुरु को सगा इन सब को क्या हो गया है ! जब एक साथी से आपने अन्य साधियों के व्यवहार पर अपनी हैरत प्रकट की तो उन्होंने कहा, भाई रघुनाथ ! इन्हें यहीं रहने दे तू घर जाकर बंड-बैठक मार बाहे को इधर बना घाया है ? घोर के भी भावुकता की अपनी गीत साधना म लग गए। साधार राजगुरु को भी एक जगह असग बठ कर जबर्न 'भावुकता की साधना' में सीन होना पडा। घोरों की भावुकता का दृश्य फल क्या था इसे वे ही जान पग्नु भावुकता के हमारे इस मने साधक की साधना का दृश्य फल हिन्दी या हिन्दुस्तानी क एक शेर—घर नहीं आप इसे अपना शेर ही बहा करते थे—के जन्म के रूप में हुआ घोर बयोबि प्रब घाप एक शेर बना चुके थे। अतएव उमे साधिया को दिगाने के लिए आप बेताय हो रहे थे। इसका प्रवगर आपको दूसरे दिन सुबेरे ही मिस गया जब सभी साथी पाय पीते हुए ताजमहम की रात की दोमा का बर्लान कर रहे थे। सभी साथी इस ममय हन्ने हास-परिहास की मनोमृमि में थे। तब में राजगुरु ने उन पर अपना शेर छोड़ा ही तो दिया—

“अब तब नहीं मासूम था इन्द्र क्या चीज है,
रोज को बेग कर मेरे भी इन्द्र ने बलवा किया।”

विजय बाबू तो 'इएक ने बसबा किया । इएक ने बसवा किया ॥' चिल्ला कर उचक पड़े । वक्त इनका मुँह देखते रह गए । मंगतसिंह ने अपनी जेब से पिस्तौल निकाला और मली की तरफ से उसे पकड़ कर आपकी तरफ हाथ बढ़ा कर बोले 'तुम्हें ज़िन्दा नहीं रहने देना है तो ख मार दे नहीं तो इस बात का धायदा कर कि धायन्दा घब कमी खेर चीठा, मेड़िया बकरी कुत्ता गधा कुछ नहीं बनायगे ।' बेधारे राजगुरु हत् प्रम होकर रह गए परन्तु हाँ फिर धायद आपने द्विष्नी या हिन्दुस्तानी में कोई काव्य रचना नहीं की मराठी की राम आनें । य ही राजगुरु जब सौण्डस का वध करके घर आए तो धजीब हालत थी आपकी । जब हम सब बड़ी प्रणसा से उनकी धोर देख रहे थे धौर प्रकट रूप में भी उनके साहस धौर निधाने की तारीफ़ कर रहे थे तब धाप बहुत ही म्गानिधस्त से थे । विजयकुमार सिंहा धौर मैं उनके साथ एक ही मवान में थे । जब मैंने उनसे पूछा 'भाई तुम्हें ता धपनी सफलता पर प्रसन्न होना चाहिए, तुम इतने उदास से क्यों हो ? मैं तुम्हारी जगह होता तो मरा मन धासमान पर होता, हवा से बातें करता, तुम इतने उदास क्यों हो ?' तो बड़ी गहरे साँस सेकर धापने कहा "भाई बडा सुन्दर मौजवान धा (सौण्डस !!) उसके धर धासों की कसा सग रहा हागा ?' मैंने कहा "इससे क्या हुमा ? बहुत से मयकर साँप क्या सुन्दर नहीं होते ? धर बाले सभी के होते हैं । इससे क्या साँपों को मारना नहीं चाहिए ? तो बोले "ठीक है, मैंने भी मारा ही है मकर 'कुछ नहीं ।' वे बहुत समय तक म्गानिधस्त रहे । मुझे स्पष्ट लम रहा ब

कि भाबुद्धता की मेरी परिभाषा जिसके दायरे में राजगुरु न घाते थे कुछ अक्षर्य ही गड़बड़ है ।

पार्टी में मुझे एक साधारणतया अशिक्षा निधाना मारले बासा समझा जाता था । राजगुरु एक ही मोती में तो भी ठीक कनपटी में, मार कर सॉण्डर्स का काम तमाम करके घाए थे । मैंने भी इस अशिक्षे निधाने को सारीफ की तो घ्राप बोले 'रह भी यार ! मैंने तो निधाना उसके सीने का मिया का घौर गोली मगी जाकर सिर में । मैं उनकी तरफ देवता रह गया । राजगुरु का अहंग दख रहा था या जीवन कोप में सत्य घौर अम्महीनता का जीवित अय । मा भी बिश्वास नहीं हो रहा था कि इस अर्थ को मैं अभी भी मसी प्रकार समझ पा रहा हूँ या नहीं ।

जिस रिवालयर से राजगुरु सॉण्डर्स को मार कर घाए थे वह अभी भी उनके पास था । मैंने उसे देगा । बाकी कारतूस अभी भी उसमें जमे थे तैसे भर हुए थे । मैंने उनमें से कारतूस निकाल करतूस पर मुझे कुछ सन्देह हुआ । मैंने घौर घौर कारतूस का नम्बर मिसाया तो उनमें कुछ थोड़ा फर पाया । कारतूस ठीक नम्बर के न थे कुछ लीके पड़ते थे । उनसे साने का निधाना सिर म जाकर लगना हो ही सकता था । यह मैंने राजगुरु को बताया तो बड़ी माफ'दसी से घ्राप बोले देगा यार ! इस बात भी मुझे ये कारतूस घौर यह पिग्निटिया (घामो रही ना रिवालयर) धमा दी । रणजीत (मगतसिंह) बड़िया घॉटापेटिक कास्ट मिया से घौर पण्डित जी (घाजा) माउजर । यह उपायक्त न करने राजगुरु अघनी महान्

स भगतसिंह ने स्थिति को सम्भाला और किसी प्रकार लीये
 वाले स सारा सामान लीये में रखवाया । मगर राजगुरु फिर
 उबक कर पीछे की ही सीट पर बैठ गए, जब कि नीबर की
 हसियत से उन्हें आगे लीयेवाले के पास बैठना चाहिए था ।
 किसी प्रकार इधारे से भगतसिंह ने इन्हें आगे की सीट पर
 भेजा तो आपने बात शुरू कर दो बिस्कुस बराबरी और दोस्तों
 के लहजे में । भगतसिंह ने घाँसों तरेरी, साहबी तौर पर सापर
 वाही स और इठसा कर बात भी की मगर राजगुरु को इस
 बात का मान हो नहीं हुआ कि उन्हें एक बाधदय नीबर की
 भाँति रहना है । गुदा गुदा करके स्टेशन पर पहुँचे । भगतसिंह
 आपने लिए एक सब्ज बलास का टिकिट और राजगुरु व लिए
 एक सर्वेण्ट टिकिट स आए । सर्वेण्ट टिकिट राजगुरु को मना
 सामान उठाने का हुकम करके भगतसिंह हाथ में छोटी घट्टी
 लिए प्लेटफार्म की तरफ बढ़ गए । राजगुरु बड़ा बस और
 होम्बान लिए बस । गाड़ी आने में कुछ देर थी घट्टएब साहबी
 तौर पर भगतसिंह प्लेटफार्म पर इधर उधर टहलने लगे ।
 राजगुरु को भी टहलने की सूझी घट्टएब बड़ा बस सटकाए
 और होम्बान बगल में दबाए आप भगतसिंह से कदम मिला
 कर प्लेटफार्म पर उनका साथ टहलने लगे । इस ह्यास से कि
 ये हजरत पीछे रह जायें और इनका समझ में गुन ही आ
 जाए कि इन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए, भगतसिंह ने जरा तेजी
 स कदम बढ़ाए । मगर राजगुरु मना कुछ कमजोर ये जो पीछे
 रह जाते । आपने भी उननी ही तरी म बस बढ़ाए और
 भगतसिंह का साथ म लाए । भगतसिंह ने जा इनका बाकायदा

निष्क मार्च देखा तो वे ठड़े पड़ गए और सोचा कि इन्हें भागे निकल जाने दें और ऐसे इनसे पिण्ड छुड़ायें। मगर भगतसिंह को घीमा होते देख कर आप भी दक गए और बोले 'बस ! यक गए ?' भगतसिंह बहुत झुंझलाए और खड़े हो कर प्लेट फार्म पर एक जगह दिखा कर इनकी तरफ बिना देखे बोले "Look here servant, you sit there." भगतसिंह के मुँह से अंग्रेजी सुन कर इन्हें होश आया कि ये इस समय कामरेड नहीं सर्वेण्ट हैं।

हम कह चुके हैं कि राजगुरु शहादत के बेसाव आदिशक थे और इस दक में आपके रबीब थे भगतसिंह। उस अघोरता व्यग्रता और बेताबी की तो हम कल्पना ही कर सकते हैं जिसमें फाँसी के दिन वे इसके लिए ही चिन्तित होंगे कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे पहले भगतसिंह को फाँसा मग जाय ! हम मसी माँति कल्पना कर सकते हैं कि पहले फाँसी का फन्दा उमके गले में डाला जाय, भगतसिंह के नहीं इसके लिए वे जेसर या जल्साद से उसभ पड़े होंगे। हम कल्पना कर सकते हैं कि किस गर्व से सीना फुला कर, किस धारम-शुष्टि की सम्झी साँस लेकर के फाँसी के तबले पर खड़े हुए होंगे और किस प्रकार भगतसिंह ने उसके गहरे वासस्य से पुसकित होकर अपने अन्तिम क्षणों में अपने इस छोटे भाई को देखा होगा। राजगुरु के शीक-शहादत के सौन्दर्य का निकट से दशन करने के लिए भगतसिंह से अधिक भावुक हृदय धम्य किस का था, और उसे बेसने का सौभाग्य भी उनसे अधिक और कितने मिला था ?

ऐसा लगता है कि फाँसी का तस्ता गिर जाने के बाद
 विश्व की धड़कन बन्द होने से पूर्व भी यदि राजगुरु फाँसी की
 काली टोपी के बाहर घायल खोल कर एक बार देख सकते, तो
 उस दीवाने ने यही देखने की जोविष्य की होती कि कहीं भगत
 सिंह मुझ से पहले ही तो नहीं । और उस समय भगतसिंह
 के होठा पर भी राजगुरु का यह पागसपन देख कर अपने
 जीवन की प्रतिभ और सबसे मधुर सुसन्धान खिल जाती और
 यदि वे कह सकते तो बहुत शोक दाहादत तो हम सब को
 ही रहा है भाई ! पर तू तो सरापा पीछे-दाहादत है । हार
 गए मुझ से ।

राजगुरु की याद कहती है अथिबार पत्नों के लिए एक
 दूमरे पर कीपड़ उछामना ही राजनीति में नहीं होता कुर्बानी
 की ऐसी पवित्र स्पर्धा भी होती है । हम मर नहीं हैं हम मिटे
 नहीं हैं हमारा म्बग तुम्हारे हृदय में ही है । मनुष्य की मनुष्यता
 में विश्वास न खोना ।

—भगवानदास माहोर

धर्मर शहीद सरबार भगतसिंह

And they feel who loved him most
 A pride so holy and so pure
 Fate hath no power o'er those who boast
 A treasure thus secure

—F Hemans

‘भगतसिंह और आजाद का नाम समस्त उत्तर भारत में सशस्त्र क्रांति की प्रवृत्तियों का प्रतीक बन गया है। भारत में सशस्त्र क्रांति को चेष्टा एक धपना विकास-क्रम रहा है। भ्रूँसी की महारानी लक्ष्मीबाई और उनके साधियों के नेतृत्व में सन् १८५७ के स्वातन्त्र्य युद्ध के बाद उन्नीसवीं सदी के अन्त और बीसवीं सदी के आरम्भ काल में सशस्त्र क्रांति का दरवाजा स्वामी विवेकानन्द ने खटखटाया। माता कामी के नृत्य का आमाहम धार्मिक रूप में भारतीय क्रांति का ही धावा हुन था। महाराष्ट्र में लोकमार्ग्य तिलक की प्रेरणा से धापेकर बन्धु और सावरकर बन्धुओं का क्रांतिकारी काय-कसाप भी धार्मिक धरातल पर ही था। उस समय से लेकर १० राम-प्रसाद बिस्मिल आदि के नेतृत्व में उत्तर भारत के कार्य बलापों में भी धार्मिक भावना का सूत्र बराबर धना धाया था।

काकोरी व सहोदर प० रामप्रसाद 'विस्मय' वेद मंत्रों का उच्चारण करने हुए फाँसी पर झूठे धो धो अशफाक़ुस्ताली की बगल में बरान पाक था। सशस्त्र क्रांति प्रयास का बीज धार्मिक क्षेत्र में ही अंकुरित हुआ था परन्तु उसे धार्मिक क्षेत्र से ऊपर उठ कर साम्यवादी राष्ट्रीय धोर समाजवादी आकाश में अपनी प्रगति घोषित करना था। क्रांति प्रयास के इस विकास मार्ग में भगतसिंह एक ऐसे व्यक्ति थे जिस अग्रणी में Corner Stone (मोड़गुंथक पापाना पिल्ल) कहा जाता है। समय धीरे-धीरे समाज का आवश्यकताओं ने भगतसिंह को ही माध्यम बनाकर उत्तर भारत के सगठित गुप्त सशस्त्र क्रांतिकारियों को समाजवादी धोर उन्मुख कर दिया तथा क्रांतिकारी काय-कसाप का धार्मिक मनोभूमि से ऊपर उठाया। उत्तर भारत का गुप्त क्रांति प्रयास अभी तक अंग्रेजी के मजिनी गरीबाहली धोर आयनोट के सिनपिन के मध्यमवर्गीय नेताओं के आदेश से अनुशासित था। पर भगतसिंह के माध्यम से ही उसने वही क्रांति धोर अनिष्ट शक्ति के समाजवादी आदर्शों के प्रभाव को ग्रहण किया। भगतसिंह के ही माध्यम से भारत माता की जय धोर 'बन्द मातरम्' मंत्रों के स्थान में भारतीय गुप्त सशस्त्र क्रांति प्रयास ने 'Long live Revolution (क्रांति पिरंजीबी हा) इसमाक़ बिल्गाबाद 'Down with Imperialism (साम्राज्यवाद का नाश हो) धानि नारे लगाए धोर जहाँ क्रांतिकारी लोग पुमिस की पत्रणाया धोर मृत्यु के भय से मुक्त होने के लिए शहर की नगरना धोर आत्मा के निरपेक्ष का निश्चिन्तावन पदमावन लगाए गीता पाठ करते हुए नजर आते

ये वहाँ वे भव माक्स की कैपिटल का स्वाध्याय करते मबर
 प्राए ।

दिल्ली में सेजिस्ट्रेटिव प्रसेम्बसी में वहीरे कानों को समय
 का गुरु गम्भीर गर्जन सुनाने के लिए भगतसिंह ने जो बम फेंका
 या भारतीय राष्ट्रवाद के अपमान का प्रतिकार करने के लिए
 पंजाब-केसरी नामा लाजपतराय को लाठियों से पीटने वाले
 सॉण्डर्स का जो बध किया और इसी प्रकार के साहस और
 आत्म-वसिदान क जो अनेक कार्य भगतसिंह ने किए उनका
 महत्व उनके अपने व्यक्तित्व क विकास क लिए महान् है तथा
 उनक ये कार्य सशस्त्र क्रांति प्रयास क विकास आकाश के चमकते
 हुए नक्षत्र हैं परन्तु भगतसिंह की विशेष क्रांतिकारी देन यही
 है कि उनक समय से क्रांतिकारियों का आदर्श समाजवादो-मुक्त
 हो गया तथा उनका मानसिक धरातल भी परभोकापेशी धार्मिक
 होने के स्थान पर भव इहलोकापेशी सामाजिक ही विशेषतः
 हो गया । काकोरो युग के पं० श्री रामप्रसाद 'विस्मिल' श्री
 शशीभ्रनाथ सान्याल श्री आगेशचन्द्र चटर्जी प्रादि का The
 Hindustan Republican Association (भारतीय प्रजातंत्र संघ)
 भगतसिंह और उनके साथियों के प्रभाव से The Hindustan
 Socialist Republican Army (हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजा
 तंत्र सेना) के रूप में विकसित हुआ । यहाँ तुरन्त ही यह बात
 स्पष्टतया कह देना चाहिए कि कहने का तात्पर्य यह नहीं है
 कि भगतसिंह समाजवाद के अन्वेषणित थे । कहने का अर्थ
 प्राय इतना ही है कि भगतसिंह और उनक साथी श्री दिव्य बर्मा
 बिजयकुमार सिन्हा प्रादि के द्वारा हम लोगों के क्रांतिकारी

दल ने समाजवाद की घोर अपना मार्ग टटोल कर बढ़ना शुरू किया था ।

भगतसिंह का परिचय होने से पूर्व मैं श्री राधोन्द्रनाथ बन्सोरी घोर श्री चन्द्रशेखर झाजाद के परिचय में आ चुका था । भगत सिंह ने मिलने के पूर्व लगभग दो बरस से मैं झाजाद के निवृत्त सम्पर्क में रहता आ रहा था । झाजाद उस समय बाकीरी दल के ही एक अवशेष थे । सिद्धान्त घोर झाजाद की दृष्टि से वे पुराने Hindustan Republican Association के ही एक सदस्य थे घोर उनका ही प्रभाव मसौरी के श्री सदाशिवराव मलका पुरखर विरवनाथ गगाधर बैशम्पायन आदि हम सभी नवयुवकों पर था । हम सभी उस समय तक गोता पाठ करके स्फूर्ति ग्रहण करते थे तथा श्री राधोन्द्रनाथ साम्बास के 'बन्दी जीवन' श्री उपेन्द्रनाथ बन्सोपाध्याय के 'राजनीतिक पद्वंत्र' बंकिम बाबू के 'मानन्द मठ' आदि को पढ़कर क्रांति-दल में दीक्षित हुए १५ १६ वर्ष के नौजवान थे । अपने ग्रन्थ साधियों की क्रांति भावना के सहज मेरी भी क्रांति मायना में धार्मिक सूत्र अनुस्यूत चला जाता था । इस सूत्र की सर्वप्रथम सबसे प्रबल भन्ना भगतसिंह के द्वारा ही उनके सबप्रथम साक्षरगार में ही लगा जब उन्होंने सन् १९२८ के अक्टूबर में घाघरे में एकत्र हुए दल के सभी साधियों से बातचीत की । मैं उस समय बी० ए० का विद्यार्थी था परन्तु संश्लिष्ट दृष्टि से भगतसिंह ने मुझे एक दम बोरा ही पाया घोर हीरानी प्रकट की । मेरे मन को झाझोर टासने के लिए भगतसिंह ने मुझे घराजकतावादी बाबुजिन की दुरतर 'The God and the State' (ईश्वर घोर

राज) बड़े धाग्रह से पढ़ने को दो। उक्त पुस्तक के मुसपूष्ठ पर ही लिखा था 'If God really existed, it would be necessary to abolish him' (यदि ईश्वर का अस्तित्व वास्तव में होता तो उसे मिटा देना आवश्यक होता)। भगतसिंह की इन नास्तिकवादी बातों से उस समय मेरे मन पर बड़ी ठेस लगी। उन्होंने मार्क्स की कपिटल भी मुझे पढ़ने को दी मगर वह मेरी समझ में छाक भी नहीं आई। मैंने उसे बिना पूरा पढ़े ही वापस कर दिया और अपने मन में गूँथ-सी भाँष सी कि क्रांतिकारी भले ही हूँ परन्तु नास्तिकवादी मैं कभी नहीं बनूँगा। भगतसिंह आदि साधियों ने और भी कई पुस्तकें मुझे पढ़ने को दीं मगर अपनी तबीयत उनमें बाहे को सगने वाली थी। अतएव भगतसिंह भादि की दृष्टि में मैं सदा ही एक ऐसा उजड़ू 'पहलवान' ही रहा जिसे बुद्धि और सिद्धान्त ब्यवस्था से कोई सरोकार नहीं। भगतसिंह को नास्तिकवादी बातें यद्यपि उस समय मुझे बहुत घट-घट लगीं परन्तु प्रायः माँति उनके आकर्षक ब्यक्तित्व ने मुझे अपनी ओर आकृष्ट भी बहुत किया। उनके सुन्दर ब्यक्तित्व सहानुभूतिपूर्ण बातचीत जिम्दा दिसी, सभी ने मुझे प्रभावित किया। इसके लगभग चार-पाँच साल बाद साबरमती सेण्ट्रल जेल की घंघेरी कोठरी में ही बहुत दिनों गीता-पाठ प्राणायाम भादि करने के बाद राजनीति और अर्थशास्त्र की भी बहुत-सी पुस्तकें पढ़ने के बाद जब मार्क्स की कैपिटल और एन्ग्लिस की भी कुछ पुस्तकें पढ़ीं तभी वह बोज अंकुरित हुआ जा उस समय भगतसिंह ने बोया था। अतएव व्यक्तिगत रूप में भगतसिंह की स्मृति में जो बात मेरे

मन में सर्वोपरि है वह यही है कि वे समाजवाद की घोर मुझे उमुक्त करने वाले भरे सबसे पहले गुद थे

सम् १९२८ मे मैं ग्वालियर में बिबटोरिया कालेज में बी० ए० का विद्यार्थी था और वहीं होस्टल में रहता था। काकोरी पह्यत्र केस के बाद पुनः सगठित क्रांतिकारी सगठन के प्रमुख सदस्यों में से उस समय तक मेरा परिचय केवल श्री चन्द्रशेखर झाजाद श्री बुन्दनसास श्री विजयकुमार सिन्हा और श्री सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय से ही था। एक रोज़ अचानक भाई विद्वनाथ गगाधर वसम्पायन मेरे पास होस्टल में आए और मुझ अपने साथ आगरे से गए। यही मुहस्ता नूरी दरवाजे में एक कमरे के दुमड़े के एक कमरे में क्रांतिकारी दल की 'छावना पड़ी हुई थी। भाई विद्वनाथ के साथ मैं उक्त कमरे के द्वार पर पहुँचा तो निश्चित संकेत करने के बाद किसी ने भीतर से टार्च जला कर हम दोनों को सिर से पर तक देखा और फिर साँस लोस कर हम लोगों को भीतर आने दिया। कमरे में घुमते हुए सबसे पहले महा सामना एक अष्ट्रे अड़े रिवाल्वर की नसी से हुआ। उससे नजर हटा कर जा आगे देखा तो एक अष्ट्रे अनिष्ट और सुन्दर नौजवान को साबधान और गतेत्र आँवों को आनी घोर घूरता पाया। यह नौजवान ही भगतसिंह थे जो इस समय रात ७ सगभग ११ बजे पिविर के पहरे पर अपनी द्यूनी दे रहे थे। मिट्टी के तेल की बुप्यो के मग्न प्रकाश में भगतसिंह को जिनकी साथी विद्वनाथ ने 'रगजीत नाम से सम्बोधित किया मैं सरमरी तौर पर ही देग पाया। कमरे में कुछ नौजवान जा देगने में बिद्यार्थी जैसे

ही सगते ये फरा पर घोसी और घसवार बिछाए एक कतार
 में पड़े सो रहे थे । हमारे घाने से जो भाहट हुई उससे दो-एक
 की घाँस सुन गई । एक ने उठ कर कुप्पी के मन्द प्रकाश में
 हमें घूरा और इससे पहल ही कि मैं उसे पहचान पाऊँ उसने
 मुझ पहचान कर होस्टल के विद्यार्थियों की तरह निहायत
 बतमस्तुफाना ढग से पादप्रहार करके और अपनी भाषी पत्नी
 का एक निकट सम्बन्धी धोपित करते हुए मेरा स्वागत किया ।
 इससे मुझे भाई विजयकुमार सिन्हा को पहचानने में आसानी
 हुई और फिर मैंने भी उत्तर में उनके उत्कार का समुचित
 उत्तर दिया । यह बात भगतसिंह को अच्छी नहीं लगी और
 उन्होंने नये गार्थियों के साथ ऐसा व्यवहार करने के लिए
 विजयकुमार का म्झका । उत्तर में विजय न भगतसिंह से
 कहा "घरे यह वही है बही पण्डित जी का वह यह कहाँ का
 नया है ? फिर मेरी और मुझ कर बोले 'कुछ विस्तर इस्तर
 साए हो ? काहे का लाये होगे ? बिछामो घसवार और
 घोसी और कर सो आओ । और मुँ जाकर सो रहे । रास्ते
 में पानी बरसने से भाई विषनाम और मैं काफी भीग गये
 थे । अपने कपड़े उतारकर मैं हाथ में लिए था और सोच ही
 रहा था कि इनका क्या कर्ने कि भगतसिंह ने कपड़े मेरे हाथ से
 ले लिए और उन्हें निचोड़ कर घरगनी पर सूखने के लिए बाल
 दिये । ठड बहुत लग रही थी । भगतसिंह ने पूछा 'सूने लो
 नहीं हो ? मेर कुछ उत्तर देने के पहल ही विषनाम ने कहा,
 "ऐसे कुछ सात सूने नहो है होगी भी ता यहाँ घरा ही क्या
 होगा । सवेरे देला जायगा । बोमसे पडे है उन्हें जमा

तापता है और बपड़े सुझाता है। विश्वनाथ अपने काम में लग गए। भगतसिंह अपने पहरे पर खड़े हो गए। मैं विजय की ही बगल में बखारों पर सिकुड़ कर सट रहा। म ठड के मारे नींद घा रही थी न इस जिज्ञासा के मारे कि यहाँ किस लिए बुलाया गया है? किस ओक्षिम के काम के लिए ये सब भोग यहाँ इस तरह पड़े हुए हैं? कौन कौन भोग हैं? कैसे भोग हैं?

क्रान्तिकारी दल का प्रथम मदेश मैंने श्री दामोदरनाथ बरुशी से भईमी में ही सुना था, उसके बाद जब श्री चन्द्रोगर घाबाद के दशन मैंने प्रथम बार किए तो उनके बलवान शरीर और निर्भीक मुद्रा का मुझ पर गहरा प्रभाव पडा। जब भगतसिंह को पहली बार देखा तो इतनी ही बातचीत और रगड़ग से मुझे इनको और इनके द्वारा क्रान्तिकारियों की विद्या मुद्रि पर एक प्रणुषी घास्था हो गई।

सबरे उठे तो शिविर में इकट्ठे सभी लोगों के दशन हुए। श्री घाबाद और विशयनूमार सिम्हा तो पूव परिचित थे ही। भगतसिंह का रात में हा देग बुका था। बाकी श्री बटुकदवर दल श्री मुगदब श्री राजगुरु श्री शिव वर्मा श्री जयदेव के श्री यही सबप्रथम दशन किए और सबसे मिना। पोटी ही घापमा बातचीत म माधियों के उनके प्रति स्वाभाविक सम्मान से मेरी समझ में सुग्त घा गया कि भगतसिंह हमारे दन के एक उच्च शौटिक नेता हैं। भगतसिंह का सुन्दर बलवान शरीर उनका बातचीत करने का सहानुभूतिपूण रग और सम्भीरता के साथ ही गाय हास-परिहास करते रहने का ढंग

किसी को भी अपने प्रति घाकृष्ट विवेचिमा न रहता था ।

सबेरे एक कोने में भगतसिंह विजयकुमार सिन्हा और शायद सुखदेव धीरे-धीरे बातचीत करने बैठे थे । इनकी घाँस मेरी घोर कमी कमी उठती थी जिससे मुझे लगा कि मेरे ही विषय में वे लोग बातें कर रहे हैं । यह स्वाभाविक ही था क्योंकि मैं आज इस सद क लिए नवागन्तुक था । दस के नियम के अनुसार इनकी बातों में शरीक होना या सुनने का प्रयत्न करना मेरे लिए निषिद्ध था । अतएव एक दूसरे कोन में मैं बैठा बिड़वनाथ से बातें करता रहा । मैंने देखा कि ये लोग मेरी घोर देख कर कुछ मुस्करा रहे हैं । अतएव मेरे कान उभ घोर गए और मैंने भगतसिंह को कहते सुना

"Yes, Darwin seems to be correct. He may well be the missing link" (मासूम होता है डारविन का कहना ठीक है बन्दर और आदमी के बीच की सोई हुई कड़ी में महासम हो सकता है) यह सुन कर विजयकुमार सिसखिना कर हँस पडे । मैं ठगा-सा उनको घोर देखता रह गया और फिर मरी समझ में आया कि ये लोग मेरी शकल-सूरत की विवेचना कर रहे थे । विजय को इस प्रकार जोर से हँसता देखकर भगतसिंह ने गम्भीर धनने की चेष्टा की और सुरत इशारा करके मुझे अपने पास बुलाया । मैं गया तो आपने बड़ी सदभावना और माईधारे से बातचीत की । दस में मेरा नामकरण होना था । इस में सभी सदस्यों क अनग-असग नाम रख दिए जाते थे जैसे महीं आशाद को पण्डित जी कहा जाता था, भगतसिंह को 'रणजीत', विजय को 'बज्जू' आदि । आज मेरा भी नाम

करण सस्कार हो रहा था। विजयकुमार ने महावीर या हनुमान जी ऐसा ही कोई नाम परिहास के रूप में सूचित किया। भगतसिंह ने अपनी मुम्बराहट दबा कर कहा 'नहीं यह ठीक न रहेगा। नाम ऐसा होना चाहिए जिससे यह पहचाने में आये। भगतसिंह के गम्भीर हास्य से मैं बहुत प्रभावित हुआ। अन्त में मेरा नाम 'कसास' रखा गया और महेश्वर भगतसिंह द्वारा ही सूचित किया गया था।

इसके बाद नहाने का कार्यक्रम शुरू हुआ। नहाने के पहले भगतसिंह ने आजाद की पीठ में सेवक मना और आजाद ने भगतसिंह की। धीरे-धीरे दोनों एक दूसरे के हाथ मगम लगे। फिर आगे होने लगा तो आपस में हँसी भी होने लगी। धीरे-धीरे यह मौखिक आई कि दोनों भिड़ गए और भगतसिंह ने आजाद को अपने दोनों हाथों में उठा कर कम पर धर पटकवा। आजाद के घुटने छिन्न हुए। मैं तो आजाद की ताकत का साहाय्य मानता था और मैं यह भी समझता था कि आजाद अपनी पूरी ताकत धरती लगा रहा रहेगा। फिर आजाद को हाथों में उठा कर पटकने का आदेश जारी किया गया। आजाद मर गया। भगतसिंह के दस का घाव मरने पर ब्रमण्डल में भाई महाशिवराय और मैं कनारदा जाने में 'उत्साह' मिले जाते थे। भगतसिंह ने भी कनारदा में और आजाद मरने में। भगतसिंह के लिए यह विस्तृत नयी बात थी। मैं न मराणिस में कनारदा में जाते मरने में सुभक्त। जवाहर परिषद और बतवस्मुदी बड़े जान पर अभी अभी भगतसिंह से हाथपाई हाथों का मगर उनमें गुम कर जिद्द जाने का

मुझे कभी साहस नहीं हुआ। उनके बस की शक्ति मेरे मन पर
घड़ी घण्टी तरह जम चुकी थी।

भगतसिंह और विजयकुमार सिन्हा को जाने का शौक
था। इस मामले में उनसे मेरी घण्टी पटने लगी। संगीत
शास्त्र के शान्त नाम से इन सभी मामलों में शांति मही था।
कण्ठ भगतसिंह का भी मधुर था और विजयकुमार का गाना
सो बड़े श्राव से प्रायः सुना ही जाता था। अपने गाने से मैं
भगतसिंह के कुछ और निकट हो गया यद्यपि क्रांतिकारी बुद्धि
बाद और सिद्धान्त व्यवस्था सम्बन्धी बातें करके वे मुझे बोग
पाकर निराश से हुए थे।

भगतसिंह एक अश्वत्थ-साके शान्त-पीत मुसी परिवार से
घाए हैं यह बात उन्हें बेल कर किसी के भी मन पर घनापास
ही जम जाती थी। गन्दे कपड़े पहन सकना आदतन उनके
लिए बठिन ही था और घट-घट शाना भी यद्यपि वे प्रावदयन
होने पर बड़ी तत्परता से धाने में प्रवृत्त होत थे फिर भी वह
उनके गले के नीचे बड़ी मुदिकल म ही उतरता था। जिस
स्वभाविकता से मरे जैसे लोग जो शरीर परिवारों से ही घाए
थे गन्दे कपड़े पहने रह सकते थे और हसा-भूखा आ स सकते
थे उसी स्वभाविकता से भगतसिंह बसा न कर पाते थे। वह
उनके लिए कसब्य भावना से साध्य होता था, स्वभाविक
नहीं। यह बात म प्रथम परिषद के इन दो तीन दिना में ही
दख सका। दस के पास पैसे की कमी तो प्रायः रहती ही थी
इसमें कुछ विशेष यरीबी था गई थी। घटएव साधियों को घब
बाजार से पूढ़ियां शरीर कर जाने के लिए पैसे देना बन्द कर

दिया गया था और घाटा सरीद कर धर पर ही मिगड़ी पर
 रोटियाँ-दास बनाई जा रही थी। बतनों की भी कमी थी घत
 एव दास एक दूने मटक का ऊपर का थड़ घसग बरक उसकी
 पेदी में पकाई जाती थी जिस में अपने पाक-शास्त्र के ज्ञान से
 हम सोम नमक और मिष तो दास संसे थे कभी कम, कभी
 ज्यादा—परन्तु दास में हल्दी भी पड़ती है इसका हमको कोई
 ज्ञान न था। अतएव हन सोगों की पकाई दास दास-सुरत में
 लनी होती थी कि साधारण भूय तो उसको देव कर ही भाग
 जाती थी और फिर कैंसी भी भूय क्यों न हो धानों से उसे
 देव कर ग्यात जाना कोई साधारण मिष्टि की बात न थी।
 फिर बतना की कमी के कारण दास उमो एक गप्पर में रखी
 जाता थी और हम लोग उसके पारां धार अपने जम् पर धम
 पक टिकट्ट से कर बठ जाठ थे। अचारिया का पिनीनी
 साधनाया की बात सुना था परन्तु हम क्रातिकारिया का यह
 'भगता पक' भी कोई साधारण बात न था। वा-एक हा मि
 के अन्वय से अजात गरीब हम मागा में से कुछ ता हममें
 पूर घवभूत पक का पठूँत गए परन्तु कपार भगठमिह को हम
 साधना से कमा मिष्टि से मिली। परन्तु जिम गूबा से भगठ
 मिह से हम पीना से अपना पिष्ट छुड़ाया मत भी उनही ही
 प्रतिभा का काम था। धान पक में गाने बटे तो मुम्परास हुए
 बा— दगा में तुम्ह यताईं घमार भाग तगनऊ के नबाब
 जग नाग रिग मयारन से बिग अगाठ से गाना ग्यात है।
 धानने एक टिकट्ट से ग एक घत ही छोटा-सा टुकड़ा बड़ी
 नबाबन से तग भाग कि कता टिकट्ट का सग न जाय या

उनकी रँगसियों में मोच म धा जाए । उनके इस टुकड़े ताड़ने में इतना समय लगा जितने में हम दो-चार बड़े-बड़े निवासे गले के नीचे उतार चुके । फिर बड़ी नज़ाकत से धापने उसे खप्पर की दास को दूर से दिखाया इस प्रकार कि दास से उसका स्पष्ट न हो जाए । फिर बड़ी नज़ाकत और नज़ाकत ब नज़ाकत से उसे उठा कर मुँह में रखता और बड़ी मुश्किल से दो बार बार मुँह बसा कर अपने कुम्हड़ से पानी पी कर उसे गले के नीचे उतार लिया और उठते हुए बोले “वस्ताह क्या लजीब खाना है सुमहान अस्ताह !” और रुमास से मुँह पोंछते हुए इस प्रकार उठ खड़े हुए माना भर पेट सा कर उठे हो और उन्हें तृप्ति की इकार धा रही हो । अस्तु उम्मी राज मगतसिह् कहीं गए और कहीं से कुछ खपया ले धाए ताकि साधियों को कम से कम खाना तो डग का मिसे । खाना पकाने और धाने के बतम भी खरीद लिये गए ।

धायर में हम साग इसलिए बुसाए गए थे कि श्री जोगेश चन्द्र बटर्जी को जेल से छुड़ाना था । श्री जोगेश का धागरा जेल से तबादला होने वाला था । योजना यह थी कि जब जोगेश बाहू को जेल से बाहर पुलिस के पहरे में निकाला जाय तो दूसरे जेल तक उनके पहुँचने के रास में उन्हें पुलिस के हाथों से छुड़ा लिया जाय । परन्तु किसी कारणवस श्री जोगेश बटर्जी का तबादला कुछ महीनों के लिए रुक गया और हम साधों की योजना सफल न हो सकी । अतएव हम सोय धपने धपने स्थान को धापस भेज दिए गए । बा-चार साधी ही धागरे में पड़ाव धासे पड़े रहे ।

आगरे व इन दिनों में ही भगतसिंह ने गभी सापिणों से
 क्रांतिकारी दल व उद्दय और क्रांतिकारी सिद्धान्त व्यवस्था
 पर बातचीत की। इसमें मुझे विदोष मजा म आया। मेरे लिए
 उस समय इतना ही बहुत काफ़ी था कि हम लोग अंग्रेज़ों से
 अपने देश को आजाद करने के लिए लड़ रहे हैं और हमारा
 मांग आयरलैंड के मिनाफिन नामा की भाँति सरकार से छापा
 मार मुक्त करने का है। इसकी जो भीषण बात व विषय समी
 चीड़ी मिथ्यान्त व्यवस्था की बात मेरी समझ में उस समय
 बिम्बुम न आती थी परन्तु क्योंकि विद्यायुद्ध में मैं भगतसिंह को
 अपने से बड़ी अपेक्षा थोड़ा मानता था अतएव उनको बातों पर
 अनिच्छा से भी रह रह कर विचार करता ही था।

इसके बाद भगतसिंह के साथ फिर कुछ दिना रहने का
 अवसर मुझे मिला जब व ग्वानियर में आकर मेरे यहाँ ही
 रहे। उनके यहाँ आने के कुछ दिना पहले ही आजाद से मुझे
 होस्टल छोड़कर पहा और अलग बिराए पर मरान लकर
 रूम का कमरा दिया था और मैं मुख्य दरवाज़े का बाह्य भाग में
 एक कान पर मोटा लकड़ पदमी से एक मकान बिराए पर ल
 कर रहने लगा था। उनके आने के पहले ही भाई विजयकुमार
 सिन्हा मुगदेव और लाल यहाँ आकर मेरे साथ रहने लगे थे।
 एक रात का भाई गदागियरगम मन्दापुरकर भगतसिंह को ल
 आण। रात का समय था। पावन रात का चान्दनी थी। मेरे
 मरान के पास ही पहाटी था। बड़ी लंबी पहाटी अपने
 ऊपर-गायड़ रूप में बड़ा मसा लगती थी। भगतसिंह का सुनी
 हुई दल पर पहाटी का देगन हुए बँटा रहना मेरा अनिच्छा लगा

कि वे सोये नहीं और तमाम रात बड़े सुस्नेह से पजाबी में बातें करते रहे। बाकी हम सब सोग भीतर कमर में सो रहे थे। अपनी बातों की धुन में उन्हें यह बिल्कुल ध्यान नहीं रहा कि ये साहीर में नहीं बंटे हैं यह सफ़र है और यहाँ रात के तीसरे पहर में इस प्रकार छत पर घातें करके सोग नहीं बंटे रहते। अतएव उनका ऐसा करना लोगों का ध्यान आकर्षित कर सकता है। हुमा भी यही। एक गश्त करने वाला सिपाही वहाँ से निकला। उसने इनको टोका कौन हो तुम ? क्यों रात को इस तरह बंटे जा रहे हो ? इस तरह टोक जाने के से सोग घादी नहीं थे और उबर वह सिपाही भी इस बात का घादी नहीं था कि उसके सरकारी रीब की कोई भ्रष्ट गणना करे। अतएव दोनों में कहा-मुनी होने लगे। मगर य न माने और बड़े बातें करते ही रहे। वह सिपाही भुंभलाया हुमा कहा गया और कुछ बेर बाद अपने दो-तीन साथियों का लेकर आया और इन्हें इसी प्रकार बड़े बातचीत करते उन्होंने पाया। अतएव उन्हें यह तो विद्वान हा ही गया होगा कि ये सोग कोई भ्रष्ट विद्यार्थी हैं फिर भी पुलिस का रीब उन्हें जमाना ही था और उन्होंने इन से सक्रियत तलाश की। जब तीन घार सिपाहियों को उन्होंने देखा तो उन्हें भा मगा कि मामला कुछ गड़बड़ मामूली होता है। फिर तो य विनय क अन्तार बन गए मगर इस प्रकार कि इनका उदित विद्यार्थी होना भी बीच बीच में सक्षित होता रहे। अन्त में जब बातचीत के दौरान में उन्होंने इनसे कहा 'तुम्हारी सब कानपरेसा हम समझत हैं, जानते हो यह ग्वालियर राज है। कस सवेरे जब जाने पर

घाघोगे सब देला जायगा । ता कानपरेसी घञ से य बहुत सक्पकाए । फिर तो इन्होंने मुझे और घञ दूसरे लोगों को जगाया और सारा हास बताया । पार प्रबोध जगह से आए हो यहाँ कोई भलामानस बैठ कर बातें भी नहीं कर सकता इस पर भी पुसिस की धीस !! त्वर बह ता जो भी हो मगर वह बह रहा था तुम्हारी सब कानपरेसी समझता हूँ और प्रब सवेरे घान पर से बनने का कह गया है ।

सुरदा के लिए यह किया गया कि मकान में जो कुछ गुप्त माहिरय और बम-पिन्तीस घानि थे उन्हें लेकर सब लोग ता सबेरा होने के पहल ही पहाड़ा पर बन गए, बाकी में और बा एक साथ विद्यार्थी ही घर पर रह गए । सवेरे फिर बह सिपाही आया ता उम हूँ रागों ने वही कुछ बड़ी नम्रता और स्वातिरतवाओ स गमम्य लिया कि राठ का ही दा-गक मित्र घागर स घाए थे घागरा कासन के विद्यार्थी थे उन्हें यहाँ का हास मामूम नहीं था घतएव ध्यय हा घापस उसभ पड़े । कोर् बास नहा है । उह गवर ही घाना था और थे सले गए हैं । हम स ता वह एक साथी को जा ग्यासियर फालेज का पुराना छात्र था घपने साथ घाने पर से गया और बह यहाँ घानेदार का भी यही सब गमभा आया । भगवतिह घानि छाए गामान एवर पहाड़ी स घापस घा गए ।

इसी दिन कामज को छ माते पगेडा में विमागर्षी की पगेडा स में गपप्रथम आया और मुझे एक पुम्बक पुरस्कार में मिला । जब भगवतिह को यह मामूम हुआ ता यड़ी दर तक घाए मुझे घूरते रहे फिर घबिदबाग ग गिर हिना कर बोम

‘जनाब को यह इनाम फिससफा में मिला है या डण्ड-बैठक मारने में ? उनके हास्य को मैं तो समझ रहा था परन्तु जब मेरे एक सहपाठी साथी ने जो उस समय मेरे साथ था और मेरे सम्बन्ध से ही क्रांतिकारी दल में भी सम्मिलित हो चुका था बड़ी प्रशंसापूर्वक और जोर देकर कहा नहीं यह पुरस्कार कक्षा में फिससफा में सबसे अधिक प्रशंसा प्राप्त करने के उपलक्ष में मिला है । तो आप बड़ो सूक्ष्मता से मुसकराए और बोले यदि य कक्षा में नीचे से सबप्रथम होते तो मैं अधिक प्रसन्न होता ।

इन्हां दिनों कालेज के विद्यार्थियों ने एक डामा खेला जिस में मुझे प्रतिनायक Vallya का पाट दिया गया था । निरीक्षकों ने मुझ ही अभिनय के लिए सबप्रथम पुरस्कार देना घोषित किया । भगतसिंह उस डामा को नहीं देख पाए थे विजय कुमार सिन्हा और बटुकेश्वरराज ने ही देखा था । जब अभिनय के लिए मुझ प्रथम पुरस्कार दिये जाने की बात भगतसिंह ने सुनी तो उन्हें फिर हैरानी हुई और बोले ‘अप हो पूरे हनुमान जा हा । आप और अभिनय !! बस अब कोई धाकर यह और मुझा दे कि ‘बूटो कम्पीटेशन’ में भी आपको फ्रस्ट प्राइज मिला है । इसके बाद भगतसिंह अपने विनोद में मुझ भी लगभग उसी प्रकार पिढ़ाने और बनाने लगे जैसे वे राजगुरु का पिढ़ाते और बनाते रहते थे ।

जितने दिनों के लिए श्री ओगेदाधन्द्र बटर्जी का जेठ तथा दला रोज दिया गया था वह समय पूरा हुआ और अब उनका तबादला आपरा जेठ से होने वाला था । अतएव हम सबको

पुन आगरे बुलाया गया ।

बिगी मित्र ने मुझ से कह लिया था कि यदि जाड़े में John
Exshaw \ । प्रतिदिन एक तोला पी जाए तो शरीर बड़ा
बलवान और स्वस्थ हो जाता है । मैंने आजाद से कहा कि
एकितबड़ा क एक दवा के लिए चार रुपये दे दीजिये । उस समय
म तो मुझे ही यह मामूम था न आगरे का ही कि यह जौन
एकमा न० १ कार्ड था हाथी है या कुछ शराब । घनण्य आजाद
ने मुझे इमर निग बार रुपय २ दिय और मैं एक पाइल की
बोतल से माया और नियमत प्रतिनिन एर-एक ताला पान
मगा । अभी धोन में आगरे का बुलावा था गया और म जा
वहाँ गया ता घनन माघ घपनी वह ताकत का दबा भी लमा
गया । वहाँ दिधिर में नियमत मरे मामान की तलाशा ली
गई ता उसम म यह यातन निबानी । गावियां न बाकन दल पर
आदषय प्रनर दिया—यह क्या ! मने कहा कुछ नटा माकन
की दवा है हम का नगे क निग घाटे ही पीते है । पण्डन
जी म पूछ रर उटा म चार रुपय लकर ले माया है । मैंने यह
याम सिन्टुम एग कहा जम मर मन में बिगी प्रमर की युग
या घपगय का पार् भायना नहीं है । और उस समय तक घी
भी मग । कभा रभा बाकन पर निगा खीने मर घबय घनर
जाता था मगर आगरे म गाविया की मरुद मरी दृष्टि ने
मन म एक युगई और घपगय की भायना आपत कर दी और
मेरी प्रनृति भा उग गमय कुछ कुछ काशी मरे मंगाती पाह
जैगी हा गर् । घनण्य जब तक माधी डॉ० गवाप्रसा म यह
प्रम्याप दिया कि दगें ता यह कपी है ता मैंने कार घापति

नहीं की। फलतः गयाप्रसाद सदाशिवराव राजगु घोर बट्ट
 कदवर दस्त घोर में स्वयं इस ताकत की दवा को एक-एक तोना
 पीने बैठे। घोर सब तो पी गए मगर साधी बट्टकेदवर दस्त को
 बीच में ऐसा करना अनुचित प्रतीत हुआ और उन्होंने अपना
 प्यासा भाषा छोड़ दिया। डॉ० गयाप्रसाद उसे भी भड़ा गए।
 इतने में विजयकुमार सिन्हा भा गए और मैंने घेतन में जाग सगा
 कर उसे उठा लिया यह कह कर कि 'बस भव किसी को नहीं
 दगे। विजयकुमार सिन्हा ने जो बोलन देखी ता बहुत विगडे
 और वास 'भभी जागर पण्डित जी से कहता है यह सुसस्वत
 चरित्रवान् क्रांतिकारियों का घड्डा है या धराबखोरों का।
 कहीं धभी तसाधी हा जाए और हम लोग पकड़े जायें तो दवा
 भर में कितनी बदनामी होगी। मगर मैंने विजय की बातों की
 जरा भी परवाह नहीं की और हँसी-सुनी गाता-बभाता रहा।
 विजय ने जाकर दूसरे मकान में जहाँ भगतसिंह आजाद आदि
 लोग थे यह सब हास कहा। भगतसिंह का कृद्य हो सडान्तिक
 रूप में ही वास्तव में बहुत बुरा सगा और कृद्य पण्डित जी को
 चिढ़ाने के लिए विनोद का मामान हास सगा क्योंकि भाई
 सदाशिव बिदनाय संशम्पायन और मुझे आजाद के अपने
 आदमी समझा जाता था। विजय ने गिकायन को 'पण्डित जी
 कसास (मेरा दन का नाम) धराब पीकर रात भर लँगोट बीच
 कर नाचता रहा न सुद सोया न किसी को साने दिया। भगत
 सिंह ने इसमें तमक-मिष सगाया और क्रांतिकारिया द्वारा धराब
 पीने की भयकरता पर एक मम्बा भाहा भाषण दे जाता।

पण्डित जी और भगतसिंह दोनों साथ-साथ उस मकान से

भाए और भाते ही आजाद मुक्त पर बरस पड़ और मुझे इस
 से निष्कासित कर देने की धोपणा करने लगे । जब मैंने कहा
 कि 'पण्डित जी वही John Erskine No. 1 है जिसके लिए
 आपने चार रुपय दिये थे । तो मगतसिंह बोल 'वाह पण्डित
 जी ! आप खुद ही तो रुपये दते हैं और फिर नाराज होते हैं !'
 पण्डित जी स्फुट हो कर बोले 'तो मैंने क्या यह कहा था कि
 शरवत स आओ । मैं भी बहुत अप्रतिम हुआ । मगतसिंह बड़ी
 सद्भावना से मुझे प्रसन्न * गय और समझाने लगे 'क्यास !
 इसमें मझाक नहीं है तुम्हारा धराब लं धाना प्रच्छा नहीं हुआ ।
 पण्डित जी को इतना ज्यादा ताव तो मैंने ही नमक-मिर्च सगा
 कर दिसा दिया है । वे अभी दान्त हुए जाते हैं । मगर हम
 लोगों को ध्यान रखना चाहिए कि हमारे धरा-धरा से काम की
 बड़ी स कड़ी धानाचना होगी । हम सब यहाँ मरने के लिए
 इकट्ठे हुए हैं सो इस धाधा से नहीं कि कस हम 'हा' अपने हाथों
 से प्रिटिश धासन को उसाड़ फेंकेंगे । अपने जैसे न जाने कितने
 उसके पहले मर-सप आयगे । हमें ध्यान रखना चाहिए कि
 हमारा कोई काम ऐसा न हो जिससे लोग हमें बदनाम कर
 सकें । अपनी निजी बदनामी की बात होती तो कोई बड़ी बात
 नहीं की परन्तु यह क्रांतिकारियों की बदनामी होगी क्रांति प्रयास
 की बदनामी होगी । मैं बहुत ही हतप्रभ हुआ तो मगतसिंह ने
 मुझे तरह-तरह करके हँसाया और प्रवृत्तिस्य किया ।

का काम डॉ० गयाप्रसाद का था। वे बोटल को हाथ में धामे रह गए। पण्डित जी का पारा बहुत गरम था। किसी और का साहस न था कि इस समय उनकी किसी बात का जरा भी प्रतिवाद करे। भगतसिंह ने कहा 'पण्डित जी चीज बुरी नहीं है, उसका उपयोग बुरा होता है। हम लोग एवधान पर बस रहे हैं। तभी किसी उदात्तक चीज का रक्तना भी आवश्यक है। न मासूम हम में से कौन कब घायल हो जाए, इसके प्रभाव से मुर्दा भी दो चार मील घसा जा सकता है। इसे फकिए मत रख लीजिए। पण्डित जी की समझ में धा गया और John Exshaw No. 1 की बोटल रासायनिक बस्तुओं की कोठरी में डॉ० गयाप्रसाद के अधिकार में रख दी गई।

उसी रात को जेल से श्री जोगेश का तबादला होने वाला था। खबर यह थी कि रात के दस बजे की गाड़ी से वे ले जाए जायेंगे और तदनुसार ही हम लोगों को सारी योजना बनी थी। परन्तु सूचना के प्रतिकूल जोगेश दादा को घाम की ही गाड़ी से ले जाया गया। स्टेशन पर उस समय खबर रखने वाले का काम थी दत्त कर रहे थे उन्होंने तुरन्त धा कर खबर दी कि दादा को इसी घाम की ७ बजे वाली गाड़ी से ले जाया जा रहा है। मगर हम लोगों की सारी योजना तो दस बजे रात के लिए ही थी। अतएव उस समय कुछ नहीं हो सकता था। तुरन्त ही भाई राजगुरु को दादा के साथ उस गाड़ी से जाने के लिए बिजयकुमार न भेज दिया इस घाटा से कि कानपुर से सरनर के लिए गाड़ी सवेरे ही मिलेगी और दादा को कानपुर में ही कहीं रक्षा आयगा। राजगुरु उस स्थान को

दस रकसों और कानपुर के साथियों से मिल कर मकान आदि का प्रबंध कर ल तो कानपुर से सतनक जाते हुए ही जोगेश दादा को पुलिस के हाथों से छीना जा सकता है। दस बजे की गाड़ी से हम आजाद भगतसिंह विजय दत्त शिव वर्मा सदाशिव आरंभ सभी कानपुर के लिए सब सामान ले कर रवाना हो गए।

परन्तु कानपुर में मकान का इंतजाम न हो सका। इधर कानपुर स्टेशन पर एक जेबकट ने आजाद की जेब से बहुत घा उड़ा दिया जिसमें बहुत से रुपय रकड़ थे तथा उनका मोटर बसाने का ग्राइसेंस भी रक्ता था। सारी योजना इस प्रकार बिफर हो गई। भाई सदाशिव आरंभ मैं बेड़ी काटने का सामान बक्स में लिए प्लेटफार्म पर टहल रहे थे। भगतसिंह ने बड़े उदास मन से आकर हम लोगों से कहा कि 'बसा बापस आगरे का टिकट ले आओ। राजगुरु का भी बापस घुमा लो। हम लोग बसे ही रह गए। इतने में दया कि जोगेश दादा पुलिस वालों से घिरे हुए बेडियां लटकते चले आ रहे हैं। बड़े उदास मन से हम लोग उन्हें सह-सह बसते रहे। हमारी आगरे जाने वाली गाड़ी भी शीघ्र ही छूटन वाली थी। आजाद ने हम लोगों का शीघ्र बापस लौटने का इंतजाम किया। भाई सदाशिव राजगुरु को भी लौटा लाए।

आगरे में जब हम लोग लौट कर आए तो घर में घुसते ही भगतसिंह का रागते भर अपने आपका बहुत समय बनाए हुए ये और जिन्हें देग कर कोई भी नहीं कह सकता था कि उनका मन में कितना प्रबल उद्वेग है फट-फूट कर रो पड़ा।

इस असफलता के लिए उन्हें बड़ी श्मांति थी। दल के सभी साधियों में भगतसिंह और वसुदेव बड़ी ही गहरी मायुकता थी।

दिसम्बर सन् १९२८ में एक रोज विजयकुमार सिन्हा आकर ग्वाभियर के होस्टल से मुझे साहौर ले गए। आगरे में परिचित सभी साथी यहाँ भी उपस्थित थे। कुछ और नए साथी भी थे। साहौर के भी कुछ साथी यहाँ मिले। हंसराज बाहुरा और जयगोपाल भी यहाँ प्रथम बार मिले (ये दोनों ही बाद में सरकार से माफ़ी लेकर इकजामी गवाह बने थे। इन में से जयगोपाल को ही जलगाँव संघान प्रदासत में गोली मारने के लिए मुझे आज़म बासे पानी की सजा मिली थी) हंसराज बोहरा से भगतसिंह का विशेष स्नेह था। हंसराज बोहरा एक सुन्दर नौजवान कासेज का विद्यार्थी था। हमारे अन्तिकारी दल में अवश्य ही उसकी स्थिति प्रबन्धी रही होगी। एक रोज हंसराज बोहरा हम सोगों के घड़े पर आया। उस समय वह शायद कामज के लिए सज्जना कर ही आया था। उसने नीचे से आवाज दी। भगतसिंह ने ऊपर बरामदे से झूक कर उसे देखा और मुझ से कहा, 'कनास बरा जाकर नीचे से साइकिल ऊपर बढ़ा लाओ।' न मांझूम मैं किस धुन में था। मैंने धन-सुनी कर दी। शायद मेरे मन में यह भाव था कि 'ऐसा कौन साटसाहव का बच्चा आया है जो अपनी साइकिल स्वयं ऊपर उठा कर नहीं ला सकता। भगतसिंह मेरे मनोभाव को ताड़ गए और बोले, "बचड़ा रहने दो। फिर शायद राजपुत्र से उन्होंने कहा और वह जाकर साइकिल नीचे से उठा आए" इस बीच मैं भगतसिंह बोले, 'हनुमान जी! बुद्धि थी

बेसी हो पाई है मैं खुद साइकिल सटा लाता मगर लोग मुझे
 इपर जानते हैं इसलिए मैं नहीं गया ।' हंसराज बोहरा ऊपर
 चढ़ आया । वह मेरे लिए नया व्यक्ति था यद्यपि मैं उसकी
 ओर देखता रहा । ब्रह्मसूत्र कुछ वह था ही । भगतसिंह मुझे
 इस प्रकार देखते हुए देख कर बोले अब जनाब सोच रहे होंगे
 कि भण्डा होता कि साइकिल ऊपर चढ़ा साते क्यों न ? मैंने
 कहा 'बात तो ठीक कहते हो । भगतसिंह परिहास से बोले,
 "इस वक्त हम आपका गाना न भी सुनना चाहें तो भी आप
 पायेंगे अवश्य क्योंकि आप इसी प्रकार अपनी इस सुन्दर सुरत
 के प्रभाव को परिभाषित करेंगे । भण्डा बात है सुना लीजिए ।
 जस्टी कीजिए, फिर हमें काम की बातें करनी हैं । हंसराज
 बोहरा ने भी कहा 'हाँ भाई सुनाओ, सुना है बहुत भण्डा
 गाते हो । भगतसिंह मनोभाव ठाढ़ने में बड़े कुछस थे मैं
 याता प्रबन्ध चाहता था मगर इस प्रकार कही किसी से गाने
 को कहा जाता है ? मैंने कहा "नहीं अभी सूझ नहीं है । भगत
 सिंह बोले, "अब गवैयों जैसे नहरे न कीजिए, सुना डालिए
 मटपट । मगर अब मैं कैसे गाता ? हास-परिहास में भगतसिंह
 ने बहुत खिजाया और मैंने एक घूँसा उनके सया दिया ।
 परिणामतः हम दोनों में घूँसेबाजी होने लगी । कम डूबत
 गुस्सा ज्यादा मार सामे का डोल ।" यह बहावत मेरे ऊपर पूरी
 तरह चरितार्थ हुई । भगतसिंह ने मेरी तूब धुनाई की । जब
 मैं भण्डा तरह पिट चुका तब सागों ने धीप-बचाव किया ।
 भगतसिंह ने कहा Aggression बसास ने किया है मैं तो Self
 defence में सड़ा हूँ, संधि का प्रस्ताव मुझे स्वीकार है परन्तु

सचि की शर्तें हैं डिप्टेट करूँगा । और साचियों ने कहा कि "हाँ बात तो ठीक है । भगतसिंह बोले सचि इसी बात पर होगी कि कंभास अपना बही गाना सुनाए—“कुठे गुन्तसा । यह एक मराठी का गाना था जिसे मैं अक्सर गाया करता था । धस्तु और सोगों ने भी जोर दिया और मैं ठुक-पिट कर गाने बैठा । मेप मिटाने का इमसे अच्छा साधन भी कोई दूसरा न था । मैंने गाना शुरू किया । सब मोग सुनने बैठ गए । हंसराज बोहरा ठीक मेरे सामन था । भगतसिंह बीच में मेरी तरफ़ पाठ करके बैठ गए । मैंने आपत्ति की इन्हें गाना सुनने की तमीज़ तो है नहीं जरा देखिए ! इधर मुँह करके बैठाइये इन्हें । भगतसिंह तुरन्त बोले 'माफ़ कीजिए, अपनी सचि की शर्त वापस लेता हूँ । यदि आपका गाना सुनने के साथ आपकी दास्त मुबारिक भी देखना पड़े ता एसा गाना मैंने छोडा । सब मोग हँस पड़े । हंसराज बोहरा ने मेरे गान की सराहना की । उस रोज़ से लाहौर में मेरा नाम ही कुठे गुन्तसा पड गया । पकड़े जाने पर जब हंसराज बोहरा और जयगोपाल धभूवर बने तो उन्होंने मेरा यही नाम पुलिस को बताया और उस समय फ़रार सोगों की सूची में मेरा यही नाम छपा । प्रसयबधात् यहाँ यह भी कह दूँ कि हंसराज बोहरा अपना किन हो कमबोलियों के कारण धभूवर तो दमा परन्तु अपने क्रांतिकारी साचियों के प्रति किसी प्रकार की दानुता या दुर्भावना सम्भवत उसके मन में नहीं आई । मेरे पकड़े जान के बाद गबर्हों द्वारा पहचानने की परेड में मेरे सामन जब हंसराज बोहरा लाया गया तो वह मुझ से प्रीत्य न मिला सवा उसने मुझे पहचानने

हुए भी नहीं पहचाना। अपने ध्यान में उसने मापियों की भगम
र्याम और सपस्या की प्रशंसा भी बहुत की और अपनी
कमजोरी को भी स्वीकार किया। शायद काल में वह भगतसिंह
के सामने रोने भी लगा था।

शाम को साहौर के बड़सा हाल में पुराने क्रांतिकारियों
को घट्टाकृषि वेन के लिए एक समा होने वाली थी और उसमें
मजिद सैतर्न से घट्टीदों के चित्र दिखाए जान वाले थे।
भगतसिंह विजयकुमार सिन्हा और मैं एक ग्रुप में बहाँ गए।
पर्व पर मजिद सैतर्न का फोकस ठीक नहीं पड़ रहा था। चित्र
साफ़ और बड़े नहीं आ रहे थे अतएव समा में बड़ी गड़बड़ी
मच रही थी। भगतसिंह ने मुझ से कहा समा-मच पर
आकर जरा प्रोजेक्टर को आगे खींच दे अभी सब ठीक हो
जायगा। मगर मजिद सैतर्न के विषय में मैं कुछ भी नहीं
जानता था अतएव बहाँ जाने का मेरा साहस न हुआ। भगत
सिंह बहुत भँभकाए 'तुम्हारे आदर इतना भी पुष (Push)
नहीं है तो क्या करोगे? मगर मैं उस से मस न हुआ। मैंने
कहा 'न उनकी पञ्जाबी भाषा की कोई बात मरो समझ में
आएगी न मेरी बात उनकी समझ में कोई मुझे प्रोजेक्टर छूत
भा क्यों देगा? भगतसिंह स्वयं वहाँ इसलिए नहीं जा सकते
थे कि उसका पहचानना बाल बहाँ बहुत स थे। उनके पिता
सरदार जितानसिंह जी स्वयं वहाँ थे। राजगुरु से भी भगतसिंह
न बहाँ जाकर प्रोजेक्टर का जरा आगे खींच देन के लिए कहा।
पञ्जाबियों की उम भौड़ में जाने का माहम राजगुरु का भी
नहीं हुआ। ये दूर से ही चिन्ताते रहे—“प्रोजेक्टर को आगे

खींच दीजिए । भगतसिंह भुँभस्ता कर उठ घाए, उनके साथ विजय घोर में भी ।

हॉल से निकले तो सड़क पर लगे पोस्टरो से मासूम हुआ कि एक सिनेमा हॉल में अग्रणी का चलचित्र 'UNCLE TOM'S CABIN' आया हुआ है । भगतसिंह न प्रस्ताव किया कि अमरीका में हथेली गुप्तार्थों पर होने वाले अत्याचार और उनकी स्वतन्त्रता की लड़ाई के इस क्रांतिकारी चित्र को अवश्य देखना चाहिए । मगर वैसे कहाँ से आएँ ? साथियों को यहाँ खान क लिए फ़ी खुराक एक चवन्नी मिसली थी जिससे वे किमी दूकान में दो आने की रोटी-दास-सब्जी और छ पैसे का पी पा जात थे और बाक़ी दो पैसे की मूँगफ़लियाँ या चिलखोले जब में डाले रहते थे । शाम के खाने क लिए और दूसरे दिन खेने क खाने क लिए तीन साथियों का (१॥) रुपया मुझे दे दिया गया था । वह मेरे पास पड़ा था । भगतसिंह ने ये पैसे मुझ से मंगि मगर ये खान क पैसे मैं कैसे ले देता क्योंकि आजाद ने ताकीदम मुझे य पास दे रहे थे । भगतसिंह फिर बहुत भुँभस्ताए । कसा की उपयोगिता पर एक अश्रद्धा खासा मापण उन्होंने दे डासा । मैंने अनुशासन की बात कही ता अघे अनुशासन से हानि पर भी एक सँभर मुझ सुनना पड़ा । य सब बातें होनी आ रही थीं और हम तीनों सिनेमा हॉल की ओर बढ़े जा रहे थे । अन्त में भगतसिंह ने कहा 'अब तुम नहीं मानागे और सीधे स पसे नहीं दोगे तो मैं तुम स अघरदस्ती पस छिना लूँगा । सिनेमा देखने को तवीयत मेरी भी थी अतएव मैंने कहा 'अश्रद्धा यहाँ सड़क पर हुडबंदग मच करो, पस से सा मगर ये पसे मैं तुम्हें

नहीं बै रहा है तुम मुझ से जबरन छिना रहे हो।' भगतसिंह ने कहा 'यही सही और अब मैं तुम्हें ही जबरदस्ती पीट-घाट कर टिकट खरीदने में बै रहा हूँ जाकर खबन्नी वाले तीन टिकट ले आइय। मैं गया मगर टिकट को खिड़की पर साहीरी मुस्तण्डों की इतनी भीड़ और धींगामस्ती थी कि मैं खिड़की पर किसी प्रकार भी न पहुँच सका। भगतसिंह दूर जाइ एक उस्ताद की तरह नाव-बैच बता कर मुझे बार-बार मेजते और मैं बार-बार झोट घामा। भगतसिंह बहुत झुंझसा रहे थे। अब मैं भी झुंझसाया और मैंने कहा 'मैं अब नहीं जाया सुन्हीं जाओ। भगतसिंह नाव खा कर झोट उतारकर, घास्तीम खा कर भाड़ में चुम गए। खबन्नी वाले टिकट तो वे नहीं पा सक घठन्नी वाल तान टिकट ले ले ही घाए। सबेर क खाने क वैसे भी समाप्त।' तैर चित्र देखा गया। बहुत ही अच्छा चित्र था। बीच-बीच में भगतसिंह मुझे चिढ़ाते रहे 'कस उठ कसें कसता है ? बड़े इंसिपसिन वाले की दुम वने हैं ! घड़े पर जाकर चित्र की तारीफ़ करके और क्रांतिकारिया क लिए उमकी उपयोगिता पर एक सैकवर-मा भड़ कर भगतसिंह मे घाजाद को इस प्रकार पटा सिया कि पैसों की बात ही नहीं उठी और हम लोगों को दूसरे दिन सबेरे ना वाकायदा ग्यामे का पन मिसे। भगतसिंह मरो और घांग मार कर मुम्हराए।

सबेर घाजाद ने घपन ग्यामे क लिए बृद्ध तान राटिया और घायल एक घाने का गुड़ मगवाया। घाजाद गुड़ और राटिया गा कर गृह भगतसिंह का यह अच्छा न सग रहा था।

मथएव मजाब करते हुए भगतसिंह ने गुड में से एक डली उठा ली और हम लोगों को इशारा किया कि एक-एक हम भी उठा लें। आजाद ने जो यह देखा तो मुम्हसे कहा 'देखो इरान न करो, और भी बहुत काम करना है। मैं जो कुछ खाता हूँ उसे खाता हूँ खाने दो। मगर भगतसिंह ने गुड की डली न रखी। आजाद ने मुँहसा कर सारा गुड पेंक दिया। वह नाबदान के पास जा गिरा। अस्तु, लोगों ने मनाया। आजाद मान गए। गुड उठा कर ले आया गया। आजाद खुस्क नाम गुड के साथ सामे बैठे। भगतसिंह ने कहा, "गुड नाबदान के पास जा पड़ा था अब बिद ही हो तो कम से कम थो तो भीजिए ही। गुड धोया गया और आजाद उसके साथ नाम खा कर डकार भेकर उठ बठे और बोले 'हूँ लो' और काम में लग गए।

शाम को साला राजपतराम पर साठी-महार करके ब्रिटिश सरकार ने राष्ट्र का जो अपमान किया था उसका प्रतिकार किया गया। साठी प्रहार करने वाले असिस्टेण्ट सुपरिन्टेन्डेण्ट सर्जिस को गोली से मार डाला गया। आजाद, भगतसिंह और राजगुरु ही इस कार्य के लिए गए थे। सुबदेव, विजय और मैं एक अलग टुकड़ी में आवश्यक सहायता करने के लिए घटनास्थल के पास ही थे। सर्जिस को मारने के बाद राजगुरु, विजय और मैं एक अलग मकान में रहे। एक रोज विजय से मिलने के लिए भगतसिंह उसी मकान में आए। उन की वह धादति हमेशा आँसों में भूना करती है। एक ऐसी भावना उनके प्रसस्त समाट पर आलोक्ति थी जिसका

बर्णन में कर ही नहीं सकता। भगतसिंह दो व्यक्तियों के बंध में भाग लेकर भाए थे। कितना उद्विग्न था उनका मानस। उनके समत कण्ठ से उनका उद्विग्न उमरा पड़ता था। बात करते-करते वे रुक जाते थे धीरे-धीरे तक श्रुत रह कर फिर बात का सूत्र पकड़ कर मुसकराने का प्रयत्न करते भागे बढ़ते थे। मानव जीवन का सूक्ष्म और उसकी महत्ता और सर्वोपरि उसका सौन्दर्य उनके हृदय में धसोम था। माला साजपतराय पर सरकार द्वारा मारात्मक लाठी प्रहार किए जाने से राष्ट्र का जो अपमान हुआ था उसका प्रतिशोध भवश्य किया जाय और क्रांतिकारियों के सक्रिय अस्तित्व का परिचय दिया जाय यह भगतसिंह का ही प्रस्ताव था और वही आज कार्यान्वित हो चुका था। सॉण्डर्स बंधन बाद पुलिस की दौड़धूप का जो घातक साहौर में छाया था उसे हम लोग साहौर की गसिया में आम नर-नागियों के चेहरों पर देख चुके थे। परन्तु घातक की काशी छाया में से भी राष्ट्र के अपमान का बदला लिए जाने की प्रसन्नता फट पड़ती थी इसे दस कर हम सभी का बिस्स प्रसन्न होता था। भावप्रबल भगतसिंह का चेहरा इस समय उनकी भावसम्बलता का दर्पण बना हुआ था। मानवता के जम पुजारों की उस दिन की छवि को देख कर हृदय अपने आप ही थड़ाबसत होकर उसकी चरणरज मस्तक पर सगा सेने को सालायित हो उठता था।

भगतसिंह विजय से चलते एक कोने में बैर तक बैठे करते रहे। वे दोनों कन्द्रीय समिति के सदस्य थे। अतएव मैं उनसे दूर एक कोने में अलग बैठा रहा। मैं समझ रहा था

दोनों के हृदय बहुत भरे हुए थे । भगतसिंह की सयत भावुकता अपनी अधिकतम गहराई पर थी । दोनों बातें करके उठे और मुझ से भी साधारण बातचीत उन्हामे की ता मैंने भावुकता को दबा कर कठोर बन कर काम-काज की बातें करना ही उस समय अपने योग्य क्रांतिकारी होने के समुच्च समझा । मुझे घाम भी इस बात की ग्लानि है कि उस बातचीत में मैंने भगतसिंह को इस बात की भी याद दिसाई कि जब मैं माहौर घाया तो होस्टल में अपने लार्च के बास-तीस रुपये भी अपने साथ लेटा घाया था जो मुझ से यहाँ ले लिए गए थे । अतएव वहाँ से जाने के पहले वे रुपये मुझे वापस मिल जाने चाहिए अन्यथा मैं वहाँ होस्टल में कैसे रह सकूँगा । इस पर भगतसिंह ने कोई उत्तर तो नहीं दिया था । रुपये वे ही कहीं जो दे दे देंगे । आते हुए इतना ही बोले क्यों बैसास कमी कमी जो तुम कबिता मियने बैठ आते हो तो तुम्हारे दिल में कोई छत्रपटाहट भी होती है या यों ही जोश देखकर शब्द जोड़ने आते हैं ? ' मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही वे यह कह कर चले गए, 'सरस्वती की सबसे बड़ी सेवा आपन लिए यही होगी कि आप कमी कवि बनने की चेष्टा न करें ।'

इसके बाद भगतसिंह से मुलाकात न हो सकी और वे प्रसेम्बसी में बस फेंक कर गिरफ्तार हो गए । उस समय मैं अपने घर पर मईसी में ही था और आजाद भी हमारे साथ वही पर थे । प्रसेम्बसी में बस फेंके जाने, दो और नौजवानों के गिरफ्तार होने का समाचार जब अखबारों में पढ़ा तबो मुझे आजाद ने बताया कि ये दोनों नौजवान 'रणजीठ' और 'मोहन' हैं । इनके

भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को मैं इन्हीं दो मामों से जानता था। जब बाबाद न मुझ से यह भी कहा कि भगतसिंह तुम्हें अपने साथ बम फेंकन से जाना चाहते थे परन्तु इस ख्यास से कि तुम्हारे जाने से सदाशिव और बिश्वनाथ का भी सुरन्त प्ररार होना पड़ेगा नहीं तो वे भी पकड़े जायेंगे मैंने तुम्हें नहीं भेजा।' मुझे बड़ा क्षोभ हुआ।

गुप्तदल में गोपनीयता का नियम बहुत ही आवश्यक था। सदस्यगण तथा सम्भव एक दूसरे का नाम भी न जान पाते थे। जिसका जिस काम से जिसना सम्बन्ध होता था उतना ही उसे बताया जाता था। ऐसी हानत में अविश्वास की भावना और उससे निद्र और ईर्ष्या उत्पन्न होने का अवसरों का प्रात स्वाभाविक ही था। दल में 'दादागोरी' पसन का सन्देह कभी भी हो सकता था। नेता और सिपाही का भेद भी अपरिहाय रूप में था ही। भगतसिंह नेताओं में से तो एक थे ही वास्तव में क्रियात्मक रूप में वे दल के सबसे बड़े नेता थे परन्तु वे अपने व्यवहार में सदैव इस बात का ध्यान रखते थे कि उनके किसी काम में नेतागोरी की गंध न आए। नेता और सिपाही के बीच की झगड़े वे अपने हान-परिहाय से सदा पाटते रहते थे। माध्याह्न रहम-सहन में वे इस बात का सदैव ध्यान रखते ही थे। नेता तक्रिया लगाए बैठे रहे और सिपाही भद्रू, लगाए ऐसी हानत के कभी नहीं घाने बैठे थे। आवश्यकता के अनुसार यदि कभी उनका कपड़ों का मैन था डाला ना कभी आवश्यकता न होने पर भा भेरे कपड़ों में वे हा साबुन लगाते बैठ जाते थे सो भी इन प्रकार नहीं कि उनका यह बड़पन

प्रकट न हो कि वे नेता होकर एक सिपाही के कपड़ों में साबुन लगा रहे हैं बल्कि धापन में बराबरी से तू-तड़ाक करके धीरे-ऐसा कुछ कह कर 'धबे सब साबुन बोल डालेगा तो फिर मैं क्या मगाऊँगा ? इधर ला ।"

सकट के काम में तो वे भागे रहने की जिद ही कर जामा करस दे । किसी सिपाही को सकट का काम करने में दे दिया जाय धीरे-नता सुरक्षित बैठे हुकम करता रहे यह उन्हें कभी पसन्द नहीं था और यही कारण था कि प्रसेम्बसी में बम फेंकने के लिए स्वयं ही जाने की धीरे-फिर वहाँ खड़े रहने की उम्होंने जिद की जबकि दस का धीरे-कोई भी सदस्य भगत-सिंह के इस प्रकार जाने को ठीक नहीं समझता था । आजाद भी हर काम में भागे रहते थे । उसका कारण यह था कि उन्हें लगता था कि वे काम को जितनी शक्ती तरह कर सकते हैं उतनी शक्ती तरह धीरे-कोई न कर सकेगा, धीरे-यह ठीक भी था । भगतसिंह जो हर बड़े काम में भागे रहते थे उसका कारण यह था कि नता के रूप में उन्हें अपने धापन को सब से अधिक खतरे में डालना चाहिए नहीं तो एक गुप्त दल में 'दादागोरी' अपने बुरे धय में जाने से न सकेगी धीरे-सिपाहियों का नताओं में बिरवास न रहेगा । भगतसिंह के प्रसेम्बसी में बम फेंक कर गिरफ्तार हो जाने के बाद जय मैने आजाद से कहा "पण्डित जी यह क्या किया धापन । रणजीत को इस प्रकार पकड़े जाने को मेज दिया ! तो बड़ी गहरी साँस लेकर उन्होंने उत्तर दिया 'कंसास ! मैंने बहुत मना किया मगर भगतसिंह बिस्ती-प्रकार भी नहीं माना । सब तो यह है कि वहाँ खड़े रह कर

पकड़े जाने की बात मेरी समझ में कभी नहीं आई और न मैं आज भी उसे समझ पा रहा हूँ। अपनी पार्टी की संवैधान्तिक स्थिति को स्पष्ट करने के लिए खुद-बखुद पकड़े जाने की क्या आवश्यकता है? जब कभी पकड़ लिए जाओ अपनी संवैधान्तिक स्थिति स्पष्ट करो और दान से फाँसी जाओ। मगर जान-बूझ कर अपने हाथ से फाँसी का फन्दा अपने गले में डालने का उर्क मेरी समझ में नहीं आया। फिर भी केन्द्रीय समिति ने जो निश्चय भगतसिंह की जिद मानकर कर लिया उसे मैंने भी मंजूर कर लिया। भाई सिद्धान्त-विद्वान्त ये लोग क्या-क्या समझते हैं हमें तो कुछ करना ही आता है।

असेम्बली में वम फेंकने या सॉल्डर्स को मारने में तो कुछ यश भी था परन्तु ऐसे कामों में भी जिन में खतरा पूरा-पूरा हो और यश का तनिक भी अवकाश न हो भगतसिंह भागे रहते थे। उदाहरण के लिए वम के नये खोस और मसासा तैयार हो जाने पर उसे कहीं बसा कर देने की बात थी। आजाद ने इसके लिए भाँसी के पास का जंगल चुना जहाँ ठाकुरों के चिकार खेसने के घड़ाके अक्षर हाते रहते हैं। आजाद, भगतसिंह और भाई सदाशिवराव इस काम के लिए गए। वम पर टोपी बढ़ा कर उन फेंकने का समय आया तो भगतसिंह ने स्वयं वम को हाथ में लिया और आजाद और सदाशिव को बहुत पीछे सुरक्षित खड़ा कर लिया और फिर वम फेंका। यहाँ यह स्मरण कर सगा चाहिए कि भाई भयवतीकरण की मृत्यु इस प्रकार एक वम आजमाने में वम के हाथ में पट जान से ही हुई थी।

भगतसिंह क प्रसेम्बसी में बम फेंक कर गिरफ्तार होने क कुछ ही महीनों बाद जब माई सदाशिव क साथ में मुसाबल स्टेशन पर गिरफ्तार हो गया तो मेरी सबसे प्रबल भावना यही हुई कि जल्द से जल्द भगतसिंह आदि के साथ हमको मिला दिया जाए। इसके लिए हमने अपने आपको भगतसिंह का साथी होने की बात पुलिस से कह भी दी। लाहौर की पुलिस देखन को आई और हम को साहौर ले भी जाया गया। वहाँ हमारी घिनास्त की कायवाही हुई मगर हमारे दुर्भाग्य से पुलिस में हम पर जसगाँव में भसग ही मुकदमा चलाया गया और वहाँ पर और हमको लाहौर से जसगाँव वापस लाया गया और वहाँ पर हम पर बेश चला कर सम्झी सजा कर दी गई। भगतसिंह से ही मिसने की साथ पूरी न हो सकी। आज भी भगतसिंह से ही सुना हुआ यह दौर सीन स उमर कर गैसे में काँप उठता है—
 वे सूरतें इसाही जिस बेरा, बसतियाँ हैं,
 जब निमके बेसनने को भाँसेँ तरसतियाँ हैं।'

—भगवानदास साहौर

सम्राज्योत्तर आचार

ऐतिहासिक आचार्यवर्गों में हम ऊँची पाठिकाओं पर स्थापित महापुरुषों की मूर्तियाँ देखते हैं। अत्यधिक महत्त्व है उन मूर्तियों का। वे उस ऊँचाई को सूचित करती हैं जिस तक व्यक्ति उठ चुका है और फिर भी उठ सकता है। परन्तु इस उच्चता को प्राप्त कर सकने की आशा सर्वसाधारण को महापुरुषों के जीवन के उस भाग से ही मिलती है जो सर्वसाधारण के जैसा ही होता है। महापुरुषों ने विशेष परिस्थितियों में जिन जिन ऐतिहासिक महाकृतियों को सम्पन्न किया है उनका महत्त्व इस बात में है कि वे हमारे लिए आदर्श निविष्ट करती हैं परन्तु उस आदर्श को प्राप्त कर सकने के लिए जिस आदर्श जिस बिद्वान की आर्षदयकता होती है वह मिलता है। उन महापुरुषों के प्रति आत्मियता की भावना से और आत्मियता की यह भावना हमें महापुरुषों के उस रोजमर्रा के जीवन से मिलती है जिसमें वे सर्वसाधारण के सम्पर्क में आते हैं और उन्हीं के समान होते हैं। महापुरुषों के प्रति आत्मियता की इस अनुभूति के बिना और इस बिद्वान के आभाव में कि उच्च आदर्श हमारे जैसे ही मनुष्यों द्वारा प्राप्य हैं वे कबस ईश्वर प्रेषित आसाधारण व्यक्तियों या अवतारों के लिए ही नहीं हैं।

उच्च धार्मिक का व्यावहारिक महत्त्व ही नष्ट हो जाता है।

अमर शाहीद अन्वेषेखर आजाद ने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के कमाण्डर-इन-चीफ के रूप में इसाहावाद के एक ड पार में भारत के विदेशी साम्राज्यवादी उन्पीठकों की सद्यस्त्र शक्ति से मोर्चा लेते हुए शहादत पाई। पञ्जाब कसरी नासा साबपतराय पर साठियों का मारात्मक प्रहार करने वाले साहूोर के असिस्टेण्ट पुनिस सुपरिन्टेण्डेण्ट सॉण्डर्स को मृत्यु-दण्ड देने की सफल व्यवस्था भी आजाद ने की। उन्होंने भारत के राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा में सजग श्रान्ति कार्यियों का संगठन किया और उनके अस्तित्व का प्रभावपूर्ण परिचय भी दिया। ये घटनाएँ, आजाद की ऐतिहासिक कृतियाँ हैं, जिन्होंने उन्हें भारतीय स्वातन्त्र्य शर्यत के इतिहास में एक उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया है। परन्तु इस आदेश को व्यावहारिक मूल्य प्रदान करने वाला उनका बहु व्यक्तिगत व्यवहार ही था जिसने उन्हें अपने साथियों का प्रिय नेता बना दिया, जिसने साथियों के हृदय में उनके लिए ऐसा विश्वास उत्पन्न कर लिया कि उनके संकेत मात्र पर भी साथी प्राण देने को तैयार रहते थे और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है वे बातें जो हमें विश्वास दिलाती हैं कि आजाद हमारे जैसे ही थे, हम में से ही एक थे, हमारे थे।

आजाद से सर्वप्रथम मेरा परिचय मई १९२४ के घण्ट में हुआ था। उस समय वे हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के प्रधान सेनानी 'बलराज महो' थे। उस समय वे हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के एक

नहीं वरन् एक प्रमुख सदस्य मात्र थे। उक्त दल के नेता धर्म
 शहीद रामप्रसाद 'विस्मिस' तथा श्री लक्ष्मीन्द्रनाथ सान्यास
 आदि उनकी धसाधारण श्रम कार्य-शक्ति के कारण उनका
 'बिबक सिलघर' कहा करते थे। इस समय आजाद की आयु
 १८-१९ वर्ष ही की थी। भौंसी में जिला सगठनकर्ता श्री
 लक्ष्मीन्द्रनाथ बस्ती से वे मिलने आए थे। श्री बस्ती ने इधर
 एक सप्ताह भौंसी में रह कर जो जोड़ से नवयुवक तयार कर
 लिए थे आजाद उनसे मिले। अपने सरल स्वभाव के स्वल्प
 परिचय से उन्होंने इन नौजवानों से ऐसी आत्मोपमा कर ली
 कि फिर न इन नौजवानों को आजाद के बिना चल पड़ा और
 न आजाद को इनके बिना। इन नवयुवकों में भाई सदाशिव
 राव मनकापुरकर और श्री विन्वमाध गंगाधर बैलम्पायन मुख्य
 थे। इसी समय मैंने भी भौंसी के मुकरमाने सुहस्ने के एक
 मकान में जहाँ श्री लक्ष्मीन्द्रनाथ बस्ती रहा करते थे आजाद
 के पहली बार दृशन किए। श्री लक्ष्मीन्द्रनाथ बस्ती के उस
 समय के दुबसे-मठले शरीर की तुलना में जब मैंने आजाद का
 हृष्ट-पुष्ट शरीर देखा तो क्रांतिकारियों पर मेरी आत्म-धृष्टा
 चीगुनी बड़ गई। आजाद से उस समय जो बातचीत हुई,
 उसमें उन्होंने यह बात मेरे मन में भली भाँति अमा दी जो
 बाद में मैंने इस श्रुति में पाई— 'बस बाबू भूमोऽपि ह्यद्य
 विद्वानवतामेवा बसवानामप्ययत — अर्थात् बसदासी बनो,
 एक बसदासी सौ विद्वानों को नैपानेता है।

इस प्रथम परिचय के अन्त पर ही एक एसी घटना
 हुई जिससे आजाद की चतस्रु नीरीक्षण-शक्ति सावधानी

घौर तत्काल उपयुक्त काम करने की स्वामात्मिक प्रवृत्ति की याक हम सोचों पर जम गई। बैठे-बैठे बातें हो रही थीं। श्री वसन्ती के हाथ में रिवास्वर था। रिवास्वर से निघाना साधने के सम्बन्ध में ही बातचीत हो रही थी। बातों-बातों में ही आजाद एकदम विजय की पति से उलझे घौर इसके पूर्व ही कि हम समझ सकें कि क्या मामला है उन्होंने बल्छी को पकड़ा दिया और उनके हाथ क रिवास्वर का रक्त खन की ओर कर दिया तथा अपने दोनों हाथों में उसे जकड़ लिया। बात यह थी कि श्री बल्छी बाँटों-बाँटों में यह मूल गए थे कि रिवास्वर में कारतूस फिर भर दिए गए हैं। उन्होंने बेखबरी से उसके टिगर पर घण्टुसी रक्त बातों की धुन में उसे धापा बजा भी लिया था और बोड़ा धापा ऊपर उठ भी चुका था। वस दूसरे ही क्षण गोली चम जाती और कुछ घनब हो जाता, तो फिर क्षायद मैं इन पंक्तियों को लिखने के लिए म बचा होता। आजाद की सावधान नजरों ने परिस्थिति को अणार्ध में ही समझ लिया और वे सपके। दुबटना होमे स बच गई। बल्छी सकपकाकर रह गए। आजाद ने रिवास्वर पुनः ठीक करके रक्त दिया। दूसरा काम जो आजाद ने किया यह यह था कि उन्होंने मुझे गौर से देखा। कहीं मेरे चेहरे का रंग पीला तो नहीं हो गया था कहीं मैं काँप तो नहीं उठा था। उन्होंने मजाक करते हुए एक सामुद्रिक की तरह मरी धायु देखने के लिए मंच हाथ देखा और फिर एक बच की तरह नाड़ी भी देसी। फिर बोले— 'बड़े माम्यजासी हो। ऐसे ही थोड़ मर जाओगे। बस बचके मरोगे। घब बल्छी

मुस्कराए और बोले, "मुझ से तो चलती हो ही चुकी थी इन्होंने बधा लिया। तुम भी साधारण धीरे से चबरा जाने वाला नहीं हो। जिस काम के लिए आजाद भाँसी आए थे उसे करके वे चले गए परन्तु हम लोगों से वे एक गहरी भारतीयता स्थापित कर गए। हमें विश्वास हो गया कि आजाद हम लोगों के बीच रहने के लिए सीधे ही फिर आयेंगे। भाँसी धीरे-धीरे पुर्न-सुख के लिए सुविधापूर्ण बुन्देसराज्य की स्थापना को वे भूल न सकेंगे जिसकी वही ही प्रयत्न वे हम लोगों से अपने इस परिचय में करते रहे थे। हमें विश्वास हो गया था कि भाँसी के आस-पास देशी रियासतों में गोपी बसाना आदि साधने के लिए जो सुविधा है वह आजाद को रहे-रहे कर गुन्गुवाती रहेगी। हुआ भी यही।

दस के नेता श्री रामप्रसाद बिस्मिल' राष्ट्रीयतावादी आन्दोलन का आजाद पर प्यार था बहुत था परन्तु उनकी कम उम्र और अल्प आयु शक्ति के कारण गम्भीरता के साथ मुश्किल रूप से काम कर सकने की उनकी क्षमता पर भरोसा कम ही था। दस के नेताओं की धारणा कुछ ऐसी ही थी कि यह पुलिस की नजरों से बचा नहीं रह सकता। इतना ही नहीं, कहीं यह अपने साथ धीरे-धीरे से साधियों को न ले बीते। परन्तु हुआ यह कि काकारी राज में दस के वे कुछ ही धीरे-धीरे गम्भीर नेता एक-एक करके पकड़ लिए गए और उनके विषय में उनकी यह धारणा थी कि यह सबसे पहले पुलिस की नजरों में बंद आया, वही पुलिस की भाँसों में दस भोंक कर साफ निकल आया। आजाद हम लोगों के बीच भाँसी में आ गए।

आजाद काकोरी-काण्ड से फ़रार हो कर झंझी प्राण
 घोर फिर उनके जीवन क अन्त तक—इलाहाबाद के एक ड
 पार्क में उनके शहीद होने तक—भाँसी ही उनका मुख्य स्थान
 बना रहा। भाँसी में उनका सिर्फ़ अन्धकार की वार्ताओं के प्रति
 रिक्त आकर्षण के बन्धु मास्टर रत्ननारायणसिंह भी थे जिन्होंने
 वे छोटे भाई ही बन गए। भाँसी में मास्टर रत्ननारायण से
 आजाद को बड़ी सहायता मिली। जिन्होंने आजाद को गिरफ्तार
 कराने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद की शक्तिशाली हथकौड़ी
 का इनाम घोषित कर चुकी थी नदियों में जास गुफ्तारों में
 भाँसी घोर कुर्घों में बटि हास रही थी वही आजाद ऐन सकट
 के समय मास्टर रत्ननारायण को यहाँ सुरक्षित रह रहा था।
 कई बार पुलिस ने मास्टर साहब के मकान की तलाशी भी
 ली। आजाद उनके यहाँ किसी तरह खाने में छिप कर नहीं रहे
 वे खुल्लमखुल्ला आते जाते काम करते थे और अपनी
 ही तलाश में आए हुए सुफिया पुलिस के अफसरों के साथ
 भेटों कलाई-यंसा लड़ाते थे और उनके मुँह से 'आजिद
 आजाद' की कारगुजारी की बातें सुनकर उनके सामने स्वयं
 भी बड़े आश्चर्यचकित होते थे और फिर बाद में हम लोगों
 को बताते हुए बड़े खिसलिलाकर हँसते—'साल मुझे एक
 हौसा, एक जादूगर समझते हैं। किसना छाटा होता है इन
 चीकों-पीकों का दिमाग गुनामों के दिमाग में बड़ी से बड़ी
 धाम एक डिप्पी हाने में ही है। वह मुझसे भी बुरा कुमोदसिंह
 कह रहा था 'घरे क्या कह रहे हो ? य आतिशारी मोग' बड़े
 पताने के हैं 'अच्छाकतला को देना सा ता तुम्हारी इसम,

मुस्कराए और बोल, 'मुझ से तो गनती हो ही चुकी थी इन्होंने बधा लिया। तुम भी साधारण तौर से भयरा जाने वाला नहीं हो। जिस काम के लिए आजाद झंसी आए थे उसे करने के चले गए, परन्तु हम लोगों से वे एक गहरी आत्मियता स्थापित कर गए। हमें विश्वास हो गया कि आजाद हम लोगों के बीच रहने के लिए शीघ्र ही फिर आयेंगे। झंसी और गुरिल्ला-युद्ध के लिए सुविधापूर्ण मुन्देलकण्ड की भूमि को वे मूल न सकेंगे जिसकी बड़ी ही प्रशंसा वे हम लोगों से अपने इस परिचय में करते रहे थे। हमें विश्वास हो गया था कि झंसी के पास-पास वेगो रियासतों में गोसी चलाना आदि छालने के लिए जो सुविधा है वह आजाद को रह रह कर गुदगुदाती रहेगी। हुमा भी यही।

दस के नेता श्री रामप्रसाद विस्मिन्' शशीन्द्रनाथ सान्यास का आजाद पर प्यार तो बहुत था परन्तु उनकी कम उम्र और अप्सर कार्य शक्ति के कारण गम्भीरता के साथ गुप्त रूप से काम कर सकने की उनकी क्षमता पर भरोसा कम ही था। दस के नेताओं की धारणा कुछ ऐसी ही थी कि यह पुलिस की नजरों से बचा नहीं रहे सकता। इतना ही नहीं कहीं यह अपने साथ और बहुत से साथियों को न ल बीते। परन्तु हुमा यह कि काकारी कण्ड में दस के वे कुशल और बाहोग गम्भीर नर्तक एक-एक करके पकड़ लिए गए और जिनके विषय में उनकी यह धारणा थी कि यह सबसे पहले पुलिस की नजरों में पड़ जायगा, वही पुलिस की घातों में घूस भोंक कर साक़ निकल आया। आजाद हम लोगों के बीच झंसी में आ गए।

आजाद कारी-काण्ड से करार हो कर मीसा आग
 और फिर उनके जीवन क अन्त तक—इनाजाद का एक ट
 पार्क में उनके सहोदर होने तक—भीमी ही उनका मुख्य स्थान
 बना रहा । भीमी में एक सिया अय आर वाता के प्रति-
 रिक्त आकषण क कन्द्र मास्टर रटनाग यणमिह भी थे जिनक
 वे छोट भाई ही बन गए । भीसा में मास्टर रटनागयण से
 आजाद को बड़ी सहायता मिली । जिन आजाद को गिरफ्तार
 कराने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद की एकल हजारों रुपयों
 का इनाम घोषित कर चुकी थी नदियों में आम बुफाओं में
 बौछ और कृषो में कटि डाल रही थी वही आजाद ऐन सफ्ट
 क समय मास्टर रटनागयण क यहाँ सुरक्षित रह रहा था ।
 कई बार पुलिस ने मास्टर साहब क भकान की तलाशी भी
 ली । आजाद उनके यहाँ किसी तरहाने में छिप कर रहा रहे
 वे सुस्ममनुस्मा थाउ जात नाम करते थे और अपनी
 ही तलाश में आए हुए सुफिया पुलिस क घफसरों के भाप
 पण्टों कनाई-बचा लडात थे और उनके मुख से "भातिर
 आजाद की कारगुजारी की बातें सुनकर उनके सामने स्वय
 भी बड़े आदरमन्वित होते थे और फिर बाद में हम लोगों
 का बडात हुए बड़े तिलखिलाकर हेसते—'साल मुझे एक
 हीसा एक जादूगर ममभते है । कितना छाटा हाता है इन
 भीषों-भीषों का दिमाग युसामों के निमाग में बड़ी से बड़ी
 मान एक डिप्टी होने में ही है । वह सुमरा बीउ कुभोदमिह
 कह रहा था "भरे क्या कह रहे हा ? ये क्रांतिकारी मोव बड़े
 पराने क है अगकावउस्ता को देन सा तो, तुम्हारी

एक डिब्बी से कम नहीं एक डिब्बी से २

शाजाद केबल मास्टर खानारायण के ही छोटे भाई नहीं बन गए थे वे उनकी पत्नी क भगवानू देबर, उनकी छोटी भइकी क प्रिय चाचा जी भी बन गए थे । शाजाद की सफलता का रहस्य उनकी धीरता से कहीं अधिक उनकी उस स्वाभाविक मिसनकारी (शिष्टाचारपूर्ण मैत्री नहीं) उस भारतीयतापूर्ण हार्दिकता में थी जिसकी सजीबता रुठने, बिगड़ने और फिर मनने में प्रकट होती है । मास्टर साहब की पत्नी से उनकी देबर भाभी जैसे भगड़े होना, इन भगड़ों की मास्टर साहब से सिकायत होना फिर मास्टर साहब द्वारा समझौता कराया जाना—ये सब मास्टर साहब के पारिवारिक जीवन की निबियाँ हो गई थी । मास्टर सह्य और उनकी पत्नी क लिए शाजाद का पारिवारिक भाव-मूल्य उनके राजनीतिक मूल्य से भी कहीं अधिक हो गया था । लोगों के जीवन में एक राजनीतिक मूल्य क रूप में ही नहीं एक व्यक्तित्व भाव-मूल्य के रूप में घर कर सेन क अपने गुण विशेष में ही शाजाद की सफलता निहित थी । भारी और लगड़ा होने से कुछ माटा सा दिखने वाला कद, पहरा गेहुँगा रंग चेहरे पर खेबक क दाग देकर प्रकृति ने उनके साम ओ सस्ती की थी, उसकी क्षतिपूर्ति उसन भरपूर से भी कहीं अधिक उनको ऐसा स्वभाव-सौम्य प्रदान करके कर दी थी कि कोई भी एक बार उनके परिचय में आकर उनके प्रति कदापि उदासीन नहीं रह सकता था ।

भाँसी में श्री राजीन्द्रनाथ बन्धी क काय-बलाप ने पुसिस

का ध्यान धाकूट किया था, अतएव उस पकड़ पकड़ के सकटमम समय में आजाद का झंसी में रहना निरपवाद नहीं समझा गया। मास्टर खन्नारायण कभर उन्होंने झंसी के दल की छाया के छावियों से मिलकर उन्हें मावी कार्यक्रम समझ-बुझ कर एक कम्बल और एक रामायण का गुटका बस इतना ही सम्बल साथ में धोरछे की राह पकड़ी और धोरछे से कुछ दूर, झंसी और धारछे के बीच में डिमरपुरा ग्राम के पास एक छोटी सी नदी सातार के तट पर एक कुटिया में उन्होंने आसन जमाया। उन्होंने यहीं अपना नाम हरिसंकर ब्रह्मचारी रखा। उनका ब्रह्मचारी का वेश स्वाभाविक था ही। यहाँ रह कर उन्होंने अपना क्रांतिकारी ताना-बाना बुनना प्रारम्भ किया। पास के ग्राम डिमरपुरा में उन्होंने मधुकरी वृत्ति से अपना भोजन माँगा और गाँव वालों को रामायण की कथा सुनाई। इसीलिए तो वे रामायण का गुटका साथ साथ थे। आजाद मावरा में (पहले असीराजपुर रियासत का एक ग्राम जो अब मध्यभारत की भद्रबुधा तहसील में आ गया है) अपने घर से भाग कर काशी में 'विद्याध्वज कर्म के लिए पहुँचे थे और वहाँ एक क्षेत्र में रह कर व्याकरण रटने का मिथ्या व्यवसाय भी उन्होंने किया था। परन्तु 'अह उण ऋसुक' के रटने और 'द्विष्व पिष्व विष्व द्विन्' करके पाठ्य सिद्धि की व्यर्थ की मायापत्थी करने के लिए तो वे पैदा ही नहीं हुए थे। अतएव काशी में उन्होंने "स्त्री प्रथम" न साथ कर क्रांतिकारियों का सम्पर्क ही माया था। मेरी जान में तो संसृष्ट के नाम पर उन्हें 'धिव महिम्न स्तोत्र' न सवा बो,

ढाई या पौन तीन श्लोक ही याद थे—किसी हासत में तीन से अधिक नहीं—सो भी इस प्रकार कि किसी का पहला चरण सो किसी का दूसरा किसी का तीसरा तो किसी का चौथा । कुस मिसा कर इन श्लोकों में पूरा श्लोक एक भी नहीं था । परन्तु इन ढाई-पौने तीन टूटे-फटे श्लोकों से वे गाँव बासों की बड़ा भक्ति प्राप्त करने के लिए अपने 'ध्यान और 'भजन पूजन' का सारा काम चला लेते थे । हाँ नीति का एक श्लोक उन्हें और भी याद था और उसको वे भोजन मिलन पर सुनाए बिना न मानते थे वह था—

'उद्योगा विद्याहेतु गते गायन्ति गर्भमा'

परस्पर प्रशंसन्ति ग्रहोत्पन्नहोष्वनि'

यह उनको ठीक ऐसा ही याद था और इसका अर्थ भी वे ठीक जानते थे । बस इतना ही था उनका संस्कृत का ज्ञान ।

हरियाकर ब्रह्मचारी का गाँव में बड़ा सम्मान हो गया और उनकी पाठशाला में गाँव के छोटे-छोटे विद्यार्थी भर-भाई पढ़ने लगे । वो ही एक महीना में इस प्रकार इतना हड़ धाधार बना मन के बाप अब उन्होंने भौंसी से अपने साथियों को बुलाना शुरू किया और काकोरी-काण्ड के बाद दस क टूटे हुए सूत्रों को ब फिर से जोड़ने में जुट गए । शीघ्र ही सातार-नट उत्तर प्रदेश और पंजाब में बालिकापी धान्योसन का माधी बन्द बन गया । काकोरी-काण्ड की भर-वकड से बचे लोग धान्याद की तलाश में भौंसी धार और श्री कुन्दगसास जो काकोरी-काण्ड के बचे हुए सागों में न० १ बहे जाते थे

आजाद से यही सातार-तट पर मिसे घोर सुगठन का भावी कार्यक्रम यहीं बना । आजाद इस समय कहे जाते थे न० २ ।

डिमरपुरा में ब्रह्मचारी हरिदत्तजी की एक अग्नि-परीक्षा हुई और उसमें वे फस्ट क्लास फस्ट पास हुए । गाँव की एक 'रमणी' उनके पीछे हाथ धाकर पड़ गई । जब कान्ता-कटाव विधियों ने उनको जरा भी विवसित नहीं कर पाया तो रमणी की अश्रुसरिता की वाढ़ उन्हें बहा देने को बड़ी और उसासों की आँखियाँ उन्हें उठा देने को पसी । परन्तु वे एक पहाड़ की तरह अडिग रहे । न हुमा वह पुगना सतयुग पता व हापर नहीं तो आजाद को कामजिन् की उपाधि इन्द्रसोक से अवश्य मिला जाती और कोई वास्मीकि या श्यास उनका स्वयं की प्रशंसा में काव्य रचना परन्तु आजाद हम कसि कुटिल जीवों के बक्कर में थे । जब एक रोड हास-परिहास का वक्त भाँसी में मरे पर पर ही आजाद ने अपना यह वृत्त डिमरापुरा से आकर इस प्रकार सुनाया जैसे सभी बड़े मन्त्र और मुसीबत से छूट कर आए हों तो मैं हास-परिहास करत हुए यही कहा "जापो भी पार ! बस यूँ ही रहे कामदेव को आजाद पर अपने अनियान में सफलता बबस इतनी ही भिती कि बाढ़पीत में उन्होंने मुझ से कहा "धीर किसी कष्ट से या किसी प्रसो? न स भला क्या होना जाना है ? हाँ अभी कोई कमबोरी भाई तो उसका कारण औरत-कीरत का बक्कर ही हो सकता है देव तू कविता-प्रविष्टा मान-बान का बक्कर में बहुत रहता है तू होम्पार रहता ।

ब्रह्मचारी हरिदत्तजी के ब्रह्मचर्य की अग्नि-परीक्षा का इस

सारे काण्ड पर शाम के पतुर ठाकुर नम्बरदार की कुशल घील भी धीर फिर तो वह हरिदासूर का ऐसा भक्त बन गया कि उन पर उसे अपने भाइयों से भी अधिक विश्वास हो गया। नम्बरदार की महान आजाद की प्रिय जीजी बन ही गई थी। नम्बरदार धार भाई से हरिदासूर को मित्रा कर जब ये पक्ष हो गए यह स्वयं नम्बरदार की उक्ति थी और जब उनकी तिजारी की चाबी हरिदासूर के जनेऊ में बँधी रहने लगी। नम्बरदार साहब की बन्धुके हरिदासूर की देख रेख में रहने लगीं। हरिदासूर स्वयं उनसे दिक्कार खेसने सगे तथा भ्रात्री से अपने दल व साधियों को जुता कर उन्हें भी गोसी बसाने निधाना मारत और दिक्कार खेसने की शिक्षा देने सगे। दल में गान्धी बसाने आदि में भाँसी के सदस्यों की विशेष योग्यता मानी जान लगी।

काकोरी-काण्ड के बाद क्रान्तिकारी दल के तितर-बितर भग्न मुर्दा को आजाद न सातार-शट पर बीठे-बीठे हो जोड़ लिया। पहले तो हम सोय काकोरी-काण्ड के केस की घदामत की सुमबाई और तरसम्बधी क्रान्तिकारियों की पकड़-भकड़ की खबरे अखबारों के कतरन के रूप में हफ्ते में दो-तीन बार आजाद व पास साहित्य से जाकर दे आते थे। इस प्रकार आजाद भाँसी के कई पार्टी के सदस्यों और सहानुभूति रखने वालों के सम्पर्क में आ गए थे। इनमें भाइयसदादिशराय मयका पुरकर, श्री विश्वनाथ गगाभर बँधम्पायन बासहृष्ण विधीरी वाले सोमनाथ श्री कामिकाप्रसाद अग्रवास आदि जो सातार शट पर उनके गुप्त निवास का पता था तथा वहाँ से भाग

उनके पास धाया-आया भा करते थे । इस सम्बन्ध में एक बात बड़े मार्के की है कि यद्यपि क्रान्तिकारी दल के सम्बन्ध में ऐसा कोई बड़ा कोस नहीं हुआ जिसमें दल क कुछ सदस्य सरकार से माफ़ी लेकर घरकारी इकवासी गवाह न बन गए हों और इस प्रकार अपनी देशभक्ति का दिवामा निकाल कर अपने कम के साधियों को अपनी बमबो बचान क लिए वे फौसी बड़ाने में प्रवृत्त न हुए हों । परन्तु मुझे ऐसा एक भी व्यक्ति याद नहीं आता जो सोपे धाबाद के ही सम्पर्क से पार्टी में सम्मिलित हुआ हो या जिससे धाबाद का धनिष्ठ सम्बन्ध रहा हो और वह फिर इकवासी गवाह बना हो । इसका कारण मुझे यह प्रतीत होता है कि कृषि के द्वारा या धादस बाद की भोंक में ऊपर से धपनाई गई क्रान्तिकारी देशभक्ति का दिवामा निकल सकता था और निकला परन्तु हृदय में धर कर गई धाबाद की मैत्री और प्रेम का दिवामा इतनी जल्द नहीं निकल सकता था । देशभक्ति और इकसाब के स्वप्न भसे ही बमबोरी धाने पर मिथ्या प्रतीत होने भगें परन्तु धाबाद का प्रेम और भाईचारा एक ठोस वास्तविकता होती थी, नित्यप्रति के धनुभव की बात हाती थी, दूर की धस्पष्ट धादस की बात नहीं हाती थी । धाबाद के व्यक्तिगत व्यवहार में सब्रयी भारतीयता इतने शुद्ध रूप में होती थी कि फिर धाबाद क छिमाफ पुसिस का कोई भय या प्रलोभन कुछ नहीं कहमवा सकता था । साधियों के हृदय में देशभक्ति की भावना के, क्रान्तिकारी वीरता के धादस की भावना के धास पास धाबाद का धारमोयतापूर्ण सम्पर्क एक मुहड़ पड़ बन

जाता था जिससे हृदय में देशभक्ति और बीरता की भावना
 बाबाबाब न होकर सुरक्षित बनी रहती थी

आजाद को डिमरपुरा में कुछ दिनों में ही घब घाघा
 कम्बल कमर से बांधे और घाघा कम्बों पर बासे हुए सातार
 लट बासी बाबा जी बने रहने की भावश्यकता नहीं रह गई ।
 घब वे मम्बरगार के भैया थे—घोली कुरते से संस । घब वे
 दस की एक साइकिम से डिमरपुरा से भ्रंसी और भ्रंसी से
 डिमरपुरा को एक करते रहते थे । जब वल पुन सगठित हुआ
 तो आजाद का इधर-उधर सभी जगह भान-जान की
 आवश्यकता पड़ने लगी । जाकोरी के फरारों में केवल यही
 बच थे बाकी सब पकड़े गये थे । अतएव स्वाभाविक रूप से दस
 का नेतृत्व इन्हीं के हाथ में था । पंजाब से नगर्तसिंह सुखदेव
 आदि और उत्तर प्रदेश के साधी शिब बर्मा कुन्दनमाल,
 विजयकुमार सिन्हा सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय आदि के साथ सम्पक
 स्थापित करके उत्तर प्रदेश और पंजाब में आजाद ने दस का
 पुनगठन करा लिया । साथियों की माँग हुई कि आजाद सब
 भ्रंसी छाड़ कर साहीर दिम्सी धागरा कानपुर बनारस
 आदि शहरों में बागी-यारी से रहें और हर जगह क काम का
 निरीक्षण और संचालन कर । वे काम से हर जगह जाने-माने
 लगे परन्तु घपना हैबबार्टर उम्हने भ्रंसी का ही रक्खा ।
 इस सम्बन्ध में ब्रह्मचारी आजाद का घपने साथियों की
 अनेक सुहसबाजिया का दिवार होना पड़ा था । आजाद सब
 दस में पण्डित जी क नाम से पुकारे जाते थे । पण्डित जी
 किसी न किसी बहाने जब मौका मिलता, तभी भ्रंसी बस

घात वे । इससे परेशान होकर एक बार भगतसिंह ने भुंभुमा कर मुझ से कहा था— 'भरे बार पता तो लगा पण्डित जी ने भूँसी में कोई डोस फँसा रक्ता है क्या ?

एक बार सातार-सट पर रहते हुए आजाद एक अन्य साधु के साथ भूँसी से सौट रहे थे । पुलिस के दो सिपाहियों ने इन्हें रोका और घाने पर घसने को कहा । सिपाही भी खूब ये—सम्भवत आजाद की हुलिया और इन्हें पकड़ने के लिए सम्बन्ध इनाम की बात उन तक भी आ पहुँची थी । वे इन्हें रोक कर बोल 'क्यों तू आजाद है ? ये बिना चौंके या सक-पकाए बात निपोरते हुए मास— हैं हैं आजाद जो है सो तो हम लोग होते ही हैं । हम तो आजाद ही हैं हमें क्या बघन है बाबा ? हनुमान जी का भजन करते हैं और ध्यानन्द करते हैं । हैं हैं । और भी बहुत सी बातें हुई । इन्होंने बहुत टासा हनुमान जी को घासा चढ़ाने में बिलम्ब होने की बात कही । हनुमान जी के सम्भावित कोप से काँप कर दिखाया । मगर वे पुलिस वाले न माने और इन्हें घाने पर घसने के लिए मजबूर ही करने लगे । कुछ दूर तो आजाद बड़ी नम्रता से उनके साथ हो भी लिए मगर जब देखा कि व किसी प्रकार मालत ही नहीं तो फिर य सौट पड़े और हड़सा स बोस— 'मुम्हारे घाने क दारोगा स हनुमान जी बडे हैं । 'मैं तो हनुमान जी का हकम मानूँगा सुम मामा अपने दारोगा का ।' इनकी बगली हुई घाल देसकर वे पुलिस वाल सहम कर रह गए । हनुमान जी बडे हैं या दारोगा इम सम्बन्ध में उन्हें मफ ही संभा रहा हा परन्तु उनकी घण्टी किस्मन ने उन्हें यह

सुबुद्धि प्रदान कर दी कि यह 'हनुमान भक्त' उनसे अवश्य तगड़ा है और इससे अधिक उलझना उनके लिए ठीक न होगा। वे देखते रह गए और वे एक बार पीछे मुड़ कर देखे बिना अपने हनुमान जी को बोला बढ़ाने चले आए।

साठार डिमरपुरा में एक हत्या हो गई। कुछ डाकुओं के भी पास के जंगल में छुपे होने का संदेह पुलिस को हो गया और जाँच-पड़ताल और पूछताछ करने के लिए पुलिस की दौड़ भूप वहाँ बढ़ गई। आजाद मन्वरदार के भैया के रूप में वहाँ सुरक्षित ही थे। मन्वरदार के साथ इन हरिषंकर से भी पूछताछ हुई। पुलिस ने इनका ठौर-ठिकाना भी पूछा। इन्होंने गम्भीरतापूर्वक और बड़ी शक्ति से उत्तर दिया— ठौर ठिकाना मसा साधुओं का होता ही क्या है इसी सब क्लमट से विरक्त हो कर तो आजाद ब्रह्मचारी रहने का घठ लेकर सब कुछ छोड़ दिग है, घठ के रूप में ही। ठौर-ठिकाना एक साधु से नहीं पूछना चाहिए, इससे उसका घठ भंग होता है आजाद ने फिर साठार और डिमरपुरा को छोड़ देना ही ठीक समझा। वे मन्वरदार बन्धुओं को समझा-बुझा कर चले आए और मईसी में मारटर छदनारायण ने इन्हें मई बस्ती मुहल्से में एक मोटर डाइबर थी रामानन्द जी क वहाँ रक्ता दिया। रामानन्द जी को अपना यद्दा भाई बना लेने में आजाद को बड़ी देर नहीं लगी। रामानन्द के साथ वे एन मोटर कम्पनी में काम करने लगे।

मईसी में आजाद ने काँचस नेठाओं में श्री १० वि० पुलेकर और श्री सीताराम भागवत से भी अपना सम्पर्क स्था

पित्त कर लिया और ये सोग बनती सहायता आवाद करे दिया करते थे । आवाद थी आ० यो० लैर से भी मिले थे । आवाद ने भीसी को क्रांतिकारियों का एक हड़ गढ़ बना लिया । पार्टी के सदस्य और सहायभूति रखने वालों की संख्या भी पर्याप्त हो गई ।

आवाद काकोरी-काण्ड के मुकद्दमे में फ़रार अभियुक्त घोषित किये जा चुके थे और उन्हें पकड़वाने वाले के लिए सरकार द्वारा हजारों रुपया के इनामों की घोषणा हो चुकी थी मगर आवाद बड़े हल्के दिल से भीसी में एक मोटर कम्पनी में मोटर का काम सीधे रह चुके थे । वे मोटर बसाने की परीक्षा भीसी के पुलिस सुपरिन्टेन्डेण्ट को दे आए और उससे मोटर ड्राइवरी का साइसेंस भी ले आए ।

सुदेनकाण्ड मोटर कम्पनी में काम करते हुए एक दुर्घटना हो गई । शक्ति का जो काम कोई न कर सक उसे अगर आवाद न करें तो आवाद ही कैसे ? एक मोटर का हैण्डिल समा कर सब बक गए, पर वह किसी से समझा ही न था । तब आवाद कमर कस कर भागे आए । लोगों ने बहुत मना किया, परन्तु अपनी शक्ति को दी गई चुनौती अस्वीकार करना आवाद जानते ही न थे । उन्होंने खोर से हैण्डिल मारा और वह बड़ी शक्ति से बक हुआ । आवाद के हाथ की हड्डी टूट गई । बड़ी पीड़ा हुई । सोप सुरस इनकी धत्पतास से गए । वहाँ उन्हें अमोरोकाम दिया जाने लगा । आवाद बड़ी मुसीबत में पड़ गए । ये कई लोगों को अमोरोकाम की बेहोशी में एसी बातें बकते सुन चुके थे, जिन को वे सुपाए रखना चाहते थे

घीर होण की हालत में कभी उन्हें जवान पर न लाते । घाजाद को सका हुई कि कही बेहोशी की हालत में उनकी भी यही वधा हुई तो गजब ही हो जाएगा । घाजाद ने क्लोरोफार्म लेने से इन्कार कर लिया और बिना क्लोरोफार्म लिए ही घाप हट्टी पुड़वान को तैयार हुए । मगर भला डाक्टर कब मानने वाला था । उसने एसा करने से इन्कार कर दिया । ये भी ऑपरेशन की मेज से उतर आए और बोले 'रहम दीजिए किसी गबरिये से ही ठीक करा सूंगा । वे साग बिना क्लोरोफार्म दिए ही हट्टी बैठा देते हैं । मगर मित्रों ने इन्हें मजबूर कर दिया । साधार इन्हें क्लोरोफार्म लेना ही पडा । क्लोरोफार्म देते समय डाक्टर न इनसे कहा— 'धब राम राम कहते रहिये । ये भुंभसाए ता वे ही पोका भी घसल्य हा रही थी । बोले— 'ओ ही धब हाब टूट गया है और दद हो रहा है तो राम राम कहूँ । मुझे खुदा से भी धिधियाना नहीं आता । डाक्टर भी भस्साया— 'घबखा ता 'हाय हाय' ही कीजिए ।' क्लोरोफार्म लेते हुए ही घाप बोले— 'हाँ हाय हाय करना इतना समत न होगा । अन्तत गिनती गिनन पर समझीता हो गया और काफ़ी क्लोरोफार्म लेने के बाद घाजाद बेहोश हुए ।

हाप की हट्टी तो डाक्टर ने बैठा दी परन्तु जिस बात की घाजाद को घाघका थी वह शायद कुछ ही गई । घाजाद जब होश में आए तो देखा कि डाक्टर अब उनके प्रति पहल में अधिक सज्जावना से बोल रहा है । उसने कहा— तुम्हारा हाय अब ठीक है । फिर मत करो ।

घाटा करता है। इसका उपयोग तुम अपने देश के हिम में वीरता से करोगे। यह बात सन् १९२७ की है। तूही बैठ्या घाने के बाद जब आजाद ने यह घटना मुझे सुनाई तो उस समय मैं इतना कल्पनाहीन था कि मैंने उनसे यह भी नहीं पूछा कि डाक्टर कीन था हिन्दुस्तानी, एकलौत इण्डियन या फ्रेंच ? जो भी हो यदि उस डाक्टर को बाद में यह पता चला होगा कि जिस हाथ का उसने उस दिन बैठया था और उसे देशहित में वीरता से प्रयुक्त किए जाने का अनुरोध किया था उस हाथ ने क्या पराक्रम दिखाया तो उसका हृदय बहुत उबलित हुआ होगा। और यदि वह भारतीय रहा होगा तो क्या आजाद के पराक्रम में उसने अपने को भी सामीप्य म धनुभव किया होगा ?

हम सांग मीसी के साथी उस समय १७-१८ बंध के धनुमवहीन घस्तहृद मीजवान ही तो थे। उपन्यास पढ़ते समय हम सोच जाते जितने भायुक हो जाते हैं उपन्यास के बीर नायक से हमें जाहे जितनी सहानुभूति हो जाती हो, और उस कास्पनिक नायक की कष्ट में सहायता करने की हमारी जाहे जितनी इच्छा होती है परन्तु व्यवहार में हम बड़े ही हृदयहीन—हृदयहीन नहीं ता कल्पनाहीन बबल्य थे। आजाद का हाथ टूट गया। उन्हें जितनी पीड़ा हुई होगी उन्हें उठने-बैठने में कितना कष्ट हुआ होगा आदि बातों की हमने कोई विशेष चिन्ता नहीं की। टूटा हाथ फुलस्मिग (भोली) में डाले आजाद स्वयं एक दिन मुझ से मिलने मेरे घर आए। मैं दरवाज के सामने सबक पर सड़ा अपने एक सहपाठी से बातें कर रहा था। आजाद हमारे

पास न आकर दूर दरवाजे पर खड़े हो गए। मैं इतना कल्पना हीन था कि आजाद टूटे हाथ की पीढ़ाभरी भोमी सम्हाले खड़े रहे और मैं अपने मिथ से हँसी मजाक का बाते करता रहा। आखिर सन्न की भी हव होती है। आजाद वहीं से बापिस चल दिए। मैं बुझता ही रहा पर वे बापस न मुड़े। तब वहीं मुझे लगा कि मुझ से कुछ अनुचित व्यवहार हो गया है। न जाने किस आवश्यकता से वे आये होंगे। उस दिन उन्हें कुछ जाना खाने की भी मिला होगा या नहीं। दूसरे दिन आजाद फिर आए। मैंने सहेमे हुए पूछा— 'कल आप जमे क्यों गये थे?' वे कुछ देर चुप रहे फिर बोले 'जमा न जाता, तो क्या करता? गंदे कपड़े पहने हैं हफ्तों से नहाया नहीं है, बदन से बदबू आ रही है। इस गन्दे कपड़ों को पहने ऐसी गन्दी हासल में तुम्हारे पास तो आ सकता है मगर तुम्हारे मिर्चों क बीच थोड़ा ही लड़ा हो सकता है। जर, मैं तुम्हारे हृदय को पहचानता हूँ। मेरी उपेक्षा करना तुम्हारा उद्देश्य नहीं था। परन्तु फिर भी तुम्हें समझना चाहिए। अपनी ही धुन में न रहा करो। कोई और होता तो बहुत बुरा मामला।' मैं बहुत सज्जित हुआ। परन्तु इस अप्रतिम हासल में उन्होंने मुझे बहुत दूर तक नहीं रहने दिया और बड़े ममत्व से आश्रय-घातों में लगा लिया।

आजाद भाँसी में हम सब साथियों के घरों में भी बिस्तुल चुल-मिल गए। साथी सदातिबराब मसलापुरकर, विरचनाप बगम्वायम और मरे पर को तो उन्होंने यही रूबो से अपना घर बना लिया। मेरी माँ के वे प्रिय 'बेटा' बन गए। माँ के

शान्ति में 'सुखील लड़का तो सब हरिवांकर है, सब बिसुन्नाब और भगवान के ता ऐनई गंमार है। माँ को सुण रखने में ब बड़ बसुर ये। इस बात की बात में ही रहते थे कि माँ मुझ से कुछ काम करने को कहें और मैं अपना कर्त्तव्य तो वे उसे तुरन्त कर जाते। ऐसे अवसर पर जब माँ से मुझ 'छाप' मिमता और आजाद को आशीर्वाद तो मुझे आजाद पर बड़ा क्रोध आता। आजाद मेरी माँ के सदासिख की माँ के और जहाँ कहीं भी वे गए सब कहीं माँघो के आदर्श बेटे बन गए। मेरी माँ की दृष्टि में यदि सब सद्गुण किसी में थे तो उनके हरिवांकर में।

मेरा घर पक्का सनातनधर्मी था, अतएव आजाद मेरे घर पक्के सनातनधर्मी थे। माँ मुझे 'आरियासमाजी पना' और 'किरस्तान पना' के लिए जासा करती थी। माँ के सामन मुझे आजाद से अपने 'धरम-करम' से रहन का उपदेश बड़ा-बड़ा सबदा सुनना पड़ता था। आजाद कभी भी मेरे घर पर माँ के बेसते बिना हाथ पैर भोए पानी तक न पीते थे। पानी पीते भी बं ता मिट्टी के बतन का नहीं ताँवे या पीतल के पात्र का, ठण्डा पानी पीना होता था तो वे मेरे कमरे में चुपक से पाते थे। यही आजाद कायस्थ मास्टर रुदनारायण के घर अपनी भावज (मास्टर साहब की पत्नी) के हाथ से सिबडी की तपेसी छोन उसमें हाथ डाल कर खाते थे।

आजाद के भोजन की व्यवस्था के लिए कभी हम सोपों को अपने घर से रोटियाँ पुरानी पड़ती थीं। भोजन मुझे माँ के हाथ बोके में बैठ कर मिलता था। रोटियों के बर्तन तक

तो मेरी पहुँच थी ही नहीं। चौके के अन्दर जो एक भीतरी चौका रहता था उसकी रेखा तो मेरे लिए सफ़मण रेखा थी। सीता जो चुरान के लिए राखण भसे लक्ष्मण रेखा का उत्संभन कर जाता तो कर जाता मगर घर में उस समय सनातनी चौके का इतना घातक था कि मेरी अन्तिकारी प्रगतिशीलता भी भीतरी चौके की 'माता रेखा' का उत्संभन नहीं कर सकती थी। इस माता रेखा को साँध कर रोटियों के वर्तन में से दो चार रोटियाँ पुरा सेन का साहस में नहीं कर सकता था। बस, यही एक रास्ता था कि बहुत सी रोटियाँ माँ से अपनी थाली में परोसवा लूँ और फिर थाली उठा कर अपने कमरे में बस दूँ, फिर कुछ में खा लूँ कुछ आजाद के लिए बचा लूँ। यह उपाय भी आजाद ने ही सुझाया था। जब मैंने ऐसा किया, तो माँ भयकर रूप से माराज हुई। एक रोज तो धान को ही नहीं मिला। मगर मैं अपनी 'जिन्' पर डटा रहा— 'चौके में पुँघा बहुत होता है। मेरी धालों में रोए हैं। कालेज के डाक्टर ने धुँए से बचे रहने को कहा है। मुक्त घरघा थोड ही होना है। लाना दो चाहे मत दा मैं धुँए में हगिज नहीं लाऊँगा। यह तक भी आजाद का सिखाया हुआ था। अमा बीन माँ चाहेगी कि बेट की धालें खराब हो जाएँ! आजाद पर धाए ता माँ ने उनस शिक्षायत की। माँ को मुनामे क लिए आजाद ने भी मुझे भिड़का और चौका-बिज्ञान पर एक लवचर दिया। जब मैंने अपनी धालों का तक पेघ किया तो आजाद निरुत्तर हो गए और बोले— 'धाँसा की बात तो बड़ी माजुब होती है मगर फिर भी सेकिन हाँ माँ तुम्हारे चौके में पुँघा

तो मरता रहता है उससे घालें तो जकर छुराव हो जायेंगी। कोई बात नहीं है। साक सुयर वग से भण्डी तरह से नहा भी कर चौक क घाहर खा मन दिया करो। घालिर घापद घरम' भी तो होता है। माँ का भी यही चाहिये था कि घाजाद इसे 'घघरम' न समझे। कट्टर घाह्यग हागियार घादध भेटा हरिषकर ने जब मान लिया तो माँ क लिए तो मानो खुदा न ही मान लिया। और राटिया की चोगे करने का मेरा माग खुल गया। मुझ भणिक भूल लगती देख माँ और प्रसन्न होतीं। भाइ सदाशिव और बिस्वनाथ भी इसी प्रकार घर से रोटियाँ चुरा माते। घाजाद को इन प्रकार चुराई हुई राटियों से पेट भरते देख एक बार मेरी भावुकता उमड़ी और मुझे र्मानि हुई। मैंने कहा 'हम सब वठ घायम ने तरह-तरह का भोजन करते हैं और आपको प्रायः नित्य हो इसी प्रकार वाली सूपी रोटियाँ और घपार से पेट भरना पड़ता है। तो घाजाद बोसे घरे बेबकूफ हुया है तीन घर से तीन तरह की रोटियाँ घाली हैं। किसी के यहाँ म घाम का घपार किसी के यहाँ से नोहू का। तेरे घर स करेले का घपार तो मुझे बहुत भण्डा लगता है। कभी-कभी दाक भाजा भी तरह-तरह की मिस जाती है। इतना विविध प्रकार का पाना खाता है, और क्या चाहिये? देखता नहीं कैसा भैमानुर हा रहा है और तू बही दुट्कट्टू।' मैंने कहा "मास्टर माह्वर के यहाँ तो घाप खुसकर सब के साथ भोजन कर सकते हैं। बही निममिष प्रबन्ध क्यों म किया जाये? ता बाल, "अब तू इस गिट-पिट में म पड़ भमी तू नहीं समझता। किसी क यहाँ रोब पाना

खाना अच्छा नहीं। अभी वहाँ मुझे बड़े आदर प्रेम से खाना मिल जाता है। तुम लोगों से तो वहाँ चोड़ा बहुत परदा भी होता है मुझ से नहीं होता। मगर रोब खाना खाने लगने पर वह बात नहीं रह जायगी। अभी तू यह सब नहीं समझेगा। तू इस खिट-पिट में न पड़े, मैं बड़े मजे से खाना खा लेता हूँ और मस्त रहता हूँ।

एक दिन की माद नहीं भूलती। आजाद, सदाशिव, वसम्पायन और मैं अपने कमरे में बैठे एक ही जाली में राटियाँ खा रहे थे। इतन में मेरा छोटा भाई जिसकी आयु उस समय लगभग ६-१० वर्ष थी सहमा वहाँ आ गया और इस घोर अघर्म के दृश्य को देखकर अवाक रह गया। आजाद ने और बिना कहा ही अबरन गसक नाचे गुटक कर कहा—“सो नहीं मानते? अभी बुझाता हूँ माँ को। राधे! जरा बेस इन भगिमा को! म्लच्छ कहीं के। एक ही घाली में खान बैठे हैं। जम स सम्मन्न रहा हूँ मानते ही नहीं। जल्दी जा तुला तो माँ को। मतसब यह कि यह सिद्ध हो गया कि आजाद इस म्लच्छपन में दारीक नहीं थे दुष्ट हम ही तीनों थे। भाई का और माँ का भी यही प्रतीत होने में कोई बाधा नहीं हुई और अन्त तक माँ को यह हड़ बिश्वास रहा कि हरिशङ्कर अम-कर्म का पूरा पक्का शाहूण बेटा है। बाद में जब हम लोग पकड़े गए और गुफिया पुलिस ने मर भर की बहरी पिस टाली तब माँ का बड़ा आश्चर्य हुआ। और जब उन्हें मासूम हुआ कि हरिशङ्कर ही हम लोगों का गुण था तो उनका बिस्मय का ठिकाना न रहा। ती साल बाद मर दीप से पूरे घान पर जब

माँ स्नेह-विह्वल होकर हरिश्चन्द्र के पराक्रमों को मुझ से सुनती तो धीमूँ पोंछते हुए कहती— 'ए भगवान् ! जे बे पुन हूते वामे ।

उस समय मेरी उम्र केवल १६-१७ वर्ष की घोर धाजाद की २०-२१ वर्ष की ही थी । अपने माँ-बाप की नजरों में मेरा सदा एक भोला अनुभवहीन छोकरा हाना स्वभाविक ही था परन्तु धाजाद ने एक प्रौढ़बुद्धि अनुभवी व्यक्ति की प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी । चूँकि धाजाद मेरी माँ के भी बड़े बेटे बन गए थे, इसलिए जब रात भर घर से बाहर रहन घीर दस के किसी कायबग भाँसो से बाहर आने के लिए मुझे माँ-बाप की आज्ञा की अपेक्षा हरिश्चन्द्र को अनुमति लेना पर्याप्त होता था । जब किसी काम के लिए मेरा यह कह देना कि मैंने हरिश्चन्द्र से पूछ लिया था जाफ़ी होता था । जब हरिश्चन्द्र माँ से उसकी तारीफ कर देते थे तो माँ को पूर्ण विश्वास हो जाता था कि मैं किसी तरह की शरारत से नहीं पकमे-लियने या किसी भले काम के लिए ही घर से बाहर रहता हूँ । यह अधिकार भी धाजाद ने बड़ी कृपालता से मेरी भलाई के लिए मेरी माँ से भी अधिक बिता रखने का विश्वास पैदा करके प्राप्त किया था ।

जब रात भर मैं धाजाद के साथ घर से गायब रहता तो सबेरे धाजाद मुझ से कहते कि ठहर जा, पहले मुझे घर आने दें । वे मेरे पहले ही घर पहुँचते और माँ से पूछते कि मैं कहाँ हूँ । माँ मेरे ऊपर दापों की बर्पा करती और उन्हें बताती कि मैं रात भर घर से गायब रहा हूँ और अब तक घर नहीं

घाया है। आजाद उस समय धीरे-धीरे चिन्ता का अभिनय करते धीरे कहते— 'रात भर भर से शायद रहना तो बहुत बुरा है। मैं आप उसे अच्छी तरह से डाँटती क्यों नहीं ?

मगर मैं कुछ परीक्षा-बरीक्षा की तैयारी की बात होगी। जल्द किसी सहपाठी के घर रात को पढ़ते-पढ़ते वही सा पीकर गो गया होगा। अधिक रात हो जाने के कारण उसके साथी के माँ-बाप ने अकेला न ध्यान दिया होगा। हाँ न हो सीपरी बाजार में हरदास के घर गया होगा। इसलिए मैं अभी पता लगा कर लाता हूँ। आजाद साइकिल उठा कर चल दले फिर मुझे ढूँढ कर घर ल आठ धीरे मैं के सुपुत्र करते हुए कहते— देखा मैं कहा था न मैंने ! जनाव हरदास के यहाँ तब तक पर पढ़ मा रहे थे। मैं न पहुँचता तो न जाने कब तक य तो मैं न पढ़ सात रहते धीरे आप यहाँ सुपुत्र की चिन्ता मैं दुबसी होती रहती। अरे भगवान् तुम्हें अपनी माँ पर जरा भी दया नहीं आती ? तुम पढ़ने जाने का घर कह तो जात। भसा कोई राजता है ? खूब पढ़ो कोई मना करता है ? फिर यह कहाँ की सुटिमानी है कि रात भर पढ़ो धीरे मगर जय पढ़न का अभिसी समय होगा है सब सो आधा ? बड़े मूख हाँ ! घर पर कह कर जाया करो। अरे मुझ से हो कह दिया जाता तो मैं घर कह जाया। मैं चिन्ता तो न करती। आप तो यहाँ पूनियाँ डाँट कर मा रहे इसर मैं ने रात का गाना हा नहीं गाया। हो न हुए ? मतलब यह कि मैं मुझे जरा भी डाँट न पानी जा कुछ डाँट-फटकार धाव-यक हानी हरिष्ठाहर ही मुझे मुसा दन। ऐसा नाटक प्रायः होता

रहता। पहले तो मुझे लगता था कि मैं हूँस पड़ूँगा परन्तु धीरे-धीरे मैं भी एक कृतज्ञ अभिनेता बन गया। बाद में जब बालेज में माटक में प्रस्ता अभिनय करने पर मुझे प्रथम पुरस्कार मिला, तो मैंने उसे धारावाद व ही शरणों पर यह कहकर रख दिया कि अभिनय की ज़रूरत भी आप ही मेरे गुण हैं।

एक बार भाई सदाशिव के घर में ऊपर झटारी में धारावाद हम लोगों को एक नई पिस्तौल और उसको बसान करने, धादि की बातें दिखा रहे थे। सदाशिव का एक बेटा-दो साल का मानजा भी वहीं पर था। यों तो और सब तरफ़ के किवाड़ बन्द करके साँक्स लगा दी गई थी ताकि सहसा घर का कोई व्यक्ति वहाँ घसा न आए, परन्तु यह समझ कर कि यह बच्चा अभी क्या समझे उसके सामने ही पिस्तौल निकाल लिया गया और उसको सब क्रियाएँ धारावाद न हम लोगों का समझायीं। बच्चा सब देखता रहा। इतिहासक ऐसा हुआ कि उस बच्चे के पिता याना भाई सदाशिव के बहनोई ने वहाँ धाना चाहा और उनक लिए बुरी सासने के पहले यों ही एक तर्किक के नीचे पिस्तौल छिपा लिया गया। मगर जैसे ही सदाशिव के बहनोई कमरे में घुस ता वह बच्चा किसक के तुरन्त बाला 'काना बन्दूक !' अब हम लोग सब सन्न हाकर रह गए कि यह बच्चा क्या शकव बाने वाला है। हम लोग तो एक दूसरे का मुँह देखने लग परन्तु धारावाद तुरन्त उस बच्चे से खेस क सहजे में निड़ गए ही बसाभा बन्दूक बसायो। और आप अपन बाँध हाथ की मुट्ठी को बन्दूक की नसी का धावार का बना कर और उसक पीछे घँगूठे में दाँव हाथ की

तर्जनी से घाँटा देकर मध्यमा और ध्रौंठे से बुटकी बजाकर
 मूँह से बड़ी ओर से बोले 'धूँङ्ङ' । फिर जिस तकिये के
 नीचे पिस्तौल छिपा ली गई थी उस पर आज़ाद स्वयं बैठ
 गए और आपने बच्चे को गोद में उठा लिया उसका मूँह
 तकिये से दूसरी दिशा में करके बोले 'तुम भी बनावो बबूक ।
 और आपन उसकी मुट्ठी से भी उसी प्रकार बबूक बनवा कर
 बुटकी बजावाई और कई बार बड़े ओर से बोले 'धूँङ्ङ
 धूँङ्ङ' । बच्चा खेस में सग गया । नहीं तो तकिये के नीचे
 बन्नूक होम का इशारा वह कर ही रहा था और यदि कहीं
 सदाशिव के बहमोई उस दिन उस पिस्तौल को देख लेते तो
 जाने क्या-क्या उपद्रव न हो जाता । और कुछ न होता तो इतना
 तो असम्भव ही होता कि फिर सदाशिव पर अमेकों पाबन्दियाँ
 सग जातीं । हम सब कान्तिकारियों में शामिल हैं इसका पता
 उनके घर वालों को पस जाता और फिर वे मुअस विद्वानाथ
 से और आज़ाद से उन्हें मिसने सब न देना चाहत उनके
 घर के दरवाजे तो कम से कम हम लोगों के लिए सदा
 के लिए बन्द हो जाते । परन्तु ऐन मौक पर सूझ से काम
 ले जामा हो तो आज़ाद की लूधी थी । उन्होंने बच्चा को
 हाथ की मुट्ठी से बनी बबूक के खेस में उलझाए रक्ता ।
 हम लोगों की माड़ी तो तब बसने लगी थी मगर आज़ाद
 मिरे बचपन से उस बच्चे के साथ खेस में उलझ गए । उस
 बच्चा के पिता जी को आज़ाद ने सन्देह भी नहीं होने दिया
 कि बच्चा वास्तव में एक असली पिस्तौल अभी देन चुका है
 और वह उसी के तकिये के नीचे होने का इशारा कर रहा था

और मुँह से भी कह रहा था "काका दम्बुक ! धस्तु उस बच्चे के पिता जो बच्चे को जाना खिमाने के लिए सिखा ले गए। तब धाजाद बोले "बेसा बच्चे कितना गड़बड़ कर डालते हैं। बच्चे तो बच्चे कभी किसी कुत्ता-बिल्ली के सामने भी गुप्त काम नहीं करना चाहिए। तुम साग वस सब मुँह बाये क्या रूढ़ गए थे ? सम्मों ऐसी क्यों बना सते हा मानो कोई बड़ा गुनाह करते हुए पकड़ लिए गये हो ? चाहिए था उस बच्चे को दम्बुक की बातों में बहनाते गोब में उठा के बाहर ले जाते । इसके बाद से फिर कभी धाजाद ने बच्चा के बारे में भ्रूस नहीं की उनसे बे बहुत सावधान रहने लगे। एक बार जब फिर ग्वालियर में मेरे सम्पक स बच्चों के कारण गड़बड़ हुई और उसे धाजाद ने ही सम्हाला सब लो फिर धाजाद मेरे ऊपर बहुत विगडे। लखर (ग्वालियर) में जमकगज मुहल्ले में हम सागों की एक बस फक्टरी थी। वहाँ हम सागों की पार्टी के एक सदस्य थी गवानन सदाशिव पोतवार जो विक्टोरिया कालेज में बी० एस०सी० (फाइनस) के विद्यार्थी थे रूढ़ करत थे। भ्रूसी से परारी की हासत में मैं भाई सदाशिव धाजाद और बंसाधपति जो बाद में दिल्ली पढ्यत्र कस में प्रभूबर हुआ वहीं रह रहे थे और बस का मसाला तैयार कर रूढ़ थे। पडोस में लो बच्चे रहते थे उनकी लोलमी धाजाद बड़ी प्रण्ठी मगतो और वे बडे मज में गाते थे। मुझे बे बडे प्रण्ठे मगतो थे प्रत एव बे कभी-कभी हम सागों के घर में धा जात थे मैं उन्हें कुछ सामे लो मीटा प्रखर दे दिया करता था। मेरा तकं था कि बच्चों के घात-जाते रहने स सोमों को किमी प्रकार का

सम्बेह न होगा। आजाद के वहाँ भा जाने क पहले ही बच्चे वहाँ आते-जाते रहते थे। एक रोज हम सब अन्दर से कुब्जी बढ़ाए मोटर बम का तमाम सामान पैसाए बँठे थे घीर बदन पर केवल एक सैंगोटी मात्र लगाए सब कपड़े (आग लग जाने का सावधानी बरतते हुए) उतार कर काम कर रहे थे घायब फ्लूमीनेट घाफ मरकरी बना रहे थे। मकान किराए का था। मकान-मानिक या उसके किसी रिश्तेदार के ही थे बच्चे थे। मकान-मानिक या उनके वे रिश्तेदार मकान में सहसा बस आए। कुब्जी तो लगी थी। इसके पूब ही कि हम लोग सब सामान जल्दी-जल्दा हटाकर डंग से घासी-गुरता पहुँच सते उन बच्चों ने अपने पतल हाथ बिवाडा में डाल के भीतर की कुब्जी पाल सी घीर किमकत हुए चले आए। बम बगामे का सामान तो हम साग इधर-उधर कुछ घाड में कर पाय मगर ये विष्कूस जेवाटो लगाए मग-गड़ग। इसके पहल ही कि बच्चन घीर उनके पीछे उनके पिता जी दरदरात आगे बढ़ चले घाठ आजाद ने सहमन बापत-बापत एक मटक का पानी गेसा सरह से चौक में फना दिया कि वे बच्च घीर उनके पिता जी वहीं ठिठक कर गड़ रह गए। आजाद बोले 'घाइए! बराठहरिय! कुछ विष्कू दच्छ निपरा हमनिग हम साग सफाई कर रहे है। आ जाइए निजस घाइए' बच्छा ठहरिय। आजाद ने उनका उममा सिया इधर सब तर हम साग सामान ठर कर घाती सपेट चुके थे। उन महागम का किमी प्रकार का सम्बेह न हा पाया। जब व महागम मकान बल-दाग कर चले गए तब आजाद घुम पर बिमड़े तूने हा इन बच्चों को सपका रता है, से वे हाथ डाल

कर कुण्डी खोम कर घुसे पस घाए । तू ज़रूर कुछ गड़बड़ करा
 डालेगा । अभी बड़े पिकरिक् घना रहे होठ और उस में से चुर्चा
 उठ रहा हाता तो ? किस्ती या कहा कि बच्चो स सावधान
 रहा कर मगर ध्यान ही नहीं रखता । जो दूसरे के अनुभव
 से स्वयं समझ ल वह बुद्धिमान जो अपने अनुभव से ही समझे
 वह मूर्ख जो अपने अनुभव स भी न समझे उसे क्या कहा जाए ?
 क्या कहें तुम स ! अस्तु मैं उठा और मैंने भीतर की कुण्डी
 ठोक-पीट कर कड़ी कर दी । आजाद से कहने का साहस तो
 मेरा न हुआ परन्तु मन में मर रही था रहा था कि दोष बच्चों
 का या मेरा नहीं है दाप है उस डीसी कुण्डो का जो अब कड़ी
 हो गई । परन्तु फिर बच्चा का वहाँ कमा-कमी आ जाना बन्द
 सा ही करना पड़ा ।

मेरे सिगने स कहीं ऐसा ता नहीं लग रहा है कि आजाद
 कुछ अफ़स वृद्ध जैसे व्यक्ति ये और उनमें उस बचपन का
 अभाव या जो स्वभाव को एक विशेष प्रकार की प्रियता प्रदान
 करता है जो थड़ा स अधिक प्रेम और भारतीयता उत्पन्न
 करता है ? आजाद स्वभाव स हा परतजामहिष्णु ये । किन्ती को
 पाई बल का काय करत बन् घात ता स्वयं भी बसा हा काम
 करके दगत और जब इन्हें विदबास हा जाता कि ये भी वैसा
 काम कर सकत हैं तभी उनका मन पड़ता । उनके साथ साह-
 क्रिम पर बढ़कर जाना एक सुमोक्ष मास सना था । यदि भूल
 स भी आपने अपना साहक्रिम उनम घागे निकाल ता ता बस
 आपकी नामत आ गई । व इम अपने लिए साहक्रिम रेम क
 अलेख्य स किन्ती आ प्रकार कम नहीं समझते और फिर आपकी

उनके पीछे साइकिल मगाते मगाते चक कर चूर हो जाना पड़ता। हम लोग के साथ भी जो उनको सब तरह से अपना गुरु मानते थे और उनकी शक्ति के जायस थे उनकी यह 'रेस' बसती रहती थी। बड़ा ध्यान-ध्याता था उनको ऐसी अनियमित अघोषित रेस में मस्ती के जिसे या छावनी के किसी घेरे सिसपाहो को परास्त करने में। फिर वे घड़ी धारमनुष्य से अपनी रेस की बात हम लोगों को धा कर सुनाते 'रह गया सुमरा फिर हपर हपर करता।

आजाद ने दम का सगठन करने के लिए मुझे ग्वाभियर भेजा था। मैं वहीं विक्टोरिया कासज में बी० ए० का विद्यार्थी हो कर टिप्री होस्टल में रहता था जो उस समय सन् १९२८ में कासज के पास ही घुसी जयह में था। कृस १० १० कमरे ही तो थे।

हास्टल के विद्यार्थियों का एक साधारण-सा बिनो यह भी था कि जब कोई नवागम्य विद्यार्थी या किसी का प्रतिनिधि वहाँ आता था तो उस के 'भूत' स डराया करते थे। इष्टर के विद्यार्थी दूर चलग होस्टल में रहा करते थे। उन्हें 'भूत प्रोग्राम' की गबर दे दी जाती थी और वे रात के लगभग १० ११ बजे 'भूत' बन कर लोगों को डराने का बहुत-सा सामान लिए टिप्री होस्टल के पास पहुँच जाते थे और तरह-तरह के अयोत्याक दृश्य उपस्थित करते थे। पेड़ पर स घेंगारे बग्गना दूर पर सभ्य सभ्य भूतों का नाच तरह तरह की बाँधे-धींकार आदि। 'भूत प्रोग्राम' के लिए हम टिप्री होस्टल के छात्र पहल से ही भूमिगत तैयार कर रखते थे। प्रतिदिन और नवागम्य छात्रों स

बड़े भय के प्रदर्शन के साथ यह कह रखा जाता था कि हम लोगों के होस्टल में सब सुविधाएँ हैं बड़ा सुन्दर स्थान है शुभी हवा है, अच्छा वातावरण है वस एक ही बड़ी खराब बात है कि यहाँ कमी कमी भूत बिसाई दे जाते हैं। यद्यपि भूतों से अभी तक होस्टल के किसी भी छात्र को कोई मुकसान, कोई बाधा नहीं पहुँची मगर इससे क्या हुआ ? डर तो लगता ही है। एक बार एक साहब का जरा धमिक तीसमारत्नी बनते थे जरा उधर को चले गए तो उन्हें फिर इतने डरों का दुखार पड़ा कि मरते मरते बचे। वस तब से यद्यपि भूत महीं घाए कई बार मगर उन्होंने कभी किसी को छेड़ा नहीं। मगर है यह जगह मुताहा ये सब बातें हम होस्टल के छात्र सीधे कभी अपने 'भूत प्रोग्राम' के धिकार से या उसके सुनते हुए आपस में ही सरसरी तौर पर कर जाते थे। कोई यों ही भूतों के प्रति अपेक्षा का भाव रखता कोई चिन्ता प्रकट करता, कोई यों ही 'होगा कुछ हमें क्या ?' का भावराही का भाव रखता। इस प्रकार हमारे 'भूत प्रोग्राम' के धिकार के मन में भय की भूमिका बाल दी जाती। रात को यथा समय 'भूत प्रोग्राम' शुरू होता और हम लोग महान् भय का प्रदर्शन करते और प्रतिधियों और मवागन्तुकों के भयभीत होने का आनन्द लेते।

आजाद मुझ से मिलने होस्टल में घाए तो यार लोगों का इन को भी भूत प्रोग्राम का धिकार बनाने को सूझी। घब में बड़े सफ्ट में पड़ गया। मैं न ता अपने साथी छात्रों से ही कह सकता था कि इसके लिए 'भूत प्रोग्राम' जसी कोई चीज महीं हानी चाहिए, और न आजाद से ही कह सकता था कि ये लोग

इस प्रकार 'सूत प्रोग्राम' करते हैं क्योंकि यदि सूत प्रोग्राम बिफस हो जाए तो साषी छात्र मुझ से बिगड़ते कि तुमने 'गहारी की तुमने पहले से ही प्रसिद्धि को बना दिया और फिर साषी छात्र मेरी दुरी गत बनाते । इधर यह भी डर सग रहा था कि यही छात्रा को कुछ डर सा वास्तव में मगा और वहीं य पिन्नीस बना बढे जा मदा इन की जेब में तैयार रहता ही था तो एक घाघ छात्र वास्तव में 'भूत' हो जायगा और फिर यही बिपत्ति होगी । फिर यह भी मूठ नहीं है कि मुझे भी कुछ कुतूहल था कि देवे हर प्रकार क सकट का सामना होगने न करने वाला यह वीर 'सूता न कसे निपटता है । अत एव मैंने छात्राद से कहा 'अपिपत्त ओ इधर एक बड़ी खराब बात है घाघ जरा सावधान रहिएगा ऐसा वसी बीज ऊपर न रलियेगा । ये होस्टल के लोग बड़ घरीर हैं । घबबर मजाक में सोगों की जेब में हाथ डाल खेछते हैं । घाघ पिन्नीस बाहर जेब में न रगिए । यही बसे कोई मज का यात है भी नहीं । मैं समझता हूँ कि पिन्नीस बक्स में बंद करके ही रात दीजिए तो अच्छा रहगा । घाघकी जेब में कहीं किसी से यों ही टटोल लिया या हाथ हो डाल दिया तो माथला गड़बड़ हो जाएगा । छात्राद बहुत बिगड़े— 'यह मज क्या बदनमोजी है ? और तमे में कुछ हो जाए ता मैं यों ही निहत्था बिना कुछ किए पकड़ लिया जाऊँ । तू छाड़ यह हास्टल बही घसग मकान से कर रह । मैंने कहा 'घब घाघ मकान जब लिया जायगा तब लिया जायगा घाघ तो परिस्थिति के अनुसार काम करना ही पडगा ।' सुनार छात्राद ने पिन्नीस मुझे दे दी और मैंने उसे बक्स में बंद करके

बाकी आजाद के सुपुर्दे कर दी ।

यथा समय भूत प्रोषाम शुरू हुआ । पेड़ पर से अंगारे बरसना शुरू हुए । कालेज के दुमबिले पर एक अस्मि-ककास सा कुछ भीमी रोसनी में बसता हुआ नबर घाया कमी दिखता कमी अोभस हो जाता । रसायनशास्त्रा की पानी की टकी पर एक लेब प्रकाश रह रह कर होने लगा । गैस प्लाष्ट क पास भी आसाएँ सहसा जमी और धान्न हो गई और फिर जलने सर्गी और हम लोगों में भयभीत होने का प्रदर्शन किया ।

गरमी के दिन थे । सब लोग बाहर लुके में आरपाई डाले पड़े सो रहे थे । आजाद वहीं पड़े थे । पहल ता वे चुपचाप पड़े रहे । जब एक साहब डर कर उतकी आरपाई पर ही गिर पड़े और कोपने लगे और उनकी चिन्धी बंध गई, तब तो आजाद को उठना ही पड़ा । उन्होंने इधर-उधर देखा । मुझ से और भ्रंसी क वो-एक जाने हुए सापियों से जो वहाँ थे उन्होंने पूछनाछ की, 'यह सब क्या है ?' हम सोम बड़ी मुसीबत में पड़ गए । आजाद को क्या उत्तर दें ! यदि हम लोग भयभीत होकर दिलायें तो आजाद हमको खुबदिस समझे और फिर हम लोग उनकी नजरों में गिर जायें । मैंने अपने आपको भयभीत तो नहीं उसजित्त अवश्य दिखाया और उनक सवालो का कि ऐसा कब हाता है, क्यों होता है पणोस में कुछ बदभास मई या औरतें रहती हैं क्या, आदि क टायमटोस जवाब देता रहा । आजाद बोले 'मैंने जस क्या पिन पिन पिन पिन करता है यहाँ जकर कुछ बदमायो है । इसकी उधर तुम लोग अक्कि-कारियों को क्या नहीं करते, यह सूत-सूत कुछ नहीं, किसी

पारारत वदमायी है । ब उठ बंठे । उन्होंने सिरहाने से घपमा
 कोट उठा कर पहना और कोट की जैब में उन्होंने परपर भर
 लिए और मुक स बोले 'बस देखूँ सानों को कौन है ।' मैंने
 समझा—सा अब किसी मूत का सिर फलता है या किसी का
 हाम-पैर टूटता है । मैंने कहा 'रहने दीजिए होगा कुछ घपने
 को क्या पड़ी है लोग बताते हैं ऐसा ता यहाँ होता ही रहता
 है । धाजाद विगड़ कर बोले 'अब बल क्या छाक होता रहता
 है देख बचारे और लडके कितने डर रहे हैं इन मूतों की बस
 नियत गुप्त ही जानी चाहिए । क्या क्या तुम्हारे मी घुटने काँप
 रहे हैं ? अब बल ! अब घगर धाजाद की नजरों में बुझल्ल
 न बनना हो तो सिबाय उनक साथ बसने ब घोर में कर ही
 क्या सक्ता था ? हुन एक पेड़ से घगारे रह रह कर बरस रहे
 थे । धाजाद बीच फ्रीन्ट में बड़े उसकी धार दलते रहे । जैसे
 ही घगारे फिर बरसने शुरू हुन उन्होंने सगाठार दो तीम
 परपर उस पेड़ पर मन्ना दिए । घगारे बरसामे का रसायनिक
 द्रव्य पदार्थ एक साथ नाथ घा गिरा । कुर्छे के ऊपर टकी के
 पास जो मूत मढ़ाका हुमा तो ऊपर ब मूत के कान के पास
 से सन् में एक परपर मन्नाता हुमा निकल गया और फिर मूत
 में बही दुबक कर सैट जाने में ही पैर समझा । जो सतन सतन
 मन्नात दो-चार परपर गिर पर ग अगल-अगल स निकल गए,
 तो समझ लिया मूतों न कि किमी विकट में सामना पड़ गया
 है । बामज के दुर्मिच्छ में जो मूत मढ़ारा हुमा और नर-कराम
 पतता मजर घाया तो दो-चार परपर उपर मी मन्नाते भसे
 गए । फिर ता कंकाम जो पहल बड़ी मजमपर गति से ठाठ में

बस रहा था भागता नजर आया। गरज यह कि पाँच वस
मिनट में ही सब सूत भाग गए। पेड़ पर का सूत कूद कर
सागा। बेचारे टकी पर पड़े सूत की बुरी हालत थी। वह
करीब ३०-३५ फुट ऊपर टंगा था और उसे सोहे की सँकरी
सीढ़ी पर से उतर कर भागना था। वह वहीं चुबका रहा।
होस्टल के छात्र कहते ही रहे 'घरे क्या गजब कर रहे हैं उधर
मत आइए उधर मत आइए, बड़ा खतरा है बड़ा खतरा है।'
भगर आजाद ने मारे पत्थरों की बर्षा के झूठों को भगा कर ही
छोड़ा। हम सोगों के पास अब इसके सिवाय कोई और धारा
न था कि सुरन्त सब खूब्य प्रकट कर दें नहीं तो एक वो
मागते हुए झूठों की सोपड़ी की खीर नहीं है। हम सब सिम
सिमा कर हँस पड़े और आजाद को हमने पकड़ लिया 'घरे
जाने भी दीजिए मारिए मत। अपने ही सोग हैं। आजाद
भी हँसने लगे और रुक गए। फिर ता सभी भूत होस्टल में
ही आ गए और भूत विजेता आजाद से मिस कर बहुत खुश
हुए। हम सोगों ने टकी वाले भूत को भी जाकर उतारा बुरी
हालत की बंधार को।

कहने की भावस्पकता नहीं है कि हमारे ये होस्टल के
साथी लोग हम दो तीन को छोड़ कर जो क्रांतिकारी पार्टी के
सदस्य हो चुके थे आजाद का सही परिचय तो जानते ही न
थे। वे उन्हें मेरे एक मित्र भौसी व हरिदाकर के ही नाम से
जानते थे। परन्तु इस भूत विजय के बाद होस्टल में 'हरिदाकर'
का अर्द्धा सम्मान हा गया। आजाद ने भी इस 'भूत प्रोबाम'

हा इस प्रकार तुम लोग सूत-बूत के एक घतिग होने की बात बड़ी अच्छी तरह लोगों को समझा देत हो तर्क और दलीलों से समझाने में कुछ नहीं होता । सूत का भय किसी के मन से निकाल देने का तुम्हारा यह तरीका बहुत ही अच्छा है । बात यह है कि सूत की असन्धियत के ऐसे दाँधार किस्से मैं पहले अपनी भाँप में देख चुका हूँ इसीलिए मैं नहीं डरा ' इन सब बातों से आजाद ने (मेरे) होस्टल-राजियों से अच्छा बराबरी का भाईसारा स्थापित कर लिया । उनके हृदय में ईर्ष्या या द्वेष की भावना नहीं जमने दी जा पराजित या असफल के हृदय में विद्रोह या मगबल का प्रति स्वभाव ही जम जाती है मगर आजाद ने आदेशानुसार मुझे फिर होस्टल छोड़ कर पास ही मगबल मकान किराए पर लेकर रहना पड़ा ।

आजाद महा मगबल के सभी कामों में भागे रहते थे । दल का नेता का रूप में हम सभी लोग उनको सुरक्षित रखना चाहते थे । वे काफ़ी-आच्छादित प्रकार अभियुक्त थे, दल के नेता थे उनका पकड़ने के लिए सरकार ने हजारों रुपयों ने इनाम घोषित कर रखे थे । अतएव वे पार्टी के नेता ही नहीं, पार्टी की प्रतिष्ठा भी थे । अतएव वह स्वाभाविक था कि मामूली छोटे-मोटे गनर के कामों में उनका ज़ीब होना ठीक नहीं समझा जाता था । मगर आजाद को धानग सुरक्षित बैठे रहने में ज़ेन ही नहीं पड़ता था । यह बात तो भी ही कि वे समझते थे कि मैं नेता समझा जाता हूँ अतएव किंगी और सदस्य की जान गतरे में दानने में पहले मुझे खम गतरे में पड़ना चाहिए परन्तु वे जो हूँ छोटे-बड़ गतरे में अपने का स्वयं

बाल देते थे इसका कारण सम्भवतः यह ही था कि या कि उन्हें खतरे में ठंडे दिम में काम कर सकने के विषय में अपने ऊपर और किसी के भी ऊपर से अधिक विश्वास था। यदि वे स्वयं किसी काम में न जायें और मर जमे किसी नीमिषिये को ही भेजा जाय तो उन्हें ऐसा ही लगना रहना था कि घर बढ़क हैं कहा कुछ उलटा-सीधा न कर काम।

दम के पास पैस की लगी तो मदा ही रहती थी। एक बार हासन बहुत ही करारा हो गई। यद्यपि काकोरो-काण्ड के बाद पैसे के लिए इकट्ठी करने की नीति शाजाद को बिस्कुल पसन्द न पड़ती थी परन्तु परिस्थितिया में मजबूर हो कर उन्हें कातपुर के माषिया का एक मन्त्र में इकट्ठी करने का प्रस्ताव मानना ही पड़ा। इसके लिए मत्र नय हुआ कि साधो शिव वर्मा मझे और राजगुरु को अपने साथ ले जायें। शाजाद ने स्वीकृति तो दे ली मगर स्वयं बड़े उत्साह हो गए और बात-बात पर भुँभुमाने और सीबने लगे। मैंने जो शाजाद को विगड़त हुए देखा तो शिव वर्मा से पूछा भाई मामला क्या है? शाजद पण्डित जी बात-बात पर विगड़ उठते हैं !! क्या बात हो गई? शिव वर्मा केन्द्रीय समिति के सदस्य थे, मुझ उनसे ऐसी कोई बात पूछनी नहीं चाहिए थी। मगर उन्हें कहा 'बात कुछ भी नहीं है हम लोग एकजान पर बस रहे हैं शाजाद का हम नहीं जाने देना चाहत और वे यद्यपि बड़ते नहीं हैं परन्तु उनके मन में है यही कि यदि वे एकजान में न हों तो एकजान ठग स हो नहीं सकता। क्या मुसीबत है !! हम इन्हें सुरक्षित रखना चाहत हैं और वे हैं कि

हा इस प्रकार तुम लोग भूत-भूत का एक प्रतिग होने की बात बड़ी धृष्टी तरह लोगों को समझा देत हो। तर्क और दलीलों से समझाने में कुछ नहीं होता। भूत का भय किसी को मन से निकाल देने का तुम्हारा यह तरीका बहुत ही धृष्ट है। बात यह है कि भूत की अमनियत के ऐसे दो चार किस्से मैं पहले अपनी धारणा से देख चुका हूँ इसीलिए मैं नहीं डरता। " इन सब बातों से आजाद ने (मेरे) हास्टल-साथियों से धृष्टा बराबरी का भाईनाग स्थापित कर लिया। उनके हृदय में ईर्ष्या या द्वेष की भावना नहीं जमने दी जो पराजित या अघबत के हृदय में विभेना या सघन का प्रति स्वभावतः ही जम जाती है। मगर आजाद के आशेषानुसार मुझे फिर होस्टल छोड़ कर पास ही में एक मकान किराए पर लेकर रहना पड़ा।

आजाद महा सकट के सभी कामों में भागे रहते थे। वस के नेता के रूप में हम सभी लोग उनको सुरक्षित रखना चाहते थे। वे काकोरी-काण्ड के फ़रार अभिमुक्त थे, वस के नेता थे उनके पकड़ने के लिए सरकार ने हजारों धर्मियों के इनाम घोषित कर रखे थे। अतएव वे पार्टी के नेता ही नहीं पार्टी की प्रतिष्ठा भी थे। अतएव यह स्वाभाविक था कि मासूली छोटे-मोटे छतरे के कामों में उनका धारीक होना ठीक नहीं समझा जाता था। मगर आजाद को अलग सुरक्षित बैठे रहने में रूक ही नहीं पड़ता था। यह बात तो थी ही कि वे समझते थे कि 'मैं नेता समझा जाता हूँ अतएव किसी और सन्स्य की जान छतरे में डालने से पहले मुझे स्वयं छतरे में पटना चाहिए, परन्तु वे जो हर छोटे-बड़े छतरे में अपने को स्वयं

डाम देते थे इसका कारण सम्भवतः यह ही अधिक था कि उन्हें छतरे में ठंडे दिम से काम कर सकने के विषय में अपने ऊपर और किसी के भी ऊपर से अधिक विश्वास था। यदि वे स्वयं किसी काम में न जायें और मेरे जैसे किसी नौसिंधिये को ही भेजा जाय तो उन्हें ऐसा ही मगना रहता था कि धरे लड़के हैं वहाँ कुछ उलटा-सीधा न कर डालें।

दम के पास पसे की सगी तो सदा ही रहती थी। एक वार हालत बहुत ही खराब हो गई। मद्यपि काकोरो-काण्ड के बाद पसे के लिए इकती करने की नीति आजाद की बिस्कुल पसन्द न पड़ती थी परन्तु परिस्थितियाँ संभवतः हो कर उन्हें कानपुर के माधियों का एक मन्दि में इकती करने का प्रस्ताव मानना ही पड़ा। इसके लिए मद्र नय हुआ कि सापी शिव बर्मा मुझे और राजगुरु को अपने साथ ले जायें। आजाद ने स्वीकृति तो दे दी मगर स्वयं यहाँ उदास हो गए और बात-बात पर झुंझमाने और खीजने लगे। मैंने जो आजाद को बिगड़ते हुए दखा तो शिव बर्मा से पूछा 'भाई मामना क्या है? आज पण्डित जी बात-बात पर बिगड़ उठते हैं !! क्या घात हो गई?' शिव बर्मा के त्रीम समिति के सदस्य थे, मुझ उनसे ऐसी कोई बात पूछनी नहीं चाहिए थी। मगर उन्होंने कहा 'बात कुछ भी नहीं है, हम भोग एवमन पर बस रहे हैं आजाद को हम नहीं जाने देना चाहते और वे यद्यपि कहते नहीं हैं परन्तु उनके मन में है यही कि यदि वे एवमन में न जाँ ता एवमन डंग स हो नहीं सकता। क्या सुखीबत है !! हम इन्हें सुरक्षित रखना चाहते हैं और वे हैं कि

फनफना उठते हैं मगर इन्हें इस प्रकार कुड़ते घोर कुशकुराएँ करते छोड़ जाना भी तो बर्खा नहीं है। वेसो पण्डित जी धामी बुझा हुए जाते हैं बस इनस साथ भर चलने को कहें ।

शिव बर्मा आजाद के पास गये और बोले 'पण्डित जी जो भोग एषान पर जा रहे हैं वे सब हैं तो ओशीसे मगर हैं अनुभवहीन ही। केबल जोश से ही काम ठीक से नहीं होता। मुझे लग रहा है कि आप साथ चमैं तो बर्खा ही रहेगा। पण्डित जी को और क्या चाहिए था ? तुरन्त बोले 'यही तो मैं भी सोच रहा हूँ। तुम इस कंमास को लिए जा रहे हो ठीक है मगर मौक़े पर क्या सुक-सुक कर बैठे मैं रहूँगा तो ठीक से काम करेगा मैं तो चलता हूँ। और पण्डित जी की सब भूमनाहट-फुमफुनाहट दूर हो गई। शिव बर्मा मुझे आँस का इशारा करके मुस्कराए।

इस सम्बन्ध में इनना और कहें कि मन्दिर की डकैती की योजना पूरी नहीं हुई। कुछ परिस्थिति ही ऐसी हो गई कि ऐन मौक़े पर ही यदि आजाद में योजना को छोड़ न दिया होता तो अवश्य कुछ गड़बड़ हो जाती। खामसाह दो एक खून हो जाते और बहुत बुरा होता। यदि आजाद वहाँ न होते तो एक तो हम भोग सम्भवत परिस्थिति की इस रूप में समझ भी न पाते और फिर हम भोगों को योजना छोड़ देने में यह संकोच तो होता ही कि जो बड़ी हौस से एकमत करके चले थे और सौट चले आमी हाथ। अतएव हम लोम कुछ गड़बड़ कर ही जामते। परन्तु आजाद के मौक़े पर होने ने और उनके ठीके दिख से परिस्थिति को समझ लेने ने कुछ

गड़बड़ नहीं होमे बी घोर हम लोग वापस सीट घाए । हम लोग बड़े उदास थे । मैं तो बहुत ही उदास था । सौटसे समय रास्ते में हमने देखा एक महाशय एक चौराहे पर कुछ पूजा-उत्तारा बचा गए हैं । आजाद बोले, 'कैसा देख ता, उसमें कुछ पैसे-वैसे नारियल वारियल हों तो उठा ला सवा खया और मिठाई हो तो क्या कहना ! खासी हाथ सौटना तुम्हे चुरा भग रहा है न ? मैं पूजा के पास पहुँचा । मगर उसमें कुछ भी नहीं था न वैसे न मिठाई, न नारियल । मैं झुंमसा कर उतारे में दा ठोकरें मार कर उसका दीपक लुठका-बुझा कर सौट घाया । आजाद बोले 'क्या माया ? मैंने उसी झुंमसाहट से कहा 'कुछ भी नहीं उसमें कुछ भी नहीं था । आजाद ने पूछा— 'दीबा काह का था ? तेल का था पी का ? मैंने कहा 'भी का' आजाद बोले 'बेलो कहा था न मैंने ? तू वक्त पर कुछ न कुछ लुक लुक कर ही बसता है । अबे दीपक को बुझा कर पी पी पाता तूने उस यो ही मिट्टी में मिसा दिया है न मूर्त ? आज सबेरे किसका मुँह देखा था तू ने ? मैं झुंमसाया हुआ था ही, कह दिया "भापका ।' आजाद हँस के बोले, "अब मेरा मुँह देखा होता तो कुछ कर के न पाता ? घाइना देखा होगा घाइना बिल्कुल प्रात सेह जो नाम हमारा—ता दिन ताहि न मिसे भहारा हो । अस्तु हम लोगों का हँसाने की चेष्टा करते आजाद बिना किसी भसाप या उदासी क सौट घाए ।

किसी उठ ग, जोश या मिथ्या जीम के बचीभूत हो कर आजाद कभी कोई काम न करते थे । परिस्थिति क ठडे तर्क की ही के स्वभावत महत्व देते थे । उनसे यदि इस तर्क को

वायदों में ध्यस्त करने रामभा देने को कहा जाता तो उस वं
 शायद किसी दूसरे को न समझा पाते । परिस्थिति को सुध
 सकने की उनमें अद्भुत शक्ति थी ।

झंसी व मास्टर खनायमणसिंह के द्वारा आजाद का
 परिषय मुन्देसखण्ड के कुछ राजाओं और ठाकुरों से भी हो गया
 था । इन में से कुछ को आजाद ने अपना सही परिषय भी
 बता दिया था । झंसी के पास एक राज्य के एक सरदार के
 यहाँ भी वे कुछ दिन रहे और वहाँ पर भी उन्होंने हम झंसी
 के पार्श्व के सदस्यों को निक्षाना लगाना शिकार करना आदि
 की शिक्षा का प्रयत्न किया । आजाद के यहाँ रहने के सम्बन्ध
 में एक बात उल्लेखनीय है । इस राज्य के उत्कामीन राजा के
 विरुद्ध सरदार साहब और उनके कुछ भय साधी दृष्ट थे और
 उन्हें मार्ग से हटा देना चाहते थे । उन्होंने अपने अभीष्ट के
 लिए (सम्भवतः उनका व्यक्तिगत स्वार्थ ही प्रयत्न था)
 बाहिर उद्देश्य बड़ा 'आदर्श पूर्ण' बना रखे थे । उन्होंने
 आजाद के द्वारा यह काम करवाना चाहा और उसके लिए
 पार्ष्वों को बहुत-सा धन मित्र जान का प्रसोमन दिया । आजाद
 पहल में ही हैं ही करते रहे । दस से सहानुभुति रखने वाला
 एक सज्जन न भी आप्रह किया कि क्या हर्ष है राजा को उड़ा
 दिया आम और अपना दस के लिए से लिया जाए । उनका
 एक था कि जब धन के लिए कुछ शकंतिमाँ तक कर भी
 जाती हैं और उनमें कभी खून भी हो ही जाता है, तो भी
 दिक्कत निर्दोषों का तो यदि इस निश्चयमे बिभासी दुराचारी
 राजा को उड़ा कर धन से लिया जाय तो बुरा क्या है । दस

के सदस्यों के साथ व्यवहार और वातपीत में आजाद वह स्पष्टवादी और कट्टर सिद्धान्तवादी रहते थे परन्तु बाहर वालों के साम बिशेषतः दल के साथ सहानुभूति रखने वालों के साथ, उनका व्यवहार बड़ा ही मोहक और इष्टनीतिपूर्ण रहा करता था। वे कभी ऐसी कोई बात बर नही ही करते या कहते थे जिस से दल से सहानुभूति रखने वालों को बुरा लगे। घतएक इस प्रस्ताव को उन्होंने उनक सामने भी यों ही हँस कर और उनकी कुछ कठिनाइयों और कुछ सुगहयों भी बता कर टाल दिया। परन्तु हम दल के सदस्यों में से किसी ने इस प्रस्ताव के मर्मर्यों के लक्ष पर बिचार करने को कहा तो आजाद बड़ी दुःखता और धुरणा से बोले 'हमारा दल आ-धवा-ग क्रांतिकारियों का दल है कामकों का दल है हत्यारों का नहीं। ऐसे हा पाहें न हा हम साथ भूले पकड़े जाकर फाँसी भले बढ़ा दिए जाएँ परन्तु ऐसा भूणित कार्य हम लोग नहीं कर सकते'

बाहरी लोगों से अपने व्यवहार में आजाद सत्य प्रामाण्य प्रिय प्रयात् न प्रयात् सत्य अप्रिय (भयान् सच बोलना चाहिए प्रिय बोलना चाहिए, परन्तु अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए) इस 'सनातन धर्म की सजीव मूर्ति बने रहत थे, ही प्रिय प्र नामत प्रयात्' (प्रिय भी असत्य नहीं बोलना चाहिए) के सम्बन्ध में यही बात नहीं कही जा सकती क्योंकि गुप्त क्रांतिकारों के एक बड़ा राज एक हजार भूठ बोलना पड़ता था।

आजाद ने फिर धीरे-धीरे उन मरणात् माहक के मित्र बन रहत हुए ही उनसे अपना सम्बन्ध हटा लिया।

एक घोर राज्य में एक सरदार साहब ने यहाँ आजाद कुछ दिनों रहे। सरदार साहब की धार्मिक स्थिति ठीक नहीं थी। सरदार साहब और उनका कारिन्दा आजाद के सम्बन्ध में इतना जानते थे कि वे क्रांतिकारी हैं फरार हैं और इनके पकड़ने के लिए सरकार ने हजारों रुपयों का इनाम रक्खा है। एक रोज आजाद या हा पड़े हुए थे। सरदार और कारिन्दा आपस में बातबात कर रहे थे। उनका विश्वास था कि आजाद गहरी मीद में सो रहे हैं। सरदार और कारिन्दा आपस में दोनों पिये हुए थे। बातें कुछ ऐसी थी कि आजाद को पकड़वा दिया जा सकता है और इससे सरदार साहब को अपना तथा सरकारी 'बाह बाह' और मान भी मिल सकता है। आजाद सब सुनते रहे और नकली धुरटि लेते रहे। आजाद कुछ न बोले। सरदार साहब और उनके कारिन्दे के प्रति अपने मंत्री पूरा व्यवहार में उन्होंने कोई धन्तर नहीं धाने दिया और उसी दिन वहाँ से इसके पूर्व ही कि कुछ गड़मड़ हो सके एक मित्र के रूप में हो वहाँ से किसी से कुछ कहे-सुने बिना चुपके से राता रात सिसक धाए जगल मदी-नामों को पार करते हुए, सीधे रास्ते से नहीं।

यह बात सुन कर जब हम सोचों में से किसी ने कहा 'पण्डित जी ऐसे लोगों के लिए तो एक-एक कारतूस खर्च किया ही जा सकता है। तो पण्डित जी गम्भीर होकर बोले 'पागल हुए हो गुलाम देश में ग़ुहारों और बिबबासवाली देश द्रोहियों की क्या कमी है? किसे किसे मारते फिरोगे? अपने काम से काम रक्खो। यदि बेसी ही परिस्थिति आ जाती तो वो कार

दूस सच किए ही जाते मगर मुझे रंज ही होता । बेभारों की बड़ी बुरी हासस है । अभी तक तो उन्होंने मुझे बड़ी अच्छी तरह रक्खा था । अच्छा हुमा वहाँ से चले जाए । साँप मरा घौर साठी न टूटी । अकूरत पड़ने पर भागे कभी उनसे काम सिया जा सकता है । उसका मन सदा ऐसा बाड़े ही बता रहेगा

ठाकुरों की ठाकुराई तो सबबिधित है ही । राष्ट्रकवि मधिसीशरण गुप्त के शब्दों में 'ठैका ले रक्खा है ठाकुरों ने ही ठसक का घौर आजाद थे कि ठाकुरों में पक्के ठाकुर बन जाते थे । एक दिन सनियामाना के तत्कालीन मदेश भोमान् ससकसिंह पू देव के यहाँ आजाद, मास्टर खन्नारायण भाई सदाशिव भीर भै भतिमि हुए शिकार भादि के अभ्यास के लिए । राजा साहब ने आजाद का भाई जसा सम्मान किया । आजाद अपने स्वभाव क अनुसार राजा साहब के भी छोटे भाई बन गए और अन्य मुसाहिबों के ईर्ष्यापात्र पण्डित जी । बसई ग्राम में राजा साहब की कोठी के बगीचे में एक पेड़ के नीचे अनौपचारिक दरबार जमा था । निघानेबाजी की बकिया सन्धे-दार बातें हो रही थीं । आजाद भी इसमें किसी से पीछे न थे । घौरो की छा में नहीं जानता, पर आजाद जो कुछ कह रहे थे वह सोसह माने सत्य था । किन्तु उसका परिणाम आजाद के लिए कुछ अच्छा नहीं था । ठाकुरों को भसा यह कब सहन हो सकता था कि निघानेबाजी की बातों में कोई उनसे बाजी मार से जाए । उन मोगों ने इसारों-इसारों में ही आजाद की निघानेबाजी की परीक्षा सने की योजना बना बाजी

परीक्षा जिसमें आजाद फल हो जाए और उनकी ठुंरुआई इर्ष्या की दृष्टि हो। एक सूखा-सा छोटा-सा प्रकार जो आकार में एक आँबले से भी छोटा था एक पेड़ की एक सूखी टहनी में झोंसा हुआ था। मास्टर साहब का ख्याल था कि वह कई दिना से इसी भाँति लगा हुआ था और कई लोगों की निशानेबाजी की ठुंरुआई परीक्षा उससे हो चुकी थी। एक साहब बन्दूक लेकर उस पर निशाना साधने बैठ गए। श्रीमान् राजा साहब अपने अनुचरों की इस प्रवृत्ति को ताड़ गए। वे आभाव का प्रसंगी परिचय जानते थे और उनका हृदय से आदर करते थे अन्य लोगों की दृष्टि में तो आजाद 'होंगे बाई' ही थे। श्रीमान् नहीं चाहते थे कि आजाद की निशानेबाजी की परीक्षा हो उन्हें आभाव के एक अच्छे सघे हुए निशानेबाज होने में सन्देह नहीं था। उन्होंने विषय बदलने की चेष्टा की मगर आजाद तो आज वहाँ 'पक्के ठाणुर' घम बैठे थे। उन्होंने विषय नहीं बदलने दिया। अस्तु 'मामा जू, आप देखो 'काका जू, आप देखो 'बाऊ जू, आप देखो होठे होते पच्छित जू, आप देखो' हो कर बन्दूक आजाद के हाथों तक पहुँचा ली गई।

मास्टर साहब परिस्थिति को ताड़ गए। उन्होंने भी आजाद की परीक्षा हाने देना उचित नहीं समझा और मुझे इजारा किया। मैं भी परिस्थिति समझ गया। डरते डरते आगे बढ़ा। मैं खूब जानता था कि आभाव को यह कमी अच्छा न लगेगा कि मैं उनके हाथ से बन्दूक ले लूँ। वे प्रवक्ष्य मुझ से बहुत ज्यादा दृष्ट होंगे। परन्तु आजाद की परीक्षा हो यह मही-सी बात थी। मास्टर साहब ने कहा— 'भगवानदास हाँ साधो

हाथ भाव सुन्हारी परीक्षा है। राजा साहब को भी मार्ग मिल गया। उन्होंने मास्टर साहब के प्रस्ताव का अनुमोदन किया सोर्गों को तो पण्डित जी की परीक्षा सेनी थी। उन्होंने बहुत कुछ ऐसे क्रिकरे कसे जिन से पण्डित जी को ताव भा जाए और वे निशामा सगान बैठ जाएं। परन्तु मैं बचना था और मेरा हठ करने का अधिकार था। मैं हठ किया—

पण्डित जी! मिथाना मैं सगाऊंगा। मास्टर साहब और राजा साहब न समयन किया। बड़ धनमन हो कर भाजाद को बन्दूक मुझे दे ही देनी पड़ी। मैं निशामा साधा और भाजाद ने गुठ की हैसिमल स मुझे हिदायतें दी। भाजाद की तकदीर अच्छी थी और मेरी शामद उससे भी अच्छी। मैं टिगर बघाया और पमाका हुआ। सब के साथ मैं भी देखा कि पड़ पर हवा में हिमता हुआ धनार धम नहीं है, और जिस टहनी में वह सौंसा था वह बैसी ही हिल रही है। राजा साहब न मरी प्रशंसा की। पण्डित जी ने भी मेरी पीठ ठोकी। राजा साहब के अनुषर भस्लाए। एक स न रहा गया तो उसन कह ही डाला—

‘महाराज कभी-कभी धन्वे के हाथ भी बटेर लग जाती है।’

पण्डित जी बोले— ‘इसकी क्या बात है दाऊ लू, मरजी हा ता फिर लगवा सो।’

भाजाद ने सरन स्वभाव से ही यह वाक्य कहा था, पर बास की साम निकालने वाले धामोषकों और भाप्यबारा की भाति उन सोर्गों ने इसक अनेकानक निकासे और धपम भापवा धपमानित-सा अनुभव किया। राजा साहब के एक साल साहब जरा विवट ठाकुर थे। भाजाद ने बहुत ठाला मगर उनका भाजाद से बठ बढ़ाव हो गया। यदि मास्टर

साहब के हाथ और राजा साहब की साधिकार शान्तिप्रियता में परिस्थिति को न सम्हाला होता तो निश्चय ही उस राजा साहब के सामने और पण्डित जी में इन्द्र युद्ध हो कर रहता। आजाद का वहाँ अधिक ठहरना निरापन्न न समझा गया। सब से हँसी-खुशी और ठाकुरी सिप्टाचार स विदा हो कर आजाद भाँसी चले आए।

इन गुणग्राही भाबुक ठाकुरों के प्रति न्याय के लिए यहाँ इतना अवश्य कह देना चाहिए कि जब बाद में उनको यह मासूम हुआ कि इसाहाबाद में एस्कूड पार्क में पुलिस टुकड़ी से एकाकी युद्ध करके और दो चार मध्ये निशाने मार कर जो क्रांतिकारी मन्त्रसेखर आजाद सहोदर हुआ वह अग्य कोई नहीं वही 'पण्डित जी ही थे जिनकी परीक्षा उन्होंने सेनी चाही थी तो उनको पण्डित जी के प्रति बड़ा आदरपूर्ण ममत्व हो गया और फिर तब से उनके साथ निर्भीकता और सूक्ष्म बुद्धि की बड़े प्रेम से सराहना करते थे सकते थे। आजाद को अपना छोटा भाई और हम लोगों को अपना स्नेही मित्र बनाने का मुख्य राजा साहब अनियाधाना को खुशामा पड़ा। उन्हें सासनाधिकार से बंथित करके अनियाधाना में सरकार द्वारा सुपरिन्टेन्डेण्ट का शासन किया गया। उग्याधिकार का बड़ा मोह होता है जिसके लिए लोग पितृ-हत्या मातृ-हत्या और बन्धु-हत्या तक कर सकते हैं। परन्तु अनियाधाना में सुपरिन्टेन्डेण्ट का शासन हो जाने के बाद भी मैं आजाद का मेजा हुआ कुछ आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिए राजा साहब के पास पहुँचा तो मेरा उन्होंने पूर्ववत् ही स्वागत

किया, मुझे चाहोंने वह पत्र जिसके द्वारा उन्हें शासनाधिकार से वंचित किए जाने की सूचना दी गई थी इस प्रकार बिनाया जैसे कोई परीक्षा में उत्तीर्ण विद्यार्थी बड़ी आत्म तुष्टि से अपना प्रमाण पत्र दिखाता है कोई प्रेमी अपनी प्रेमिका के पत्र को अपने अन्तरंग मित्र को बताता है। पत्र में इस बात का स्पष्ट संकेत था कि राजा साहब पर 'अनभीष्ट सोयों की मित्रता' होने का संदेह है और इसीलिए उन्हें शासनाधिकार से वंचित किया है। राजा साहब अहमदाबादी देशभक्त उस समय भी थे पर आजाद के सौहाव का रस कितना असम्य रहा होगा जिसके लिए राजा बसंतसिंह व देव ने अपने शासनाधिकार को बिना मसाम के ज्ञान शुरू कर संशय में डाल दिया और उसे खो कर भी उनके माथे पर सिक्कित नहीं आई। राजा साहब सन्यास ग्रहण कर चुके हैं। अभी २२ वर्ष बाद जब राजा साहब आजाद की वृद्धा माता से मेरु घर पर मिले तो अपने स्वर्गीय धीर भाई 'अनभेष्ट' के लिए उनका वधु धोक उमड़ पड़ा और माता जी के चरणों पर सिर रस कर वे जिस प्रकार रोए और माता जी को जिस प्रकार प्लाया उसने इतने वालों के मन को पवित्र सुहृद प्रेम की उदात्त भावना में निमग्नित कर दिया।

जब भगतसिंह और वटुकेस्वर दत्त दिल्ली की असेम्बली में बम फेंक कर (८ अप्रैल १९२६ के दिन) गिरफ्तार हो गए उस समय आजाद हम लोगों के साथ मीठी में ही थे। भगत सिंह के गिरफ्तार हो जाने के बाद अखबारों में छपा कि भगतसिंह ने पुलिस से इत्रबाल कर लिया है और दत्त का

हास बधा दिया है। अग्रणी का अलखार में ही पढ़ कर आजाद को उसका अनुवाद हिन्दी में सुना रहा था। आजाद तुरन्त बोले 'बैसास सदाधिव बगरह सब को तुरन्त आगाह कर दे देख दो चार दिन जरा इधर-उधर रहना चाहिए। मैंने पूछा 'क्यों? तो वाम धरे भाई अब यह खबर छपी है तो समझ है इसमें कुछ हो? मुझे बड़ा डरा मगा मैंने कहा पण्डित जी! यदि भगतसिंह अग्रवर बन सकता है तो यह पार्टी पार्टी का बर्कोसमा बिल्कुल बकार है। फिर जो होना हा होने बीजिए। मैं अब कही नहीं जाता। आजाद बोले 'तू तो मूल है इसमें भगतसिंह के प्रति भावस्वास की बात नहीं है, पार्टी के प्रति आधिक ससर्कता और साधभानी की बात है नाति की बात है अमुसासन की बात है। मे भी यदि पकडा जाऊँ तो जो जो अड्डे मरु मासुम है वहाँ से सागो और बीजों को हटाना ही ठीक होगा इसमें सुक-सुक करना ठीक नहीं होगा। इस पर भी जब मैं कुछ भावुकता में आ कर बोसने मया ता आजाद बोले 'अबे बुटु। किसी दिन अपनी इसी भावुकता में मर जायगा या फिर कामा पानी की किसी कोठरी में बुमिया की वेकफ्राई की गुजस गुनगुनावा रहेगा। तस उठ। और फिर तीन चार रोज हम लोग आजाद सदाधिव और मैं पर पर न सोकर इधर-उधर सोते रहे और अँसी क बाहर मावजर और पिस्तीले लिए इधर-उधर भटकते रहे। अँसी की पुलिस की हमबल की खबर अपने सातों और सहायुक्ति रखने वासों स हमें मिसती ही रहती बी।

कुछ दिनों बाद फ़णोड्र बोप भी गिरफ्तार हो गया और

उसके भी धम्रुवर होने की खबर अखबार में छपी । फरणीन्द्र घोष भी कंग्रीय समिति का सदस्य था और मेरी उस पर बड़ी आस्था थी । मैंने हँसते हुए धाजाद से कहा 'ये अखबार वाल भी खूब है पहल भगतसिंह को धम्रुवर बना रहे थे और अब दादा को बना रहे हैं (फरणीन्द्र घोष का हम लोग दादा ही कहा करते थे) धाजाद फिर गम्भीर होकर बोले 'वह कुछ भी हो फिर भी सावधान रहना पड़ेगा ।' हम लोगो में पूरी पूरी सावधानी बरती । एक रोज भौंसी में कई बम हतलाधियाँ हुईं । मास्टर खन्नारायण को पुलिस के धरिये यह पहले ही मालूम हो गया था कि कल सबेरे तलाधियाँ होने वाली हैं । बात यह भी कि पुलिस को यह पक्का बिदबान था कि मास्टर खन्नारायण का सम्बन्ध क्रांतिकारियों से है और मास्टर अवश्य धाजाद का पता जानते हैं । बाहर से बराबर धाजाद के लिए खुफिया पुलिस वाले भौंसी आते-जाते रहते थे । भौंसी की खुफिया पुलिस का यह खिन्ता रहनी थी कि यदि बाहर वालों ने यहाँ आकर धाजाद को पकड़ लिया तो उनकी बड़ी किरकिरी हो जायगी यदि वे ही धाजाद को पकड़ सकें तो ठीक, नहीं तो धाजाद कम से कम भौंसी में तो न पकड़े जायें । अतएव पुलिस के द्वारा खन्नारायण को ऐसे हिस्ट मिम जाते थे । रात के दस बजे आकर मास्टर साहब ने हम लोगों को बुँदकर आगाह कर दिया कि सम्भवतः कम सबेरे तलाधियाँ होंगी, बाहर की पुलिस धाई हुई है । हम लोगों ने सब पुरानी जगहों से सारा सामान हटा लिया और हम लोग भी धाजाद सदाधिव और में इधर उधर हा गए ।

वैद्यम्पायन इस समय झंसी में थे नहीं। एक महाशय श्रीराम दुसारे सर्मा के यहाँ जहाँ कुछ कपड़े आदि सामान रक्खा था हमने कई बार रात में संवेष्ट मित्रवाया मगर वे न मिस। संवेष्टे स्वयं आजाद रामदुसारे के मकान की तरफ साइकिल से चले तो उन्हें दिखा कि मकान के प्रागे लोगों का हुजूम जमा है और वहाँ पुलिस वाला लड़े हैं। आजाद ने साइकिल सोटाया उचित न समझ और भोड़ में से रास्ता बनाते प्रागे प्रागे को ही निकले चले गए पुलिस से पूछते हुए कि क्या बात है भाई! कुछ देर बाद हम सोग नियत स्थान पर फिर मिसे तो आजाद ने बताया 'मे आ गया छेरा दावा' सासे ने पाखाने के रोशनदान के छेद तक गिन रखे थे और पुलिस को बताए। असो फिर्मासफर पी! अब जिसको। रामदुसारे को और मास्टर साहब को भी पुलिस कोठवासी से गई है सुना है तुम्हारा बह दावा भी पुलिस के साथ आया है न जाने आजाद जल्दी कहाँ से इतना पता लगा आए थे। फणीन्द्र भोप वास्तव में भ्रूबर हो गया था। उसने ही राम दुसारे सर्मा का नाम और मकान पुलिस को बताया। इसके पहले बह कुछ दिन झंसी में रामदुसारे के मकान में रह गया था। गई बस्ती में जिस मोटर डाइवर रामानन्द क यहाँ आजाद रखा करते थे उसको भी फणीन्द्र ने ही पुलिस को बताया। एक बम का परीक्षण जयल में करने के लिए बही मोटर डाइवर आजाद भगतसिंह फणीन्द्र भोप और सदाशिव को ले गया था। परिणामतः मास्टर खन्नारायण, रामानन्द और रामदुसारे को पुलिस ने बहुत तग किया। रामदुसारे तो

साहीर पद्म्यत्र केस में सरकारी गवाह बना ही। रामानन्द को भी 'घाजा' को 'खोब' में पुलिस को सारे हिन्दुस्तान में भटकाना पड़ा और स्वयं भटकना पड़ा।

भाई मराणाब और मैं जब भुसावत वम कस में गिरफ्तार हो गए और जसयाब की सेसन घदामत में हमारा युद्धमा खल रहा था तो इसी फरगिन्द्र घोष और एक अन्य अप्रुबर जयगोपाल को गोली मारने के लिए एक पिस्तौल हमारे पास भेज देने की प्रार्थना हमें घाजा से करने पड़ी जिसे घाजाद ने स्वीकार कर लिया और पिस्तौल हमारे पास भेज दी। परन्तु मैंने जो सेसन घदामत में फरगिन्द्र और जयगोपाल पर गोली चलाई तो वह उनके मर्म पर नहीं बंटी वे घायल मात्र हुए।

जहाँ तक मैंने घाजाब को देखा है 'ओरी भाबुकता' के चिकार बे कभी नहीं हुए। यों तो मुट्टी भर साधियों और कुछ टूटी-फटी पिस्तौला रिवास्वरो और गुप्त कोठरियों में हाथ से बनाए हुए भद्दे बर्तों के बल पर शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य का लसकारने को भी 'ओरी भाबुकता' कहा जा सकता है, और कहा भी गया है परन्तु इस सम्बन्ध में घाजाद को तथा अन्तिकारी दल के अन्य नामवा का कभी कोई शनतक्रहमी नहीं थी कि इन साधियों और टूटे-फटे हथियारों से क्या और कितना किया जा सकता है? कितना हो सकता था उतना ही करने के लिए वे प्रयत्नशील थे, देख बिस्ती जैसे हवाई-क्रल उन्हाने कभी नहीं बनाए और न तिसिस्मी उपन्यासो जस घम्पार' और 'उदार' और बने ही

वे कभी फिरे कि जहाँ कहीं भी कुछ छोटा-मोटा घ'याय मिस
 जाता उसी के प्रतिकार के लिए वे पिन पड़ने । आजाद जब
 भ्रंसी में सदर बाजार की मुन्दैतसण्ड मोटर कम्पनी में काम
 करते थे तो एक दिन मेरे पास वही उत्तजना में आए और
 अपना पिस्तौल निकाल कर मुझे देते हुए बोले 'मे
 अपने पाम रख भ ' में प्र'मसूचक रीति से उनकी घोर
 देखने लगा तो आगे बोले, मेरा दिमाग आज ठीक नहीं है,
 आज कुछ प्र'प्रेज सोल्जरा ने सदर बाजार में बड़ा उपद्रव
 किया औरतों को छेड़ा है लोगों को मारा है और गानिमा
 वकी है वड़ा ही खराब व्यवहार किया है जिससे मैं रह रह
 कर उत्तभित होता रहा हूँ कई बार मेरा हाथ पिस्तौल पर
 जा चुका है । मुझे लगा कि कहीं मे अपने आप पर काबू न लौ
 डू नही तो कुछ गड़बड़ हो जायगा । इसीलिए बना आया हूँ ।
 तू इसे रखने रह । मुझ काम पर तो वापस जाना ही है । और
 जो बातें हुई उनमें आजाद ने मुझे समझया 'हर बदमाशी
 और अतमाचार का प्रतिकार हम छोड़े ही कर सकते हैं यदि
 उत्तजना में आकर मैं वही सहसा कुछ कर डालता तो इसर
 तुम लोगो की हासल खराब हो जाती और न जाने कहीं
 कहीं क्या न हो जाता और पार्टी का कुछ हिसाब किताब हो
 गड़बड़ में पड़ जाता । बिना समझे-बूझे, किसी बात का पूरा
 इन्तजाम किए यों ही उत्तजना में आकर कुछ नहीं किया
 जाता यों तो बदमास और शरारती लोग कदम-कदम पर
 मसते ही रहते हैं । मगर हूँ वहाँ भाँसों से बदमाशी और
 यह सुर्य्यवहार देखकर तब भा आना स्वाभाविक ही है इसी

से यही धमा धामा है। अब तुम से बातें कर नी उमेरना शान्त हो गई अब जाता है।' आजाद पिस्तौल मेरे पास रख कर फिर काम पर चले गए।

इसी प्रकार आजाद अब सातार का कुटिया पर रहे रहे थे अब वहाँ पर एक 'साधु' ने एक कुटिया के सामने जिना किया जो आजाद ने देखा लिया। उन्हें क्रोध तो बहुत आया परन्तु वे शान्त रहे। उन्होंने ऐसा कोई बात क्रोध और ताम में धारक नहीं की कि जिसमें सातार-शट पर उनका स्थान लोगों और सम्भवतः पुलिस को नजरों में चढ़ जाता। इस प्रकार वहाँ पर भी एक हत्या इकली और बसातार का बाण्ड हो गया परन्तु आजाद ने उत्सर्जित होकर ऐसा कुछ नहीं किया जिससे उन्हें पुलिस के सम्पर्क में आना पड़ता। अपनी घृणा क्रोध और उत्सर्जना को वे हम सागो से दान करने शब्दों के द्वारा ही शान्त कर लेते थे।

आजाद को बस अपने साधियों के प्रति बड़ा प्रेम था। सभी के साथ वे भारतीयता का व्यवहार करते थे परन्तु जिसे वे अपना साथ और कृतम्य समझते थे उनमें कभी किसी का स्नेह या भावुकता बाधक नहीं हो पाती थी। एक बार आजाद के माता पिता के लिए किसी ने कुछ सौ रुपये न्यिं वे परन्तु बीच में पार्टी को स्वयं की आवश्यकता हुई तो आपने वह सारा रुपया पार्टी का दे दिया। जब पार्टी के लोगों ने कहा कि "नहीं पण्डित जी यह रुपया आपके माता पिता के लिए मिला है इसे हम साथ पार्टी के काम में कैसे सा सकते हैं?" तो आप बोले, "बेकार भावुकता की बातें न करो, कुछ ही कुटिया

के लिए दो-दो घाने की एक-एक गोली बाक्री होगी पार्टी को रुपये की सख्त जरूरत है ।

जब भगतसिंह और दत्त दिल्ली की प्रसेम्बली में बम फेंक कर गिरफ्तार हो गए तो दो चार दिन बाद साथी शिव वर्मा भगतसिंह और दत्त के फोटो लेकर फाँसी में आए । शिव वर्मा को देखकर हम सभी का हृदय उमर पड़ा । हम सभी की फाँसों में भाँसू घा गए । शिव वर्मा ने बड़ी भावुकता से मुनाया कि किस प्रकार वे पिस्तौल की साँक पर, अपने आपको छतरे में डाल कर फोटोग्राफर के यहाँ से मे चित्र साए हैं । हम सभी अपनी भावुकता से भीगी फाँसों को पोंछ रहे थे । हम ने देखा कि आजाद बिस्कुस 'स्मित प्रज्ञ की तरह 'य सर्वथा नमिस्नेह' और 'वीतरागमयाक्रोम अविषमित रहे । वे देर तक हम लोगों को देखते रहे । थोड़ी देर बाद जब आजाद घकेले में बैठे कुछ सोच रहे थे तो मैंने देखा कि उनकी फाँसों में भाँसू है । मैं उनके पास गया और सहानुभूति और सद्भावना की बातें करने लगा । आजाद बोले 'मुझे इसका दुःख नहीं है कैलास ! कि भगतसिंह और दत्त जैसे गए, वह तो प्रागे-बीछे पकड़े जाकर या गोली खाकर सभी को जाना है । परन्तु मैं देख रहा हूँ कि तुम सब लोगों का हृदय कितना प्रमपूर्ण है, और मुझे लगता है कि मैं तो बिस्कुस तीरम पत्थर क्रान्ति की एक मधीम र्षसा हो गया हूँ । तुम लोग सच्चे माने में दन्यात हो । मेरे ऐसा दिम भी क्या दिस कहला सकता है ।।' और उन्होंने फाँस पोंछ डालीं । कुछ देर बाद बोले 'कैलास ! भगतसिंह को तो फाँसी ही होगी, उसको फाँसी होने के पहले ही कुछ

करके दिखाना है।" आजाद के मुँह से मुँह से नहीं हृदय से इस समझ निकली हुई भावनापूर्ण ये बातें मुझे वही भखी सहीं। उनसे बड़ी शक्ति सी मिली।

आजाद २७ फरवरी सन् १९३१ को इलाहाबाद के एल्फ़ ड पार्क में पुलिस से एकाकी युद्ध करके घाहीद हो गए। भारत के स्वातन्त्र्य यज्ञ में यह आहुति पढ़ने से समस्त भारत उनके कीर्ति-सौरभ से भर गया। यज्ञ कुण्ड की ज्वालाएँ नाच उठीं। 'रहिमन साँचे मूर को बेरिहू करत बखान'—सू० पी० पुलिस के सी० आई० डी० विभाग के सर्वोच्च अधिकारी थी हासिन्स ने भी आजाद की वीरता और उनकी देशभक्ति की प्रयत्न दंग से तारीफ़ की। उस समय में तो साबरमती सेन्ट्रल जेल की कास कोठरी में पढ़ा आन्दोलन कारावास की सजा काट रहा था। सत्याग्रही साँची क़दियों से मुझे आजाद की घाहादत का समाचार मिला। उस समय भगवत्सिंह सुषदेव और राजगुरु साहीर पद्मत्र केस में फाँसी की सजा पाये हुए क़दो थे और फाँसी के बिन का इस्तज़ार कर रहे थे। एल्फ़ ड पार्क में आजाद का पुलिस से सङ्घर्ष कर घाहीद हो जाना एक आकस्मिक घटना ही थी परन्तु अपनी कास कोठरी में जब मैंने यह समाचार सुना तो आजाद की यह बात 'क़सास'। भगवत्सिंह की तो फाँसी हो होगी उसको फाँसी होने के पहले ही कुछ करके दिखाना है। मेरी प्रियेरी कोठरी में रूह-रूह कर सिनेमा चित्रपट जैसे रूप में धराधर आनी रही।

आजाद के साथ बोल दाएँ रूप धारण करके सिनेमा की भाँति डीखने लगे

आजाद सदाशिव घोर में भाँसो में सदाशिव क मकान में बंठे हुए हैं। माठजर पिस्तौल के रखने में कुछ धसावधानी करने क कारण आजाद मुझे डाँट रहे हैं। देव चीज के सम्बन्ध में यह झुक झुक मुझे धक्की नहीं मगती। तू मर जाय या पकड़ा जाय तो उससे पार्टी का इतना मुक़साम नहीं होगा जितना इस माठजर के बले जाने से। आजाद की यह बात उस समय मुझे बहुत बड़ी घोर बुरी मगी थी। परन्तु वास्तव में हम (सदाशिव घोर में) एक माठजर पिस्तौल और एक धम्य पिस्तौल और दो जीवित बमों क साथ भुसावला स्टेशन पर पकड़ लिए गए और हम एक आगितकारी की सान के समुह्य कुछ भी न कर पाए थे। आजाद की बात मुझे याद आई और हम दोनों धर्म और म्साहि से तड़प गए। भाई सदाशिव ने जैस में रहते हुए भी कुछ करने की योजना बनाई ताकि माठ जर पास में होते हुए भी जीवित पकड़ लिए जाने के धाराध का कुछ तो परिमार्जन हो जाए। परिणामत बलगाँव की सैसन धदासठ में मैने कूँबी की हासत में रहते हुए साहीर पड यंक बेस के बदनाम धम्रुवर जयगोपाल और परीन्द्र घोष पर धाक्रमण किया जिसके लिए आजाद ने फिर एक पिस्तौल हम लोगों के पास जैस में भिजवा दिया। मैं इनमें भी धकूठकाय रहा। मैं धम्रुवरों को मार न सका था वे केवल धायस हुए थे। आजाद का एक और पिस्तौल मैंने इस प्रकार लोया था और हमारा यह सेनामी एकाकी अपने एक पिस्तौल और कुछ कारतूसों से बहु कर मया जो आगितकारियों के इतिहास में सदा धमर रहेगा ठीक ही तो कहा था आजाद ने मैं पिस्तौल

को क्रूर बना जायें !

एक मटका सा लगा । सिनेमा की रील सी टूटी । मैं
ग्लानि और दुःख से मर गया

रीस पुन पासू हुई—

घागरे के एक मकान में आजात भगतसिंह मुखर्जी राज
गुरु, बटुकेदर दत्त शिव बर्मा विजयकुमार सिन्हा जयदेव
रूपर, डॉ० गमाप्रसाद वसम्पायन महाशिव आदि दल के सभी
सक्रिय सदस्य घंटे हैं । विनोद बन रहा है । विनोद का विषय
है कि कौन कैसे पकड़ा जाएगा पकड़े जाने पर कौन क्या करेगा
और सरकार से जिसे क्या सजा मिलेगी ?

ये हजरत (राजगुरु) तो सोते हुए ही पकड़े जाएंगे । हृद
हो गई ! अनाद बनते बनते सो सोते जाते हैं । इनकी घायल
पुलिस साकथप में ही बुलेगी और फिर ये पहले वालों से पूछने
‘क्या मैं सधमूस पकड़ा गया हूँ या म्बन्त देख रहा हूँ ?

मोहन (बटुकेदर दत्त) आदमी रात में पाक में चांद को
देखते हुए पकड़ जाएंगे । पकड़े जाने पर पुलिस वालों से घाप
कहेंगे ‘कोई बात नहीं मगर चांद है किसना सुन्दर ।

‘बप्पू (विजयकुमार सिन्हा) और रणबीर (भगतसिंह)
किसी सिनेमा हॉल में पकड़ जाएंगे और पकड़े जाने पर पुलिस
से कहेंगे ‘ओ हाँ ! पकड़ लिया तो क्या गजब हा गया । खल
तो पूरा देख लेते हो ।’

‘और पण्डित जी (अम्बरीश्वर आजाद) बुन्देलखण्ड की किसी
पहाड़ी में शिकार घेसते हुए किष्वा मिश्र बने सरकारपरस्त क
विश्वासपाठ से घायल होकर बेहोशी की अवस्था में पकड़

जायेंगे । इन्हें जगत् से सीधे भाँसी के पुसिस घस्पताम में भेज दिया जायगा और वहीं इन्हें होश धाने पर पता चमगा कि ये गिरफ्तार हो गए सब्जा दफ्ता १२१ में फाँसी ।'

धाजाव ने मिडकी की हँसी हँसी । भगतसिंह ने विमोद करते हुए कहा 'पण्डित जी धाप के लिए दो रस्सों की जरूरत पड़ेगी, एक धापके गले के लिए और दूसरा धापके इत मारी भरकम पेट के लिए । धाजाव तुरन्त हँसकर बोस 'बस फाँसी जाने का शौक मुझे नहीं है । वह मुझे मुबारक हो रस्सा फस्ता तुम्हारे गले के लिए है । जब तक यह बमतुल दुन्दारा (धाजाव ने अपने माउजर पिस्तौल का यही विचित्र नाम रक्खा था) मेरे पास है किसने माँ का दूध पिया है जो मुझे जीवित पकड़ ले जाए ।

सिनमा की 'रीम पुन' टूटी । मैं उठकर अपनी अंधेरी कोठरी में टहलने लगा । कौसी लूबसूरती से निवाहा धाजाव ने अपनी इस प्रतिज्ञा को । और भगतसिंह उन्हीं के कहे के अनुसार उस समय साहौर बेस में फाँसी के फन्डे का इन्तजार कर रहे थे ।

इस मे से कुछ को कविता सुनने और सिखने और गाने का भी शौक था । एक बार काव्य और संगीत, संगीतोपयोगी काव्य, काव्योपयोगी संगीत की बातें हो रही थी । अधिकतर बात भगतसिंह और विजयकुमार सिन्हा ही कर रहे थे कभी-कभी टर्कों में कौड़ियाँ में जी मिला देता था । धाजाव भी वहाँ से और बीच बीच में है हाँ करते जाते थे । किसी बात पर मैं अपना ही एक प्रेम-गीत गाकर सुना रहा था ।

“हृदय सागी प्रेम की बात ही निरामी मनमधर हो

ऐसी ही कुछ पक्तियाँ थीं। आजाद बोले ‘क्या सामा
 रम प्रेम पितृपिताता रहता है। प्रवे क्यों अपना और दूसरों
 का मन खराब करता रहता है ? कहीं मिलेगा इस जिन्दगी में
 प्रेम-प्रेम का अवसर ? कल नहीं सड़के के किनारे पुनिस की
 पोली ला कर झुड़कते मजर आयेंगे। फलमधर कलमधर ।
 हमें मतसव मनमधर से । धरे कुछ ‘बम फल कर पिस्तौल
 झक कर’ ऐसा कुछ गा। देख मे गाऊँ अपनी एक एक ही
 कविता जिसे जिन्दगी में कर आने के लिए ही जिन्दा है ।
 और आपने अपने गल को और भारी भरकम बनाते हुए स्वरो
 पर स्टीम रोलर सा चवाना शुरू किया—

‘बुद्धम की गोभियों का हम सामना करेंगे,
 आजाद ही रहे हैं आजाद ही रहेंगे।’

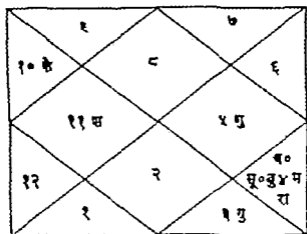
‘देख इसे कहते हैं कविता । क्या सामा हृदय सागी प्रेम
 की बात’ मनमधर पितृपिताता रहता है ? हृदय में भोगी थी
 साट थी की एक गोली मनमधर फलमधर नहीं ।

उस समय तो हम सोचों ने उनके गले क स्टीम रोलर से
 स्वरो का पिचपन होते देख कान पर हाथ रत लिए थे परन्तु
 घान अपने जैसे, ‘हठाराक्षिप्तानां कतिपय पदानां रचयिता’
 बिन्दुलावी तुकबाबा की ही नहीं, सिद्ध समर्थ समझे आने वाले,
 किन्तु केवल कल्पना में ही तड़पन वाम और काष्ठ पर कसम
 से उछल-कूद मचाने वाले कविया की समग्र काव्य राशि को
 इस कवि की नहीं मही इती की, इन दो पक्तियों पर निष्कर्ष

करमे का हृदय सङ्घ उठता है जिसे उसने २७ फरवरी सन् १९३१ के दिन इलाहाबाद के एल्फोर्ड पार्क में अपनी विस्तीर्ण के राज पर गले से नहीं अपने कर्मठ हाथों से गाया और स्याही से कागज पर नहीं भारत की उज्ज्वल क्रांतिकारी कर्म भूमि पर अपने रक्त से लिखा उसे 'परितार्थ' करके प्रसर कर दिया उसे काव्य नहीं कृत बना लिया !

चन्द्रशेखर झाजाद का जन्म मध्यभारत की झाबुआ तहसील के ग्राम भाबरा में हुआ था। रायों के एकीकरण के पहले भाबरा अमीराजपुर राज्य की एक तहसील था। झाजाद के पिता का नाम पं० सीताराम सिंघारो और माता का नाम जगरानी देवी था। झाजाद अपने माता पिता की पाँचवीं और अंतिम सन्तान थे तथा उनके सभी भाई बहिन मर चुके थे। झाजाद की माता जी का देहान्त तारीख २२ मार्च सन् १९५१ को झाँसी में मेरे ही घर पर हुआ। वे मेरे और भाई सदाशिव राव मसकापुरकर के साथ मेरे घर पर ही उस समय दो सास से रह रही थी और तभी उन्होंने झाजाद के जन्म और स्वास्थ्य काम की बात हमें बताई थी जिन्हें मैंने नोट कर लिया था। माता जी ने बताया था कि चन्द्रशेखर का जन्म 'सावन सुनी पूज सोमवार' को दिन के दो बजे हुआ था। सबत् माता जी को विस्मृत हो गया था। मैंने पुराने पत्रागों को देख कर झाजाद की जन्म-तिथि का निश्चय किया है जो है तारीख २३ जुलाई सन् १९०६ और फसिल ज्योतिष में विश्वास न होते हुए भी कौसूहमवश और मिर्चों के प्राग्रह से उनकी जन्म कुण्डली भी तैयार कर ली है। लोगों से उनकी जन्म-पत्री में

दिसवत्सो बाहिर की है अथवा उसे यहाँ भी दे रखा है—



धाजाद का जन्म हृद दर्जे की शरीरी में हुआ था। वे किसी बड़े बाप के बेटे न थे। उनके पिता पं० सोनाराम तिवारी सूतवा उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव के एक ग्राम बदरवा के रहने वाले थे और सवत् १९३६ के वैशाखी अक्षास के समय जीविकोपार्जन के लिए घर से निकल कर भावरा में सरकारी बाग की रखवासी का काम करने लगे थे। बेतन पाँच रुपया मिलता था जिस पर ही वे अपनी पत्नी और एक बच्चे का (धाजाद के सबसे बड़े भाई शुकदेव, जो वारवा में ही पैदा हुए थे) पेट पालते थे। उनका यह बेतन बढ़कर बाद में आठ रुपया मासिक तक हो गया था। धाजाद का जन्म भावरा में ही एक टूटी पटी बाँस के टट्टरा की भीपड़ी में हुआ था। पिता जी कुछ विधवा पड़े-मिले न थे। माता जी ठा बिल्कुल निरकार ही थी। परन्तु माता पिता दोनों सनातनी ब्राह्मण के

का कट्टरता से पासन करते थे। आजाद बचपन से ही तेजस्वी कर्मशील और नटखट थे। ग्राम में पास-पड़ोस के सहकों में तो वे नेता स्वभाव से ही बन गए थे। अपने नटखटपने के कारण वे प्रायः अपने पिता के कोप-भाजन बनते थे। जिसकी चार सतारें मर चुकी हों ऐसी माता के वे नाबूले थे ही। तेजस्वी ब्राह्मण बालक और फिर संस्कृत पढ़ा-लिखा न हो ! यह कैसे हो सकता है ? एक दिन किसी बात पर पिता से मार-कातर आजाद घर से भाग निकले और इधर-उधर भटकते भ्रमंत पड़ सिद्ध कर योग्य ब्राह्मण बनने के लिए वे काशी पहुँचे और एक क्षत्र में रह कर व्याकरण पढ़ने लगे। उन दिनों सन् २०-२१ का सत्याग्रह आन्दोलन चल रहा था। घामक आजाद उसके प्रति आकर्षित हुए और बड़ बड़ कर काम करने लगे। नेताओं का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हुआ। सत्याग्रह आन्दोलन में अपनी कम उम्र के कारण उन्हें बँतों की सजा मिली जो उन्होंने बड़ी बहादुरी से मुगती तथा श्री श्रीप्रकाश जी से उन्होंने 'आजाद' उपनाम पाया। सन् २०-२१ का सत्याग्रह समाप्त हो जाने के बाद काशी में श्री मन्मथनाथ गुप्त धादि के सम्पर्क से वे गुप्त कान्तिकारी दल में सम्मिलित हुए। अमर शहीद पं० रामप्रसाद 'बिस्मिल' के नेतृत्व में उन्होंने काकोरी ट्रैन काण्ड में भाग लिया और सन् १९२५ में काकोरी पदयत्र कस में क्रूर होकर मारी गए। मारी और घोरखे के बीच सातार नदी के किनारे पर एक कूटिया में वे हरिष्कर ब्रह्मचारी बन कर रहे। यही से उन्होंने दल के छिन्न-भिन्न घुनों को फिर से जोड़ लिया और कान्तिकारी दल के गता के

रूप में अमर सहोद भगतसिंह आदि से मिलकर उन्होंने उम दस का संयोजन और सञ्चालन किया जिसके प्रमुख कार्य आहीर में लाला साजपतराय पर खाठी चार्ज करने वाले ए० एस० पी० सॉण्डर्स का वध देहली की धारा-समा में बम विस्फोट तथा सायसराय की गाड़ी के नीचे बम विस्फोट करना थे। सन् १९३१ की फरवरी की २७ तारीख को वे इमाहाबाद के एल्फोर्ड पार्क में पुलिस से एकाकी युद्ध करने हुए सहोद हो गए।

एकस्मोकी रामायण की तरह संक्षेप में आजाद का चरित इतना ही है परन्तु उनके जीवन में इस भाँति अधिक्षित कुसंस्कारवस्तु घरीबी में पड़ी हुई जनता के क्रांति मार्ग पर बढ़ते जाने की एक संक्षिप्त उद्धारणी-सी हमें मिलती है। आजाद का जन्म हृद दर्जे की घरीबी अधिक्षा, अन्ध-विश्वास और धार्मिक कट्टरता में हुआ था और फिर वे पुस्तकों को पढ़कर नहीं राजनैतिक सधर्ष और जीवन सधर्ष में अपने सक्रिय धनु बलों से सीकत हुए ही उम क्रांतिकारी दस के नेता हुए जिसने अपना नाम रक्का था "हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी" और जिसका सध्य था भारत में बम निरपेक्ष बग बिहीन समाजवादी प्रजातन्त्र की स्थापना करना। इसी हिन्दुस्तानी प्रजातन्त्र सेना के प्रधान सेनानी "वनराज" के रूप में वे पुलिस से युद्ध करते हुए सहोद हुए। इस प्रकार यह सर्वथा उचित ही है कि बन्धुसेखर आजाद का जीवन और उनका नाम साम्राज्यवादी उत्पीडन में अधिक्षा अन्ध-विश्वास धार्मिक कट्टरता में पड़ी भारतीय जनता की क्रांति चेतना का प्रतीक हो गया है। इस दृष्टि से बन्धुसेखर आजाद अमर सहोद भगत

सिंह से भी अधिक मात्सरिक रूप में घाम जमता की शान्ति भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

घाजाद के साधियों में उनके नेतृत्व में काम करने वालों में घायद हो किसी को उनसे कम स्कूमी शिक्षा मिली होगी । घायद ही कोई उनसे अधिक गरीबी की ह्रासत में उत्पन्न हुआ होगा । उनके साथ उनके पिता भाई या अन्य किसी सम्बन्धी की देशभक्ति त्याग तपस्या बीरता या अन्य किसी प्रकार के बहप्यन की छाया भी नहीं मगी हुई हो । घमर दाहीद भगत सिंह आदि अपने साधियों में उन्होंने नेता का पद पुस्तकी ज्ञान पर आधारित बोधे तक बस पर नहीं व्यावहारिक सूझ-बूझ घदम्य साहस धीर सर्वोपरि अपने साधियों की सुख-सुविधा की हार्दिक स्नेहपूर्ण चिन्ता रखकर, और दाड़े समय में बुगम नेतृत्व प्रदान करके ही पाया था । अपने साधियों और सम्पर्क में आने वाले लोगों के जीवन में केवल एक राजनीतिक सूत्र के रूप में ही नहीं एक व्यक्तिगत भाव सूत्र के रूप में धर कर लेने के अपने गुण विशेष में ही घाजाद की सफलता निहित थी । उनके अकृत्रिम स्नेहपूर्ण व्यक्तिगत व्यवहार ने ही उन्हें साधियों का प्रिय नेता बना दिया था धीर उनके हृदय में अपने लिए ऐसा विश्वास उत्पन्न कर लिया था कि वे उनके संकेत मात्र पर प्राण देने को तैयार रहा करते थे । दश में घाजाद के नेतृत्व को स्वीकार करने के सम्बन्ध में कभी कोई झंझट या भगडा नहीं हुआ । यह बात घाजाद की प्रशंसा की सी है ही उन साधियों की सच्चाई, सगम मिरभिमामता को भी यह भली भाँति स्पष्ट करती है जो विद्या-बुद्धि में तथा

त्याग और बलिदान कर सकने की अपनी सत्परता में किसी प्रकार भी कम न थे बहुत सी बातों में इनसे अधिक ही थे। साथ ही यह उन दमो गुणों और नेताओं के लिए भी आदर्श प्रस्तुत करती है जो आए दिन नेतागिरी की स्पष्टा में अपने प्रतिद्वन्द्वियों को परास्त करने तथा भ्रमतिकर्तव्यों से एक दूसरे को हटाने और मिटाने के चक्कर में घनते-विगड़ते रहते हैं।

धर्म राहीब जगद्वेषर आजाद का जीवन धर्म अन्यायी की आन्तिमारी भावना और उसके आन्ति माग पर बढ़ते जान का प्रतीक हो गया है तो भगतसिंह देश के पढ़े-लिखे भावुक नीजवानों की विकासशील आन्ति भावना का प्रबुद्धा प्रति निमित्त करने थे। इन दोनों शहीदों का नाम समस्त भारत में सदास्व आन्ति की प्रशंसियों और प्रयास का प्रतीक हो गया है। भगतसिंह और आजाद के बाद छोड़ ही आन्ति प्रयास को वह अवस्था ही समाप्त हो गई जिसे धर्म तौर पर आन्ति जारी आतङ्कवाद कहा गया है और जो सत्त्वा के रूप में हिन्दु-स्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन धर्मो' (भारतीय समाजवादी प्रजातन्त्र सेना) के रूप में विकसित और पयवसित भी हुई। ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से इसमें सैद्धान्तिक प्रगति की बात प० रामप्रसाद बिस्मिल' आदि के नेतृत्व के हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एमोसिएसन के बाद ए० एम० धार० ए० में आन्तिकारियों का दृष्टिकोण समाजवादी-मुक्त होना था तथा काय क्राय की प्रगतिशीलता की बात दन के लिए धर्म सचय के लिए साधारण इच्छितियों से ऊपर उठ कर ऐसे आतङ्कवादी कार्यों का होना था जिनका मुख्य बिसेयत सरकारी सम्पत्ति

था। सगठनारम्भक दृष्टि से प्रगतिशीलता की बात पुरुषों के साथ स्त्रियों का भी गुण सघन कान्ति चेट्टा में सक्रिय याग देना और दस का अधिकाधिक लोकतांत्रिक नियमन होते जाना था। दस का मचासन एक केन्द्रीय समिति के हाथ में था और कार्यक्रम सम्बन्धी गम्भीर निश्चय इसी समिति द्वारा होते थे। व्यक्तिगत नेतागिरी के धरातल से दस का नियमन ऊपर उठ गया था। अवश्य ही दस के प्रमुख लोगों में से ही केन्द्रीय समिति बनी थी उसका कोई लोकतांत्रिक चुनाव नहीं होता था, न हो ही सकता था फिर भी दस के निश्चयों में लोकतन्त्रारम्भकता का अधिकाधिक समावेश होता रहा था ए० ए० आर० ए० की केन्द्रीय समिति में यदि कोई किसी एक को ही बौद्धिक नेता कहना हो तो अमर चहीद भगतसिंह को और कार्यात्मक नेता कहना हो तो चन्द्रशेखर आजाद को ही कह सकते हैं। इसी रूप में ये दोनों अमर चहीद क्रांति प्रयास में प्रगतिशीलता के प्रतीक थे।

आजाद की प्रगतिशीलता को समझने के लिए हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि मध्यभारत की छोटी सी रियासत अमीराजपुर के एक गाँव में एक कट्टर ब्राह्मण के घर आजाद का जन्म हुआ जिसे यदि जाति-पाति, छुआछूत और तारी के प्रति तेरहवीं सदी की मनोवृत्ति बासा कहा जाय तो बहुत अनुचित नहीं होगा और फिर इस वातावरण से प्रगति करते करते वे बीसवीं सदी के तृतीय दशक के भारतीय क्रांतिकारियों की अग्र पंक्ति के नेता बने। दस बारह वर्ष की आयु में एक कट्टर ब्राह्मण बालक के रूप में संस्कृत पढ़ने के लिए वे घर से

भाग कर काशी पहुँचे वहाँ राष्ट्रीय सहर में रगे सत्याग्रह किया वेतों की सजा पाई फिर आतिकागिया में धामिस हुए । धमर दाहीर रामप्रसाद विस्मिस के नेतृत्व में उनके धामिक विचारों में धार्मिसमाजीपन धाया धीर छुपाछुन सूति पूजा धादि को वे निस्सार समझने लगे । दाद में मगतसिह धादि के ससग से उन्होंने समाजबादोन्मुख धमनिरपन्न दुष्टिकीण धीरे-धीरे धपनाया धीर भारतीय समाजबादी प्रभातन्त्र सेना के प्रधान सेनानी हुए । मिदन्ध ही एक कट्टर बाह्यगवादी बासक से धपपक्षि के क्रान्तिकारी प्रगतिधीन नीजवान नेगा के विकास की प्रयति के धनेक स्वर बहुत बोह समय में धाडाव ने पार किए । स्त्रियों के सम्बन्ध में धाभाण धपने ध्यक्तिगत जीवन में सा मदा एक नष्टिक दह्यधारा ध ही रह । पहले वे दस में स्त्रिया क प्रवृत्त के विरुद्ध भी वे धीर इमीसिए थे कि उनके नेतृत्व के पूव यही परम्परा थी परस्तु धाण म उनके ही नेतृत्व में स्त्रियो ने दस में काम किया धीर सुध धच्छी तरह किया । 'नारी मरक की त्वाण धामो मनावृत्ति ध नारी का एक सक्रिय क्रान्तिकारिणी समान सहयोगिनी के रूप में मानने के बीच की मभी मनादगाये धाजाण की समय-समय पर रही होंगी, यह स्पष्ट है । धन्तिस दिना में धाबाण बडे उत्साह से दस की सभी स्त्री सन्स्याधों का गानी धत्ताना निधाना मारना धादि सिगधे थे दस से सहानुभूति रखने बान ध्यक्तियों के धर का स्त्रियों का भी वे इमक लिए उत्साहित करते थे तथा क्रान्तिकारी कायों म धपने पनि का सक्रिय सहयाम करने के लिए उन्हें बार-बार तरह-तरह की प्ररणा देत थे ।

स्त्रियों से उनका व्यवहार यद्वा सरस और आत्मीयतापूर्ण होता था। यह सब होते हुए भी वे इस बात के घोर शत्रु ही थे कि कोई दस का सन्स्य स्त्रियों के प्रति अनुचित रूप से आश्रित हो। किसी प्रकार की यौन कमजोरी तो उसने लिए घसई ही थी। परन्तु पति-पत्नी दोनों क्रांतिकारी काय में सगे इससे अधिक अभीष्ट बात उनसे लिये और कोई नहीं थी। दस को एक 'आनन्दमठ' ही वे नहीं रखना चाहते थे यद्यपि क्रांतिकारी जीवन की आरम्भिक दशा में उन्हें और उसने जैसे प्रथम और भी क्रांतिकारियों को 'आनन्दमठ' की भावना ने बहुत कृष्ट प्रभावित किया था।

स्त्रियों और यौन आकर्षण के सम्बन्ध में बात करते हुए आजाद ने मुझे अपने बाल जीवन की एक अजीब घटना सुनाई थी। अन्द्रशेखर के मन में अपने कट्टर पिता के प्रभाव से और पारिवारिक संस्कारों से ब्रह्मचर्य और धार्मिकता की भावना अचपल में ही दृढ़ थी। एक बार खेल-खेल में पड़ोस की एक अवाम स्त्री ७-८ वय के दासक अन्द्रशेखर आजाद को घर में पकड़ ले गई और उससे तरह-तरह से धींगामस्ती करने लगी। खुदा जाने वह क्या करना चाहती थी परन्तु वह जब कुछ कार्य नहीं हुई तो उसने अन्द्रशेखर को अवरन नीचे दवा लिया और इनकी घाँसों पर हाथ रख कर इनके कान में उसने हँसते-हँसते पेशाब कर दी। यह बात बड़ी घृणा की भावना की मुद्रा बना कर आजाद ने मुझे सुनाई थी। इस घटना ने आजाद के दास मन पर क्या छाप छोड़ी होगी यह तो स्पष्ट ही है। जब कभी परिहास में आजाद मेरी बात को कुछ से

कुछ घुम जाते थे तो मैं उनको अपनी घाँसों पर हाथ रख कान ऊपर करके संकेत से चिढ़ाता कि माछूम होवा है कानों में उसका घनी तक कुछ भरस बाकी है। धाजाद सदा ही एक नैष्ठिक शूद्रधारी ही रहे।

खान-पान के सम्बन्ध में भी धाजाद अपने व्यक्तिगत सस्कारों से एक शाकाहारी प्राण्य ही थे। उनका घूमाछूत का सूत तो प० रामप्रसाद विस्मय के नेतृत्व में काम करने के समय ही उतर गया था। ए० एस० धार० ए० के नेता के रूप में वे मांस भ्रदि खाने के विरुद्ध तक विशेष नहीं करते थे मगर बहु उद्दे प्रच्छा कर्म नहीं लगता था। शिकार के कुछ खेलात ये मगर स्वयं मांस नहीं खाते थे। राजा साहब अनियाघाना के महीं में तो शिकार भी करता था और घुम्मम घुस्ता मांस भी खता था इस पर मुझसे वे कुछ नाराज भी हुए थे। भगतसिंह उ हैं दात्रियों और लत्रियों जैसे काम करने घामा के लिए मांस घने की प्रयोगिता नीतिमत्ता पर लेखपर झड़ कर धकार चिढ़ाया करत थे। सॉण्डस कर्म के समय जब धाजाद ने मुझे लाहौर बुलाया तो मुझे यह देख कर विस्मय हुआ कि धाजाद पर भगतसिंह का आदू घस गया और पण्डित जी' धर कच्छा घण्डा सीधा मुँह पर तोड़ कर ही गटक रहे हैं। मैंने हूरत से पूछा 'पण्डित जी! यह क्या!! धाजाद बोले, घण्डे में कोई हज नहीं है वैज्ञानिकों ने तो उसे फल जैसा ही बताया है। यह तक भगतसिंह का ही था जिसे धाजाद दुहय रहे थे। मैंने बड़ी सूषकता से कहा 'बिस्कुम ठीक पण्डित जी! घण्डा खल है

तो मुर्गी पेड़ के सिवा घोर कुछ नहीं हो सकती । मे भला सब उसे छोड़ेंगा ? भगतसिंह खिलखिला कर हँस पड़े— वास्तव में कैलाश ! तुम अच्छे तर्कशास्त्री हो सकते हो । भभा पण्डित भी को देखिए घाजाव बीच में ही बिगड़ कर वाले "बल के एक तो हमें घण्टा घिसा रहा है ऊपर से बातें बना रहा है ।

एक प्रकार से 'घाजाव' की गहादत के साथ ही सशस्त्र क्रान्तिकारी दम का घातकवादी रूप ही विघटित और समाप्त हो गया । भाई विभ्रयकुमार मिठा ने अपनी पुस्तक 'इम मडमान्स दी इन्डियन वेन्तीस' की भूमिका में भाई मयबनाथ गुप्त ने अपने 'सदम्भ क्रान्ति के इतिहास में तथा भाई यशपाल ने अपने 'सिहावलोकन में दम के घातकवादी रूप की विघटना के प्रश्न पर ऐतिहासिक रीति से प्रकाश डाला है । उन सभी बातों की विवेचना करने की यहाँ आवश्यकता नहीं है । संक्षेप में यहाँ यही कहा जा सकता है कि गुप्त पकयत्रात्मक घातकवादी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति अपना ऐतिहासिक कार्य पूरा कर चुकी थी और वह समाजवादोन्मुख होकर विस्तृत जनता और जन संघटनों की ओर बहने लगी थी । इस दशाब्दी के बहुधर्मसक में वेष्ट में सर्पत्र हो जैनों में बड़ी भारी सख्या में पड़े क्रान्ति कारियों में से १० प्रतिशत से भी अधिक ने व्यक्तिगत और सामूहिक रूप में मार्क्सवादी समाजवाद में अपना बिस्वास हो जाने की घोषणा कर दी थी । वास्तव में दम के गुप्त घातकवादी रूप की विघटना और उसके नेताओं द्वारा ही उस दल को विघटना की घोषणा होना क्रान्ति मार्ग में एक और घमसा

कदम था ।

मार्च सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय और यशपाल जी आजाद के अन्तिम दिन तक उनके साथ थे । उन्होंने बताया है कि अपने अन्तिम दिनों में आजाद बिस्तृत जनान्दोलन की आवश्यकता और गुप्त घातकवादी कार्यों के अथ और अधिक किए जाने की असामयिकता और असुपयोगिता को हृदयगम कर चुके थे और उन्होंने दल को विघटित कर देने का उपक्रम भी किया था । इस प्रकार आजाद अपने समस्त जीवन में उत्तरोत्तर निरन्तर प्रगति करते गए । वे एक महान् सेनानी थे ।

ऐसे महान् सेनानी के साथ बीमे हुए क्षण जीवन की अमूल्य निधि है । उनका स्मरण हृदय को पवित्र करमे वाला है । सतोष का विषय है कि अद्य य ० बनारसीदास अतुर्वेदी (सदस्य राज्य सभा) गत अनेक वर्षों से एल्फ इ पाक इनाहाबाद में आजाद का एक भव्य स्मारक बनाए जाने के लिए जो अपील करते रहे वह सफल हुई और उत्तर प्रदेश की सरकार ने वहाँ आजाद का स्मारक बनवा दिया है ।

अमर शहीद क्रांतिकारी सेनानी चन्द्रशेखर आजाद का स्मारक अधिशित कुसस्कार प्रस्त घरीबी में पड़ी हुई जनता का क्रांति के माग पर उत्तरोत्तर बढ़ते जाने का स्मारक है अदम्य साहस व्यावहारिक मूर्खबुद्ध, और साधियों के लिए हार्तिक स्नेह त्याग और यत्नवान के लिए सतत उत्प्रेरता के द्वारा प्राप्त नेतृत्व का स्मारक है और है साम्राज्यवाद के विरुद्ध आमरण हुई निःशर्यी युद्ध और समाजवाद की स्थापना के लिए निर्भयता से बढ़ते जाने का स्मारक ।

चन्द्रशेखर 'आजाद' के साथ

अमर सहीद चन्द्रशेखर 'आजाद' बाबोरी-यड्यम्प-जैस में करार घोषित होने के बाद भौंसी बसे आए थे और मोरछा के पास एक ग्राम में बह्मचारी साधु बनकर रह रहे थे। यहीं से उन्होंने अपने क्रांतिकारी दस के छिन्न-भिन्न सूर्यों को भिन्ना कर उसके पुनः संगठन का कार्य प्रारम्भ किया। गुप्त क्रांतिकारी जीवन में श्री चन्द्रशेखर के भिन्न भिन्न स्थानों में भिन्न भिन्न नाम रखे जाते थे। भौंसी में हम लोग उन्हें 'हृदिशकर' के नाम से पुकारते थे।

एक दिन 'आजाद' भौंसी में मेरे घर पर मेरे साथ बकेसे बठे बातें कर रहे थे। बातचीत दस और उसके संगठन के सम्बन्ध में ही हो रही थी। दस के सदस्यों की गोपनीयता और विश्वसनीयता पर बातें करते हुए उन्होंने मुझ से कहा— 'बसो सद्दु, मैं अपना घर तुम्हें दिखा सकूँ। मुझे अपने कामों पर सहसा विश्वास न हुआ मैं उनके मूँह की ओर देखता रह गया। वे कहते गए— 'मुझे विश्वास है, तुम घूम कर भी मेरे घर के विषय में कभी किसी से न कहोगे। मुझे महान् धारण्य और महान् प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपने घर तथा सम्बन्धियों

के बारे में अभी तक दस के किसी भी सदस्य को कुछ भी नहीं बताया था और हम सभी का कुछ ऐसा ही अनुमान था कि आजाद का घर-बार माना पिता का ही नहीं है। अब मामूम हुआ कि इनके भी घर है और माना-पिता हैं और मुझे उनके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त होगा। मेरा हृय नि सीम था। दस में प्रत्येक बात गुप्त रखी जाती थी। जिसका जिस बात से जितना सम्बन्ध रहता था उतना ही बात उस घटाई जाती थी। अतएव निश्चित था कि आजाद मुझको अत्यन्त निकट और विश्वासपात्र ही समझ कर घास घर बनने का कह रहे हैं। यह जानकर मैंने मन-ही-मन अपने आपका धन्य समझा।

मुझे याद है कि एक बार (इस समय तक मैं आजाद के घर ही आया था और उनके माना पिता से अभी मति परिचित भी हो चुका था) अमर शाहीद साथी सरदार भगतसिंह ने यों ही मजाक करते हुए कहा था—‘अरे पंडित जी इतना तो बता ही बीजिए कि आपका घर कहाँ है और घर पर कौन कौन है ताकि भविष्य में (यानी आजाद की मृत्यु के बाद) हमसे बन सके तो उनकी मयाघण्टि सहायता कर सकें और देवावासियों को एक शाहीद का ठीक परिषय दे सकें।’ हम भाया की दृष्टि से इसमें नायज हाने की कोई बात नहीं थी परन्तु आजाद की भाँखें एकदम बदल गई और अजब अ्यपूर्ण क्रोध के स्वर में वे बोले—‘क्या ? क्या मतलब ? तुम्हें मेरे घर से काम है या मुझसे ? पार्टी में काम मैं करता हूँ या मेरे घर के लोग ? मेरा घर कहाँ है मेरे घर पर कौन-कौन है, इस प्रकार मैं प्रश्न ही क्यों करते हो ? अंधारे भगतसिंह

सहम कर रह गए। हम सब भी चुपचाप सुनते रह। आजाद ने कहा— देखो रणजीत (भगतसिंह व दल का नाम), इस धार पूछा तो पूछा अब फिर कभी न पूछना। न पर बासों को तुम्हारी सहायता से मतभव है और न मुझे अपने जीवन खरिद ही लिखाना है। यदि तुम्हीं ऐसी बातें करोगे तो फिर गोपनीयता कैसे रहेगी? इतना गुप्त रहत थे आजाद अपने घर-बार के परिचय को और वे मुझे अपने साथ अपने घर अपने माँ-बाप के पास से जा रहे थे। आजाद के इस विश्वास ने मुझे क्या बना दिया मुझमें कितना जीवन फूँक दिया इसे मैं कैसे निर्मूल। आजाद के इस चरम विश्वास के आत्म-भौरक और उज्ज्वल गुरुत्व उल्लेखित्व का भार अनुभव करता हुआ माध-तरंगों में डूबता-उत्थान मैं मंत्री से उनके साथ रेलगाड़ी में बैठा-बैठा बसा जा रहा था।

मोपल पहुँच कर हमने उज्जैन के टिकट लिए। फिर उज्जैन और नागदा से टिकट खरीद कर दोहरे पहुँचे। इस धका से कि कहीं पुलिस को पता न लग जाए, हम अपने निदिष्ट स्थान का टिकट न लेकर जगह-जगह जहाँ गाड़ी बंद सनी पड़ती थी टिकट खरीद लेते थे। रेलगाड़ी के दोहरे स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़ी होने से पहले ही साथी आजाद ने प्लेटफार्म पर खड़े एक व्यक्ति (श्री मनोहरसास जी त्रिबेदी) की ओर इशारा करके मुझे बतसा दिया कि वे हमें लेने आए हैं। आजाद गाड़ी से उतर कर सीधे ही स्टेशन के बाहर चले गए। मैं सामान आदि लेकर बेल्गि-रूम में पहुँचा। मैंने मनोहरसास जी को बतसा दिया कि चन्द्रशेखर आ गए हैं और

यहीं से स्टेशन के बाहर चले गए। थोड़ी देर बाद आजाद आए और उन्होंने मनोहरसाल जी के पर छुए। मनोहरसाल जी का गला भर आया। उन्होंने आजाद के माता-पिता का कृष्ण समाचार दिया। मोटर-बस में बैठकर हम भोग भसी राजपुर रियासत के एक घाम भावरा में थीं मनोहरसाल जी के घर पहुँच गए। आजाद के माता-पिता भावरा में ही रहते थे। आजाद ने उनके पास स्वयं आने को कहा परन्तु मनोहरसाल जी ने मना करते हुए कहा 'मैंने उन्हें इतना कर दी है बादा आते ही होंगे।

थोड़ी ही देर में दरवाजे में से मुझे दिखाई दिया कि एक अपिकल्प्य वृद्ध पुरुष जिनके सिर और दाढ़ी क केना सफ़ेद हो गए हैं अल्दी अल्दी पैर बड़ाए लले आ रहे हैं। उनके रंग धावति और धरीर के गठम से ही मैं समझ गया कि ये आजाद के पिता हैं। साथी आजाद ने आगे बढ़ कर पिता जी के चरण छुए। पिता ने अपने इकलौते पुत्र को छाती से लगा लिया। स्पष्ट ही दीख रहा था कि पिता जी अपने भापको सयत रखने का बहुत प्रयत्न कर रहे हैं परन्तु अभुधारा उनकी भ'सों से बह ही निकली और अन्ततः वे सिसक सिसक कर रोने लगे। दादा की सिसकियाँ बढ़ते देख कर प्रम विह्वल आजाद ने दो बार दादा, दादा कहा। अर्थ स्पष्ट था 'दादा, मुँह से आवाज नहीं निकालनी चाहिए क्योंकि लोगों को यह महसूस नहीं होना चाहिए कि मैं यहाँ आया हूँ नहीं तो मेरे आने की खबर पुलिस तक पहुँच जा सकती है। बेचारे वृद्ध पिता ने 'दादा दादा इन्हीं दो शब्दों से ही अपने पुत्र की सकटापन्न

स्थिति को भली भाँति समझ लिया और वे पुनः अपने प्रापको सयत करने का प्रयत्न करने लगे। श्री मनोहरलाल की भी माँसों से धन्युभारा वह रही थी। उन्होंने दादा का हाथ पकड़ कर कहा कि भन्दर कमरे में जसो चाची (घाजाद की माता) जाती होंगी। इस प्रकार भय और भावना के बातावरण में दस वर्षों से बिछड़े हुए पिता पुत्र का मिलन हुआ।

थोड़ी देर बाद बूढ़ा माता भी आई और सीधी कमरे में चली गई। घाजाद ने माता के चरण छुए और पकड़ कर बठा दिया। माँ पुत्र का सिर गोद में ले घिम्कुल हृदय से बिपका कर चुपचाप रोती रही। उसके मुँह से शब्द नहीं निकला। वह अपने बच्चे की परिस्थिति को भली भाँति समझती थी और उसने इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा कि अंग्रेज सरकार के मेडिया को उनके बच्चे की गन्ध न घ्रा जाए। बेचारी मुँह सोल कर रो भी न सकी।

इसी समय मैंने देखा कि माता जी के दाहिने हाथ की मध्या और अनामिका दो अंगुलियाँ एक भागे से बँधी हैं। मैंने उस समय कुछ ऐसा ही समझा कि कोई भागा ऐसे ही अंगुलियों से लिपट गया होगा। उस समय इस घोर मैंने विशेष ध्यान भी नहीं दिया। परन्तु जब मैं घाजाद के साथ उनके घर पर गया तो अम्मा दरवाजे के सामने गोबर से सीप रखी थी और मेरी दृष्टि फिर उन्हीं बँधी हुई अंगुलियों की ओर गई और तब मुझे स्पष्ट दिखाई दिया कि अंगुलियाँ वास्तव में किसी प्रयोजनपूर्ण रीति से बाँध कर रखी गई हैं। मैं उस समय तो चुपचाप रहा। बाद में अक्सर मिसने पर एकान्त

में आजाद से पृथक्-साथ करने पर मासूम हुआ कि माता जी ने एक मनौती के रूप में ये प्रणतियाँ बाँध रखी हैं कि उनका पुत्र चन्द्रशेखर जो दस बय से सापता या घर आ जाए ।

हम चाहते थे कि शीघ्रातिशीघ्र आबरा से बस दें क्योंकि यह आशंका सदा रहती थी कि कहीं किसी प्रकार किसी को यह पता न बस जाए कि क्रान्तिकारी दल का मुखिया हिन्दुस्तान-समाजवादी प्रजातन्त्र सेना का प्रधान सेनानी चन्द्रशेखर आजाद जिसकी गिरफ्तारी के लिए ब्रिटिश सरकार का पुलिस मदियो में आस और कुर्छों में बाँस डाल रही थी अपने माता पिता से मिलने अपने घर आया है । हम प्रायः निरत्य ही आबरा से बस देने का उपक्रम करते थे और निरत्य ही हमें एक जाना पड़ता था क्योंकि आजाद के माता पिता की दशा अपने पुत्र के एक सम्वे वियोग के बाद हुए इस मिलन और फिर तत्काल ही अनिदिष्ठ कास के लिए वियोग के समुपस्थित होने पर अवणनीय रीति से कल्याणजनक हो जाती थी । महान् साहसी आजाद अपने माता पिता को इस प्रेम विह्वल दशा में उनसे विदा लेने का साहस नहीं कर सकत थे । इस प्रकार पाँच छ. दिन निकस गए ।

इन दिनों मेरा कार्यक्रम यही था कि सुबह घाम आजाद के साथ आबरा घाम की निकटवर्ती पहाड़ियों पर चक्कर लगाया गस तक ठूस कर भोजन करना और दिन हो या रात सुब सोना । मेरे साने से आजाद भी तग आ गए । उम्हनि कहा भी— 'सबू, कितना सोते हो तुम । दिन रात एक कर रहे हो । तुम्हें हो क्या गया है ? इतना छो सुन कभी नहीं

ये । मगर मैं करता क्या । घम्मा जी जा खूब खिला देती थीं, मना करने पर भी परोसती जाती थीं । भोजन कम करने पर ये माराज हो जाती थीं । अधिक खिलाने में ही उनको सुख मिलता था (मरते दम तक उनकी यही भावत रही) उनके धानन्द को देख कर अपने पेट पर धम्याचार करना कुछ बड़ी बात न लगती थी । मगर इतना सा धाने के बाद सिखा सोने के घोर हा नी क्या सकता था । जब धाम्मा ने मेरे अधिक सोने पर धापति की तो मैंने कुछ कम खाने की वेष्टा की । इस पर घम्मा जी माराज ।

भाबरा में हम दोनों मनोहरसाम जी के मकान पर ठहरे थे । उन्होंने हमारे भोजन धानि का प्रबंध अपने यहाँ ही किया था । एक दिन हमने भोजन बहाँ किया भी । यही ठोक मी था क्योंकि लोगों को यही बताना था कि हम दोनों मनोहरसाम जी के प्रतिधि हैं चन्द्रशेखर अपने माँ-बाप से मिलने आया है यह बात प्रकट नहीं होनी चाहिए । परन्तु घम्मा जी इसे मना कर सहन कर सकती थी कि इतने दिनों के बाद घर आए हुए अपने पुत्र और उसके मित्र को अपने हाथ से बना कर न खिलाएँ । उन्होंने धाम्मा को बहुत डाँटा अपने घर भोजन न करके बहाँ क्यों किया ? धाम्मा ने उन्हें बहुतेरा समझाया पर वे समझ न सकीं । फिर हमें दोनों बसत घम्मा जी के यहाँ ही भोजन करना पड़ा । मनोहरसाम जी को हमें चाय आदि पिला कर ही संतोष कर लेना पड़ा ।

उस समय भाबरा में श्री ठाकुर गजराजसिंह तहसीलदार थे । उन्होंने ही श्री मनोहरसाल को यह विश्वास दिलाया था

कि आजाद के माबय में अपने माँ-बाप के यहाँ रहने की किसी को खबर न पड़ेगी । इस सम्बन्ध में वे आजाद की यथाशक्ति सहायता करेंगे । इसी आश्वासन और विदवास पर श्री मनोहर सास ने आजाद को भावरा बुलाया था । इन तहसीलदार साहब से आजाद का परिचय करा देना उचित समझ कर मनोहरसास जी हम दोनों को तहसीस में स गए । वहाँ तहसीलदार साहब ने मेरे बारे में पूछताछ करके जान लिया कि मैं आजाद का साची और मित्र हूँ । इसलिये उनके साथ चला आया । आजाद से उन्होंने साँची देर बातचीत की और हम चले आए । हमें तहसीलदार साहब बड़े विद्वत्सनीय सज्जन लगे । परन्तु हम भोग तो वे गुप्त कान्तिकारी । हृदय तो हमारा प्रत्येक मनुष्य को विद्वत्सनीय ही मानना चाहता था परन्तु कटु अनुभवों ने हमारे दस के लिये यह नियम ही बना दिया था कि हम पूरा विदवास किसी पर भी न कर । कान्तिकारी जीवन में जहाँ अपने जैसे ही अन्य साधियों के संग से होना वांछा उत्साह और हर्ष था साधियों के निम्बाय त्याग और बसिदान से होने वाली अनिश्चयनीय जीवनशामिनी अमृतमयी अनुसूति थी वहाँ इस गोपनीयता और अविदवास के नियम ने जहर भी कुछ कम नहीं घोसा था ।

किसी कारण एक दिन तहसीस में सिपाहियों की घामद एत अधिक रही । श्री मनोहरसास के मन में ठका हुई । उन्होंने अपनी दाका आजाद से प्रकट का कि आज घाने में निपाही अपशाइत कुछ अधिक है, कहीं तुम्हारे यहाँ होने की खबर तो पुलिस का नहीं लग गई । सम्पा का खबर था ।

घड़क रहा था परन्तु धाजाद बिल्कुल ऐसे प्रागे बढ़े जैसे कोई बात ही न हो ।

हम लोग तहसील की घोर मुड़ कर अपने घर चले गये और सिपाही वहीं रुके रहे । आते हुए हमने तहसील की घोर देख कर मासूम कर लिया कि आज वहाँ अपेक्षाकृत अधिक सिपाही हैं । घर आकर हम बैठे और नियमानुसार कपड़े उतारे हाथ-पाँव धोकर भीतर कमरे में पहुँचे जहाँ भग्ना में धानियाँ परोस रखी थीं । मैंने धानो अटा पीछे हटासी ताकि मुझे दरवाजे में से बाहर की घोर दिखाई देता रहे । मुझे सहसा याद आया कि कोट जिसमें पिस्तौल रखी है बाहर ही टंगा है । जोध उठा और कोट खूटी से उतार कर मैंने अपने पास रख लिया जहाँ मैं पाना पाने बैठा था । अभी तक हम लोग ने भाजन शुरू नहीं किया था । बिधि विधान और बीके के कट्टर पाबन्द दादा को यह बात बहुत बुरी लगी कि मैंने उठकर कोट छू लिया और तिस पर भी उसे पास साकर रख लिया । वे पूछने लगे क्या बात है ? मैं उत्तर देने ही वाला था कि मनोवैग वहीं गिर तो नहीं गया परन्तु धाजाद बीच ही में बोस उठे "दादा !" इन दो अक्षरों का जो आशय था उसे समझने में दादा को देर न लगी । वे चुप हो गए । भग्ना ने दादा से कहा— "तुम्हें भी परोस ई खालो । नहीं तो बैठ ही जाओ लड़े क्या हो ? फिर धाजाद की घोर देखकर कहा— 'दादा, जाओ तुम । परन्तु दादा कमरे में बाहर निकल कर लड़े हो गए । मैंने धँधरे में ही देखा कि एक सिपाही फटक के बाहर बीच सड़क

में सड़ा है। मैंने आजाद को इशारा किया। आजाद ने भी उसे गौर से देखा। मैंने सामा घुस कर दिया था। आजाद ने कहा कि तुम सामो घौर स्वयं उठ सड़ हुए, घम्मा ने डाँटा कि यानी परोसी हुई है बँठ कर सामो। क्या है घाम्भिर बाहर, मैं देखती हूँ। दादा ने बाहर आकर मियाही से वृद्ध-छाछ की तो उसने बताया कि वह पड़ोसी क इन्तजार म है। पड़ोसी के बाहर घा जाने पर वे दामो चले गए। हम दोनों भोजन करके सीधे मनाहरमाल जी के घर चले गए। थोड़ी देर बाद हम सोर्गों ने अंगल में रात बिताने का निदेष्य किया और चले गए।

बस्ती से लगभग दो फर्मांग की दूरी पर एक छोटा सा तालाब है जिससे गाँव का काम चलता है। इसके चारों ओर बड़े-बड़े घने पेड़ लगे हुए हैं। इसी स्थान से पहाड़ी जंगल का प्रारम्भ होता था। तालाब के किनारे घने वृक्षा के बीच एक टूटी हुई मडिया है महादेव जी की मूर्ति स्थापित है हमने इसी मडिया में रात्रि व्यतीत करना प्रच्छा समझा। आजाद तो सटते ही धीघ्र धुरटि करने लगे लेकिन मुझे नींद नहीं। लगभग एक बंटे बाद कुछ ही दूरी पर सड़क से जाती हुई एक माटर का प्रकाश मुझे दिखाई दिया। थोड़ी देर बाद एक दूसरी मोटर भी निकसी। मुझे शका हुई। मैंने आजाद को जगा दिया और कहा कि अभीराजपुर से दो मोटरें आई हैं। हमारी यह शका कि हमारे यहाँ घाने का समाचार पुलिस को मिल गया है सत्य-सी भासूम होने लगी। आजाद ने अपने निदिष्य स्वभाव से कह दिया— 'देगा जाएगा। रात में तो

कोई यहाँ घान का नहीं सुबह देता जाएगा। घोर हजरत फिर घुरटि मरने लग। पर मुझे नींद कहीं? नहीं पता कटका घोर मर बान लड़े हुए घोर हृदय में घुकर-घुकर शुरू हुई। सामने ही घाजाव घैन से पड़े घुरं-घों लगाए थे। उस गेज मेरी समझ में आया कि किसी उष्य घादघ के लिए बिपलि में पड़ने को तैयार रहना घोर घात है घोर स्वामाधिक निडरता घोर निधिन्तता कुछ घोर बात है। एक मैं था, जिसको बहुत सोने के लिए घाजाव मारे ही डाँट घुके थे घोर जो यहाँ सारी गत जागता पड़ा रहा घोर एक घाजाव से जो ठाठ से पड़े घुरटि से रहे थे।

मैं पिस्तील पर हाथ रखते रात मर जागता पड़ा रहा— यह सोचता हुआ कि यदि कोई इधर से आया तो क्या करूँगा घोर उधर से आया तो क्या करूँगा? घेंघेरा था ही। मैं इधर-उधर करवट बगल रहा था। मुझे ऐसा लगा कि मेरा हाथ किसी लम्बी बिकमी मुसामम रेंगती हुई पीठ पर पड़ गया। मैं हड़बड़ा कर उठ बैठा घोर फिर मैंने घाजाव को जगाया 'उठो उठो देखो साँप मासूम होता है।' घाजाव जाग तो गए पर उठे नहीं। घेंघेरे में सेटे-सेटे ही हाथ से इधर-उधर टटोल कर बोले कि कहीं कुछ नहीं है, सो आधा। मैंने झुंझुका कर कहा कि उठो माबिस साम्रो कहीं है? घाजाव दरमीनाल से उठे। माबिस जमाई गई। इधर-उधर यों ही दक लिया घोर 'कहीं कुछ नहीं है घोड़ी देर घोर सो लो। बहुर फिर घुरटि मरने लगे। रात कितनी बड़ी होती है घोर कबियों को उष्य युग के समान लम्बी होने की

कल्पना कैसे आती है यह पहली बार मुझे इसी रात में मग्न में आया ।

आखिर सबेर हो ही गया और आजाद ने बड़ी स्वस्थता और इरमीनान से उठ कर धगड़ाई ली । थोड़ी देर में मनोहर मास जी वहाँ आए । उन्होंने बताया कि जैसे तो कोई खास बात मासूम नहीं होती फिर भी अब यहाँ से आजाद को बसा ही जाना चाहिए । हम लोग मनोहरलाल जी के साथ छोटे और सीपे मोटर-स्टैंड पर चले गए, जहाँ हमारा सामान मनोहरलाल जी ने भिजवा दिया । माता जी के पास जाना उचित न समझा गया और हम उनसे विदा लिए बिना ही चले आए । माता जी हमारे लिये खाना बनाए रखें रही और हमारी प्रतीक्षा करती रहीं ! मुझे नहीं मासूम आजाद को फिर कभी अम्मा के हाथ का बनाया खाना नसीब भी हुआ कि नहीं और आजाद के लिए अम्मा की यहो प्रतीक्षा क्या फिर प्रतीक्षा रही ? २१ वष याद मुझे तो फिर उसी कुटिया में माता जी की स्नेहसिक्त रोटियाँ मिलीं । और इसे औभास्य कहूँ कि दुर्भाग्य कि माता जी की अन्तिम पिण्डोत्सव क्रिया भी मेरे हाथों से ही सम्पन्न हुई !

—सदाशिवराव मलकापुरकर

यश की धरोहर

सितम्बर १९६६ की बात है। हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के धरम सहीद सरदार भगतसिंह भादि अधिकांश सक्रिय सदस्य मॉण्डस वष धीर प्रसेम्बरी में बम फेंकने के सम्बन्ध में पकड़े जा चुके थे धीर उन पर साहौर में केस चल रहा था जिनका नाम सरकार ने 'यू० पी० पंजाब कांसपिरेसी केस' रक्खा था। तब के नेता धरम सहीद बन्द्रोत्तर धाजाद उन दिनों अपने कुछ अन्य बड़े-बुड़े साथियों के साथ (जिन्हें सरकार ने फरार घोषित कर दिया था धीर जिनको पकड़ने के लिए मन्डे-मन्डे इनामों की घोषणा कर रक्खी थी) ग्वासियर में थे। उत्तर भारत में पुलिस की धरगर्मी अत्यधिक बढ़ गई थी धीर सर्वत्र उस्ताही नबपुषक कान्तिकारी होने के सन्देह में पकड़े चकड़े जा रहे थे। धाजाद ने सोचा उत्तर भारत में तो काफ़ी कान्तिकारी वेतना जाप्रत हो चुकी है अब बरा दक्षिण की धीर भी ध्यान दिया जाय। कुछ कान्तिकारी बहम-ग्रहस वहाँ भी फिर जाप्रत हो। उन्होंने धपना एक बेग्न दक्षिण भारत में भी स्थापित करने की योजना बनाई। धरम सहीद राजगुष पहले ही महाराष्ट्र चले गये थे धीर उत्तर कान्तिकारी संगठन का कुछ काम उन्होंने प्रारम्भ

भी कर दिया था। आजाद ने भाई सदाशिवराव मसनापुरकर और मुक्त को राजगुरु का पता लगा कर उनके पास चले जाने की आज्ञा दी और भाई विद्वनाथ वसन्त्यायन को अपने साथ रस लिया, यह कह कर कि राजगुरु के पास हमारे पहुँच जाने के बाद वे भी वहाँ चले आवेंगे।

ग्वालियर की बम फैक्टरी का बहुत सा सामान बम बनाने के कुछ रासायनिक पदार्थ दो जीवित बम दो पिस्तौलें और कुछ कारतूस लेकर हम लोग ग्वालियर से चले। हमें साथ लिए हुए सामान के साथ राजगुरु के पास पहुँचना था। परन्तु हम सारे सामान के साथ पहुँच गए मुसावस के पुलिस साक्षरों में। और हमारी इस असफलता के लिए साहस (!) और बीरता (!!) का बिडारा पीटते हुए अक्षरों में समाचार दिया— 'भ्रष्टी के घेर कटघरे में ! मैं खूब समझ सकता हूँ कि इस समाचार को पढ़ कर आजाद ने होठ काट लिए होंगे और यदि कोई पास में होगा तो उससे कहा होगा—“इन बेवकूफों का तो कोट मार्शल होना चाहिए।

हमारी द्रुम मुसावस स्थान पर पहुँची। संध्या का समय था। हमें राजगुरु का पता लगाने के लिए अकोला जाना था। अखण्ड मुसावस पर अकोला के लिए द्रुम बदलनी थी। भाई सदाशिव ने एक कुली का बुलाया और उससे सामान अकोला की गाड़ी पर से चसने का कहा। मुसावस स्टेशन बम्बई प्रान्त का द्वार ठहरा। यहाँ एकसाइड पुलिस तनात थी जो अफ्रीम गाँजा चरस, भग आदि के लिए मुसाफिरों के सामान की तलाशी लेती थी। इस बात का हमें कोई ज्ञान न था। कुली

सामान लेकर धागे-धागे पता धौर हम लोग उसके पीछे-पीछे । वह भनामानस सीपा वही से गुजरा जहाँ एक्साइज पुलिस वाला मुसाफिरा के सामान की तलाशी ले रहा था । उसने हमारे कुली को भी रोका धौर सामान दिखाने को कहा । पुलिस वाला खानदेशी मराठी बोल रहा था । सदाशिव धागे पड़े धौर उन्हाने उस समझने की कोसिश की । मगर वह समझता ही न था । कुली सिपाही धौर सदाशिव में 'भ्रमसा भ्रमसा होने लगी । मैंने समझ लिया अब कुछ गडबड़भ्रमसा होता है । मेरी जेब में एक टूटा पिस्तौल था धौर उसके कुछ कारतूस पड़े थे मैंने उन्हें सम्भाला । मैंने सदाशिव को इशारा किया छोड़ो इस गडबड़भ्रमसा को । कुली धौर पुलिस वाले को उसझने दो, हम लोग सिसक । मगर सिसकें कैसे ! आबाद का प्रिय माउण्टर पिस्तौल तो बक्स में रक्खा था धौर बक्स कुली के हवासे था । उसे छोड़ कर भला सदाशिव कैसे सिसक सकता थे । वे 'भ्रमसा भ्रमसा तसला भ्रमसा' करते ही रहें । मैं मजबूर था सदाशिव सिसक तभी तो मैं भी सिसक सकता था । भ्रमल में भी उस झमेले में लगीक हो गया । मैंने कहा—' क्यों हुज्जत करते हो ? धरत क्या है बक्स में । वस तुम्हें तो गाड़ी पुकवाने से काम । लीजिए साहब के लीजिए तसारी । कुछ बीदक की बबार्हमों की लीजियी हैं । हममें न भ्रमलीम है न गाँजा न भाँस न चरस । धौर बक्स खोलकर जल्दी-जल्दी उसको सामान दिखाने लगा ।

धरत से ऊपर आबाद का वह प्रिय माउण्टर पिस्तौल ही रक्खा था । उस पर एक कपड़ा पड़ा था । मैंने उसे कपड़े

सहिन उठाया और धमक रसते हुए कहा—'सोजिए बेसिए सब दवाइयाँ हैं इनमें कहीं कोई अफीम गाँजा वगैरह नहीं है। मैंने माउजर तो बचा लिया और उसे वह सिपाही देख नहीं पाया। मगर होनहार की बात है सदा के प्रत्युत्पन्नमति भाई सदाशिव को यह न मूमने कि माउजर को अपनी बगस के हवासे करे। उयर वह पुलिस वाला भुँकना के बमो इस शीशी को देखने लगा कमी उमका। म बड़ी मनमनसाहठ से उसके प्रति बड़े भदब से उन दवाभा के गुण बढ़िया सस्कत में उसे बताने लगा। परन्तु पुलिस वाला एकदम रुम्ना भादमी था वह न मेरी धाराप्रवाह सस्कत से पसीजा न स्वच्छ नहर की पोशाक के रीब में धाया और न बाह्यग समक कर ही उसने हमारा काई लिहास किया। अन्तत उसने उस पुड़िया को उठा ही तो लिया जिसमें हम भागों ने माउजर पिस्तौल के कमानोबन्द १० कारतूस खुदिमानी करने जेय में न रख कर बकस में ही रख लिए थे। मैं कुछ इयर उयर कर सकूँ इसके पहले ही उसने पुड़िया सोल डाली और कारतूस देख कर उधस कर बोला— कारतूस ! अब बताइये इन्हें मैं किस मर्ज की दवा बताता ? मानना पड़ा कि हूँ साइब हूँ ता कारतूस ही। पुलिस बासे मे मोटी बजाना गुरू कर दिया और सारे स्टेशन में पुलिस की बीड-धूप गुरू हो गई।

मैंने भी अपनी बीसी-डासी धाती कस ली, हाथ का घटंभी केस दूर फेंक दिया गस का बुपट्टा भा धमक भटक फेंका और सदाशिव को इतारा किया कि उठाया और बसो। मगर भाई सदाशिव को माउजर पिस्तौल उठाने का मीका न मिला। वे

पूरे मन भर का बक्स मय कुल सामान बम पिस्तौल चीदी
 भादि उठा कर चले। अपने दूटे छोटे पिस्तौल से एक दो
 फायर करके मैने भीड़ में से रास्ता बनाया मगर स्पान जाता
 मुना न था। मैं जो किसी प्रकार रेनिंग को फौदफूद कर
 सड़क पर पहुँचा तो देखता हूँ कि सामने पुनिस साकघप है।
 कड़ाही से उधस कर चूस्ते में आ रहा हूँ। इधर एक सिगाही
 घुरी तरह मेरे पीछे पड़ा था। उसे डराने के लिए मैने अपने
 दूटे पिस्तौल से एक फायर उसे बधात हुए किया। वह मुड़क
 कर गिर पड़ा। सायब गिट्टी की परोब उसके घुटने में घाई
 हो जिसे घाब में उसने गोली की कुरोंब ही घताया घौर
 बहादुरी के लिए उसने पुनिस मैडन प्राण किया। उधर पीछे
 मुड़ कर देखता हूँ तो सदाशिव नजर ही नहीं घाए। इधर
 उधर देखा तो समझ में घाया कि भाई सदाशिव अपने बक्स
 के साथ घादमियां के डेर में नीचे बड़े पड़े है। भागते हुए
 सिगनल के तारों में उनका पैर उलभ्र था या जो कुछ हुआ
 हो बे गिर पड़े घौर उनके ऊपर उनके पीछे दौड़ने वालों का डेर
 लग गया। मेरे दूटे पिस्तौल ने बिसेसे एक ही गोली बसाय
 जा सकने की घाधा बी तीन गोमियाँ निकलीं घौर फिर
 बेकार हो गया। साधार मैने उसे फेंक दिया।

भाई सदाशिव में घौर घाजाद का बहु प्रिय माउजर
 पिस्तौल तीनों पुनिस साकघप में पहुँच गए। यहाँ यह स्पष्ट
 कर देना चाहिए कि उस समय के क्रांतिकारियों के लिए
 पिस्तौल कोई बड़ बस्तु नहीं होती थी प्रत्युत बहु एक प्रिय
 साथी होता था जिसे बड़े साङ्ग्यार से पाला जाता था। एक

माँ का जा नमस्कार करने पुत्र के लिए इच्छा है। मैं ही हूँ।
 मन्त्र एक शक्तिशाली का ध्यान रखना है। मैं ही हूँ।
 कम से कम ध्याना का ध्यान रखना है। मैं ही हूँ।
 या घोर फिर सदाशिव नौ हा नन्दी के उल्लेख है। मैं
 ध्याना के प्रिय मातृवर विन्नेव के उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 पकड़ा जाएगा भा मर जाएगा। मैं ही हूँ। मैं ही हूँ।
 बितनी इस विस्तार के लिए जाने में हलो। बाद (विष्णु)
 की कदर धमी तू क्या जान। नर उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 को इस डीट का सन्निधि मृत बुद्ध है। विष्णु के उल्लेख है।
 के उल्लेख विस्तार को बही पुस्तिक के उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 कैसे माग सकते थे। धमी ध्याना के उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 बहुत कुछ करना बाकी था।

हम लोगों ही सरलतः भगवन्निह उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 पसने वाले 'यू० पी० पंजाब पदमत्र कर्म' के उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 पोषित किम जा बुद्धे थे। जब बुद्धके उल्लेख है। मैं ही हूँ।
 इस प्रकार पकड़ लिए गए ती हनन नौ यही ध्याना की कि
 हन को यथासम्भव दीध्र ही धपने ध्यापियों के पास माहारा
 भेज दिया जाएगा। पुस्तिक हमका साहीर न नी गई पदमत्र
 हमारे दुर्भाग्य से हमार विरुद्ध पदमत्र के धमियाग का विरुद्ध
 करने के लिए खिलाए पकड़ाए जा 'साथी पुस्तिक न तैयार किए
 थे, उनमें अधिकांश धमियुक्त को पहचानने के लिए हुई परह
 में हमको पहचान न सके। तीन एप्रुवरों में से एक हसयज
 बोहरा धपने पक्ष पर ऐन मीके पर धरमा गया, घोर मय हा
 स्यास है कि उसने मुझे जान-बूझ कर नहीं पहचाना—येप दा

(जयगोपाल और फणीन्द्र घोष) ने ही पहचाना। कुछ भी कारण हुआ हो हमें यह देखकर बड़ा बिपाण हुआ कि हम लोगों को भगतसिंह आदि अपने साधियों के साथ साहौर में नहीं रखा गया प्रत्युत वापस साबर जलगाँव में हम पर अलग से केस चलाया गया।

माई सदाशिव जब से पकड़े गए सभी से कुछ न कुछ योजना ही बनाते रहे। पहले तो उन्होंने यह कोशिश की कि यदि किसी तरह कोई एप्रूबर उनके पास ला दिया जाए, तो और नहीं तो दासों से ही उसका गला काट कर वे उसको यमपुरा पहुँचा दें और इस प्रकार ऐसा कुछ कर जाएँ, जिससे आजाद को यह लग कि उनका प्रिय माउजर पिस्तौल ब्यर्थ ही नहीं बना गया। इसके लिए उन्होंने पुलिस बामो को बकमा देने का काफ़ी प्रयत्न किया। परन्तु माई सदाशिव सच्चाई उत्साह सगन, साहस और वीरता के ही धनी हैं। आमाकी और बकमे वाली में वे पुलिस से पार न पा सके।

जलगाँव में मजिस्ट्रेट की अदालत में हम लोगों पर केस चला। हमारे बिरुद्ध गवाही देने के लिए साहौर केस के वे दोनों एप्रूबर जयगोपाल और फणीन्द्र घोष भी लाए गए। माई सदाशिव को फिर कुछ सूझी कि क्या इन एप्रूबरों का यहाँ कुछ नहीं किया जा सकता? ये सेशन अदालत में केस चमते समय फिर आएँगे। वह माउजर भी अवासल के कमरे में केस सम्बन्धी प्रदर्शित चीजों में रखा होगा। क्या वहाँ उसका कुछ उपयोग नहीं हो सकता? उन्होंने मुझ से समाह की। मुझे भी उनकी बात प्योनी। जिन्दगी भर जेल में सड़कर क्या

करेंगे ? हो सके तो कुछ करना चाहिए। यदि आजाद के माउज़र का मूल्य बसूल किया जा सके तो इससे अच्छा और क्या हो सकता है। यदि हम उन ऐम्बुवरों को मार सकें तो फिर और क्या चाहिए।

माँसी के सुप्रसिद्ध काँप्रेसी नेता श्री २० वि० घुसेकर, एडवोकेट हमारे केस की निःशुल्क परबी करने के लिए अदालत में घाटे थे। हम लोग इस समय सेघन सुपुद होकर घुमिया खेल में थे। वहाँ से श्री घुलेकर जी को पत्र लिखकर हम में मुलाकात के लिए बुलाया। बकीम होने के नाते वे हमसे इस प्रकार मुलाकात कर सकते थे कि हमारे बीच होने वाली बातों को जैल के अधिकारी या पुलिस वाले न सुन सकें बस हम को दूर से देखते भर रहें। भाई सदाशिव ने अपनी योजना उनके सामने रखी और उनसे उसे आजाद के सामने रखने का अनुरोध किया। हम लोगों का कहना था कि बस एक पिसतौल आजाद हमारे पास भेज दें, फिर हमसे इधर जो बन पड़ेगा, हम कर गुजरेगे। घुलेकर जी ने हमारा सदेघ आजाद के पास भेज दिया। घुसेकर जी का आजाद से परिचय था और वे क्रान्तिकारियों की यथाशक्ति सहायता करते रहते थे।

इस समय तक आजाद ने साहौर पड़मन्न केस के सम्बन्ध में कुछ धर-पकड़ से दल जो छिन्म-मिन्न हो गया था उसके सूत्रों को फिर से जोड़ लिया था। वे और श्री भगवती चरण (साहौर केस के प्रधान करार अभियुक्त) दोनों ने मिल कर दल को फिर से सगठित कर लिया था। आजाद को

श्री धुसेकर द्वारा हमारा यह संदेश मित्रा तो उन्होंने हमारी श्रुति धीर उत्साह पर पूरा भरोसा न करके श्री भगवतीचरण को सारी परिस्थिति स्वयं समझने के लिए भेजा। श्री भगवतीचरण सदाशिव के बड़े भाई श्री शंकरराव मलकापुरकर के साथ जलगाँव धीर धुमिया घाये। वे एक एडबोकेट बनकर हम लोगों में भी जैम में मिले धीर उन्होंने हमारे उत्साह धीर हमारी योजना की जाँच की। निश्चित हो गया कि एक पिस्तौल धीर अन्तिम प्रादेश तथा हिवायतें हमें समय पर मिल जाएँगी। पिस्तौल हमारे पास जैम में भज देने का सारा प्रबन्ध धमर शहीद श्री भगवतीचरण धीर श्री शंकरराव मलकापुरकर ने किया।

जलगाँव की संधान प्रदासत में हम लोग का कस प्रारम्भ हुआ। २१ फरवरी १९३० को साहौर के बदनान एप्रुवर हमारे बिरुद्ध धपनी गवाही देने वाले थे। इनके पहले प्राजाय की हिवायतें हम लोगों को मिल गयीं थीं— 'यदि परिस्थिति ऐसी हो हो कि एक ही एप्रुवर को मारा जा सके तो फणीन्द्र घोष को मारा जाय। दोनों को मारा जा सके तो दोनों को मारा जाय परन्तु दामो को मारने के उद्योग में कहीं ऐसा न हो कि वे बच जाएँ धीर कोई शकत प्रादमी मारा जाय। तुम दोनों को इस काम में पड़ने की प्रावश्यकता नहीं है। केवल मगवानदास ही यह काम करे। इस बात का प्रयत्न किया जाय कि सदाशिव को इस केस में परीसा न जा सके। दोनों को फाँसी पड़ने की या सड़ कर मरने की जरूरत नहीं है। यदि इससे कुछ अधिक हो सकता हो, तो सदाशिव धपनी सूत्र-

शुक्र से काम से। ये हिनायतें हम लोगों को श्री २० वि० घुम कर एडवांकेट के द्वारा जबानी मिली थीं। बेचारे सदाशिव का मूंह उतर गया। उन्हें मुझमें बड़ी ईर्ष्या हुई। दन में निश्चाना मारने में लोगों की अपेक्षा मैं अधिक कुदास समझ जाता था। घतएव एप्रुबरी का मारने का काम आजाज में मुझे सौपा। बेचारे सदाशिव की सारी योजना का श्रेय मुझे मिलने लसा। बस अब सदाशिव यही मना सकत थे कि मुझे किसी तरह बलार भा जाय या ऐसा ही कुछ हो जाय जिससे मैं इस कार्य को करने में अममर्द हो जाऊँ और वे अपनी योजना को अपने हाथों से पूरा कर सकें।

२० फरवरी की शाम को सदाशिव के बड़ भाई राजर राव लामे के साथ भाग के बड़ से कटोरे में एक मरा हुआ पिस्तौल सब-जेस में हमें दे गए। हम लोग प्रयोजनपूर्वक पिछले पाँच महीनों में इतने सीधे-सादे जूँदी बन गये थे कि हमारे पहरे के पुनिश वालों का हम पर असीम बिक्राम हो गया था। उनको गाना सुना कर, उनकी हित-कामना करके हम लोगों ने उनको अपना मित्र बना लिया था और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि हम देश के लिए बैस में बंद थे इस कारण ही उनका हमारे प्रति स्वाभाविक सद्भाव था। हम लोगों ने अपनी सुविधा के लिए कभी उनको तंग नहीं किया और न कभी कोई ऐसी शिवायत ही अपने सम्बन्ध में होने दी जिससे उनका ऊपरी अकसर उन पर माराज होत। हम स्वयं उनसे अपनी तलाशी कायदे से न सेने को कह दिया करते। अधिकारियों का हमारे लिए यह धादेस था कि अब हमको अपनी कौटरी से निकास

जाय तो कौन हथकड़ी लगा दी जाय । परन्तु हमारे मित्र
 पहर वाले न ता तमाची के लिए ही बिलेप प्रायश्च करत थे,
 न हमें हथकड़ी लगाने के लिए ही । उल्टे हम ही उनसे यह कह
 कर कि कोई अधिकारी देख लेगा तो बख्शा न होगा खुद
 हथकड़ी लगा लिया करते थे ।

२१ फरवरी को जसगाँव के मेसन आज की प्रदामत में
 मगतसिंह के केस के एप्रुवरों की गवाही होने वाली थी । एप्रू
 वर कंगे अन्तु होते है वे किस मुंह से अपने छात्रियों को छाँसी
 लिखाने के लिए उनके विरुद्ध धार्ते अपने मुंह से निकाल सकते
 है इनको देखने और सुनने के कौतूहल से लोगों की भाव भीड़
 प्रदामत में भग गई । पुलिस वाले हम लोगों को सब-जैस से
 एक डेढ़ मील दूर सेसन-अज की प्रदामत में वैदल के गए ।
 प्रदामत का समय हुआ । हम सांग अभियुक्त के लिए नियत
 कठघरे में से जाए आकर बैठा दिए गए । हमारी तमाची यों
 ही ऊपर-ऊपर से हाथ फैर कर महज क्लामदे की पाबन्दी के
 लिए से भी गई, और पिस्तौल मेरे कोट की जैद में था ही,
 जिसे मैं सब-जैस से अपने साम लाया था ।

केस प्रारम्भ हुआ । मेरे कठघरे को घर कर कुछ सिवाही
 और एक सब इन्स्पेक्टर अपना पिस्तौल और कारतूसों की पेट्टी
 उल्टे लडा था । गवाही देने वाले के सड़े होने की जगह बज
 की बैठक के नीचे ठीक हमारे कठघरे के सामने थी । यदि कठ
 घरे में से गवाही देते हुए एप्रूवर पर गोली चलाई जाय, तो
 सम्भव है कि हड़बड़ा कर बीच में बैठे व्यक्ति उठ लड़े हों और
 पोसी अज, प्रससत, पेशकार आदि किसी प्रसत प्रादमी को भग

आय, ऐसी परिस्थिति थी। अदालत में प्रदर्शित चीखों में
 आजाद का यह मातृवर पिस्तौल और उनके साथ कारतूस भी
 दरवाजे के पास एक मेज पर सबै हुए रखे थे। वे हमें अपनी
 और अलग समझा रहे थे। युद्धभण्डों में हम दोनों ने समझ
 की कि इस पिस्तौल और इन कारतूसों का भी उपयोग होना
 चाहिए। अदालत ने कहा कि इन्हें मैं उठा लूंगा। मैंने कहा
 कि पहले देख लेना मैं क्या-कुछ कर पाता हूँ। फिर यदि मौका
 होगा तो इस पिस्तौल और इन कारतूसों को लेकर हम दोनों
 ही निकल आयेगे। दिन बढ़कने लगा यदि इस पिस्तौल को
 हम लोग आजाद के सामने जा कर फिर रख सके तो पहले
 जयगोपाल एप्रुवर अपनी गवाही देने आया। आजाद की हिदा
 यत थी कि यदि एक को ही मारा जा सके तो फणीन्द्र को
 मारा जाय (फणीन्द्र पहले दस की केन्द्रीय समिति का सदस्य
 था)। मैं जेय के अन्दर पिस्तौल के ट्रिगर पर अँगुली रखे
 बैठा रहा। जयगोपाल की गवाही में काफ़ी समय लग गया।

एप्रुवर आहार की पुनिश भी रखा मैं थे। उनके बैठने के
 लिए बचहरी क अहाल में एक तम्बू बना हुआ था। उनमें दोनों
 एप्रुवर और पंजाब की सी० आई० डा० क दो उच्च अफसर
 बैठे हुए थे। तम्बू के द्वार पर एक हट्टा-बट्टा पंजाबी पुनिश सब
 इन्सपेक्टर नामकशाह अपनी पिस्तौल और कारतूसों का पट्टा
 बाँटे लैनाल था। अरा आसके पर एक और पंजाबी पुनिशमें
 संगीत पढ़ी रायकल लिए लडा था। हम लोग भी अपने दस पुनिश
 वालों क साथ अदालत के कमरे से बाहर निकल आए। बरामदे
 के नीचे हम लोग के लिए दो कुर्सियाँ डाल दा गद्द, तिन पर

हम जाकर बैठ गए । दस सिपाही घोर एक हवामदार हमें घर कर लड़े हो गए । मेरा दाहिना घोर सदाशिव का बायाँ हाथ एक ही हथकड़ी से बंधा था । सामने तम्बू में हमारा शिकार था । सदाशिव ने कहा—' मौक़ा अच्छा है । बेशक बड़ा अच्छा मीठा था । इस समय भूस में दोनों एम्बुवर मिल सकत थे और ब्याज में सी० घाई० डी० के दो ऊँचे फ़क़सर भी । मगर हम दोनों एक ही हथकड़ी में बँधे थे ।

सदाशिव के बड़ भाई पास ही लड़े थे । उन्होंने कुछ खाने के लिए ला दिया । हमने खाने के वहाँमे अपने रसकों से हम कड़ी जुमवा ली । हथकड़ी के दोनों बड़ बड़ सदाशिव के बाएँ हाथ में पड़ गए और मैं विस्कुम लूत गया । सामने के मैदान को जहाँ हम लोयों की बैठने की जगह घोर एम्बुवरों के तम्बू के बीच में पड़ता था पुसिस वालों ने दसकों से खामी कर लिया । मेरे लिए दौड़ कर तम्बू तक खाने का माग साफ़ हो गया । खाले-खाले मैंने बट-से खेद से पिस्तील निकासी और तम्बू की घोर भ्रमटा । मुझे उपर को अपटता देस तम्बू के दरवाजे पर बैठा हुआ सब इन्स्पेक्टर मुझे रोकने के लिये लठ धड़ा हुआ । वह सामने से हट जाय और मेरे काम में बाधक न हो, इसलिये मैंने भागते भागते एक गाभी लसकी ज़ाँब में मारी जो उसके लून्हे को चाटती हुई निकल गई । वह दरवाजा छोड़ कर भागा और मैंने तम्बू में जयगोपास और फ़ग़ीन्द्र खोप वालों पर एक-एक गोली जमा दी । मैं इस जल्दी में था कि इनसे खीझ निपट कर अदामत में मेज पर रखे हुए पाबाद के उस मावज़र घोर ६० कारतूसों को हस्तगत कर लूँ । परन्तु दुर्भाग्य से मेरा पिस्तील

फिर जाम हो गया और गोमी किसी भी एप्रुवर के मर्म पर न बैठी यद्यपि जयगोपाल घायस हो गया और दोनों ही अपनी अपनी कुर्सी के नीचे लुबक गए थे जिससे मैंने यही समझा कि काम हो गया ।

इसी बीच सर्वत्र भगदड़ मच गई और भीड़ इतनी थी कि कोई जहाँ भाग न पाता था । सब बही एक-पर-एक हो रहे थे । मुझे भी भीड़ में से घदामत के कमरे में पहुँचने का माग नहीं मिला रहा था । घायस नानकदाह भागने का मार्ग खोज रहा था परन्तु भीड़ के मारे वह भी गम्हू के पास-पास बचकर काट रहा था और मेरा पिस्तौल तो जाम हो ही चुका था । इतना समय कहाँ था कि उसको ठोक किया जा सके । मेरा फिर नानकदाह से सामना हो गया और झूझतावझ मैंने अपने जाम हुए पिस्तौल को नानकदाह की ओर तान दिया । और नानकदाह यह कहते हुए मेरे ऊपर दूट पड़ा— 'वाइ, हमने क्या बिगाडा है तुम्हारा ? हमें क्यों मारत हो ? और दूसरे ही क्षण मैं नानकदाह के भारी भरकम शरीर के माथे घरती पर था रहा । जाम हुआ पिस्तौल मैंने फेंक दिया । फिर ता सभी बहादुर बनने लगे । कोई पिस्तौल निकाल कर धाया, कोई बन्दूक का कुन्दा विसाने लगा, किसी ने सात चपाई, किसी ने पूँजा मारा । मुझे ता और नानकदाह के खीड़े सीने की धाड़ मिल गई थी । इन प्रहारों से नानकदाह ने मेरी रक्षा की और उन्हें अपने ऊपर भेजा नहीं ता उस दिन मेरी घटनी पिस जाती ।

हपकड़ी में बँपे भाई सन्धिध यह सारा काण्ड सुनर-

दुकुर देखते रहे। इसके सिवा वे और कर भी क्या सकते थे। उसकी सारी योजना की समाप्ति इस भाँति हुई। मेरे अघर्म और अल्दबाजी ने सारा काम बिगाड़ दिया। सदाशिव ने कहा तो नहीं परन्तु उनके मन में यह धाए बिना कैसे रह सकता था। इससे तो अच्छा होता कि मुझे ही यह काम करने दिया जाता। पण्डित जी के इस निदानेवाज ने फिर सब मिट्टी कर दिया। उधर आबाद ने भी जब कुम काण्ड का हास सुना होगा तो यही कहा होगा मैं पहले ही समझता था वन पर अल्दबाजी और सुक-सुक न करे तो कैलास (मेरा बस का नाम) ही नाहे का। मूस ने एक पिस्तौल फिर व्यर्थ तो दिया।

इधर उत्साहपूर्ण जनता ने 'मारने वाले की जय' के नारों से भरती घासमान एक कर दिया। उसका जोश और उत्साह उबाम बिन्दु पर था। कचहरी के घास-पास के मकानों की छतों पर खपरेसों पर पेड़ों पर जहाँ कहीं भी घादमी जिस किसी बसा में बड़े लड़े मटके रह सकते थे सब जगह घादमी-ही घादमी दिखते थे। उन्होंने पुलिस वालों की मोटर पर पत्थर फेंके। एप्रूबरो को जिस मोटर में बैठा कर कचहरी से ले जाया गया उस पर बेहद पत्थरों की बर्षा की। दस भक्ति के जोश और एप्रूबरो के प्रति अपनी पूर्ण और रोष में वे पागल हो उठे। रात में कुछ लोगों ने कचहरी में भी धाव लगाने की कोशिश की। ४० घादमी गिरफ्तार हुए। बंगा करने के अभियोग में उन पर केस चलाया गया और उन्हें सजा हुई।

इधर मेरे पुलिस रक्षक-बस के हवलदार की डर के मारे बिगड़ी बँध गई। वह धर-धर काँपने लगा। उसके मुँह से बार

बार मही निकसता था—'अब मरे । जब मैं अपने रसक-दस के सिपाहियों को क्षमा-याचना के स्वर में समझाने लगा कि उन्हें अपना बचाव कैसे करना चाहिए, तो एक नौजवान मुसलमान सिपाही ने कहा— 'बाबू, आपने बड़ी बहादुरी का काम किया है । आप दिस छोटा न कीजिए । हमारा क्या होना जाना है ? बहुत हुआ तो नीकरी जायगी और आर-भ्र महीने की सजा होगी तो काट दायेंगे । बही और नीकरी करके अपना पेट पालेंगे । आप हमारी चिन्ता न करिए । इस सरकार की ऐसी की तैसी । उसके चेहरे पर शिकन नहीं थी । दूसरे सिपाहियों ने भी चुपके चुपके मेरा साहस धार उत्साह बढ़ाने के लिए ऐसे ही वाक्य बहे । पुलिस-सुपरिन्टेन्डेण्ट ने आकर उन्हें हुकम दिया कि मुझे उलटी हथकड़ी लगा दी जाय । वे यह भी नहीं करना चाहते थे । मैंने ही उन्हें समझा कर उमटी हथकड़ी स्वयं धड़वा ली । जब उनके पास से गोरा पुलिस सुपरिन्टेन्डेण्ट घस्य हो गोरे सार्जण्टों के साथ आकर मुझे ले गया तो मेरे इन पुलिस रक्षकों ने घासों ही घासों में बड़ी सद्गतापूर्ण विदाई मुझे दी । मुझे लगा उस मुसलमान सिपाही ने कहा— 'बहादुर ऐसी ही सावित्रजदमी से फाँसी पर चढ़ जाना । खुदा हाकिम !'

हँदी की हानत में रहते हुए अदालत में मैं जा मुम्बिर पर गाली जमा सका उसमें वास्तविक बीरता, मूर्ख चतुराई आदि का श्रेय उन लोगों को है, जिनका उल्लेख मैं यथासंग कर चुका हूँ । उनके इस श्रेय को आवश्यकतावश मैं गुप्त न्यास के रूप में अब तक रखे रहा हूँ । उसे वास्तविक अधिकारियों

को सौटाते हुए घाज महाकवि जामिदास के कण्ठ के समान मैं
भी मम पर से एक भार हटा हुआ धनुमय करना चाहता हूँ
और कहना चाहता हूँ ।

जातो ममार्यं विश्वं प्रकाम
प्रत्यपितम्यास इवास्तरत्मा ।

—मगवानदास माहौर



श्री महाशिवराय मलकापुरकर



सर्वोपी पिब बना। मयनामनाम माहीर एवं महापिबताब ममकापुरका

शहीद नारायणदास खरे

सन् १७ में प्रान्तीय स्वायत्त शासन काँग्रेस ने स्वीकार किया और परिणामतः राजनीतिक बन्दी छोड़ दिए गए। मैं भी मुसावस वम केस में शामिल बन करारावास की सजा में से केवस भाग बर्ष ही काट कर बाहर आया। उस समय भावना की भाँसें शहीद साथी चन्द्रसेखर आश्राम मगतसिंह राजगुरु सुखदेव आदि को बराबर बुँडती रहीं। कविता में सुनी हुई यह बात कि शहीदों की खून की एक-एक बूँद में सैकड़ों स्वातन्त्र्य वीर पदा हाते हैं मन में काफी गहराई तक उतर गई थी और सम्भवतः इसी ने मुझे जेल की यातनायें भुगतन के लिए बल दिया था।

जेल से निजाता तो और सभी साथियों की तरह मैं भी काँग्रेस में सम्मिलित हो गया और कार्य करने लगा। दहातों की काँग्रेसी सभाओं में भी जाने लगा। ऐसी ही एक सभा में जाते हुए मार्ग में मुझे श्री नारायणदास खरे का सबप्रथम दखन हुए। उस समय उनकी आयु बस बीस इक्कीस साल की रही होगी। वे गेरुआ कुर्ता और गेरुआ धोती पहने हुए थे। बड़े हँसमुख बड़े फुर्लानि सब काम भागे-भागे हाकर करने वाले, नेताबाबी से कोसों दूर। रास्त भर भाप मखदार चुटीली

घातों ठेठ कुन्देससण्डी में बराबर करते रहे । उनके प्रति आकर्षण होना स्वाभाविक था ।

गाँव में पहुँचे । सभा हुई । सभा में जमींदारों ने पत्थर फिंकवाये । उस समय मैं बोल रहा था । जैसे बोलना मुझे कुछ नहीं आता था केवल इसलिए कि मैं भगतसिंह आजाद आदि क्रांतिकारियों का साथी रहा हूँ और भावन्म कारावास की सजा में से घात बर्ष काटकर आया हूँ । साथी लोग मुझे खींचे-खींचे फिरते थे और बोलने के लिए मजबूर करते थे; और मैं अपना पुस्तकीय ज्ञान और घसवारो बातें एसी भाषा में आड़ता रहता था कि उसमें से कुछ भी आसानी से जनता के पत्थर न पड़ता था । एक तो मेरी स्थिति ही सभा उखाड़ने के लिए काफी थी उस पर जमींदारों के पत्थर भी पड़ने लगे । सभा उखाड़ते देस में धामद 'इन्कलाब इन्दाबाद 'साम्राज्यवाद का नाश हो' आदि नारे लगा-लगावा कर बैठ जाता लेकिन जब मंच पर पत्थर गिरने लगे तो कैसे बैठ जाता ? भगतसिंह आजाद आदि के साथी को लोग सुबधिस समझें, यह मसा मैं कैसे सहन कर सकता था ? अत मैंने अपना मसा उखाड़ू भाषण और अधिक बार-बार से आड़ना शुरू रसा । पत्थर भी पड़त रहे और जाहिर है कि मेरे भाषण और पत्थरों की दुहेरी मार में मसा मसा कैसे जमी रह सकता थी ।

मारागणवाम उचक कर मंच पर धा गए और लोगों से घालन रह कर बैठे रहने के लिए अपील करने के बहाने स्वयं बोलने लगे ठेठ बामुहाविरा कुन्देससण्डी में । मैं पीछे पड़

गया। नारायणदास का भाषण कम गया और उल्टा गई जमींदारों के गुर्गों को पर्यरमाजी। नारायणदास ने कुछ ऐसी बातें ठेठ बुन्देलखण्डों में कही जिसमें उन्होंने मेरे क्रान्तिकारी 'जोश' और त्याग की प्रशंसा की और कहा कि जमींदार भादि जय बोल महात्मा गाँधी की कि आज ये क्रान्तिकारी उनके भण्डे के नीचे हैं और यदि जमींदार यही चाहते हैं कि हिन्दुस्तान में भी रूस जसी खूनो क्रान्ति हो तो ऐसी ही पर्यरमाजी करते रहें रूस जसी क्रान्ति होकर रहेगी। उन्होंने रूस की क्रान्ति में जमींदारों की क्या दुर्दशा हुई इसका सुन्दर-सा घम्व चित्र खींचा जो सही भल न हा पर था बड़ा प्रभावोत्पादक। उन्होंने गरीब किसानों के उत्साह को बढ़ाया और व्यथना से जमींदारों और उनके गुर्गों को घमकाया भी और अन्त में क्रान्ति की और महात्मा गाँधी की जय बोली। अपनी बुन्देलखण्डों उपमाओं से उन्होंने कई बार थोनाथा को हँसाया। जमानारा के घस्याचार और साध ही घम क डोंप का बातें करते हुए उन्होंने बड़े मजदार बिस्मे सुनाये।

मेरी सभा उग्राड़ स्पीच को भी उन्होंने शरणा नहीं। कह तो वे प्रामीण जनता से रह थे परन्तु उनका उावेग था मेरे लिए। उन्होंने ऐसा कुछ कहा— 'माहोर जी का बातें समझने के लिए पहलू बहुत कुछ पढ़ना-समझना पड़ेगा तब उमकी य ऊँची ऊँची बातें समझ य था सकेंगे। अपने मतलब की 'महूषा-भूसर की बातें हमस मुन सो। जब कभी जहाँ कही स्वराज्य की काँग्रेस की सभा हा उसमें हमें पहुँचना चाहिए और नेताओं की बातें समझ में आए चाहे न धाएँ,

बराबर बठे सुनते रहना चाहिए वस इसके ही माने हैं कि हमें स्वराज्य चाहिए और हम सेकर रहेंगे ।

यह उपदेश था मेरे लिए कि देहाती सभाओं में क्या होता है और उनमें मुझे क्या और कैसे बोलना चाहिए, जो इस प्रकार मोठे शब्दों में मुझे दिया गया था कि मुझे बुरा भी बुरा नहीं लगा ।

नारायणदास छत्रे अक्सर भ्रांती आते ही वे घर वे मेरे घर भी आने लगे । मेरे घर पर अपनी कुछ मिजाजी से उन्होंने सबको अपना आत्मीय बना लिया विशेषतः मेरी माँ के वे प्रेम-भाजन बन गए । माँ को उनकी बातों में बड़ा रस मिलता था । वे मेरी माँ के उसी प्रकार साइफ बटे बन गए, जैसे पहले आजाद बन गए थे । यह गुण भी उनमें आसाद के जसा ही था । आजाद एक गुप्त ससस्त्र आन्तिकारी दस क फरार व्यक्ति थे जिन-सम्पर्क से उन्हें दूर ही रहना पड़ता था, परन्तु नारायणदास छत्रे एक सुप्त सामाजिक आन्दोलन के कार्यकर्ता थे । नारायणदास की दाई, बऊ, कनकी ताई जिज्जी बिन्नु बम्बा कनका यहा घर-घर में हो गए थे । मुझे यह देखकर आश्चर्य और भ्रमसाहट दोनों होतीं कि जिस बात को मैं माँ से कभी नहीं मनवा पाता नारायणदास अपनी थुटीसी बुन्देसकण्ठी बोली से बड़ी आसामी से उसे माँ के गले उतार देते । जब मैं कहता कि 'माँ यही तो मैं भी कह रहा था तो माँ कहती 'हमो तुम क रएते सुम तो अंग्रेजी मसक रएते ससकीरत कूटक रएते (जी हाँ भाप कह रहे थे । भाप तो अंग्रेजी मसकते थे और ससूठ कूटकते थे) मैं हतप्रभ

झोकर रह जाता और नारायणदास शरारत से मुस्कराते और
 कहते 'बाई इनकी तुमई नई हम सोऊ नई समज पाउउ तुमाई
 हम समझत हमाई तुम मौघा मूसर की ओ ठेरी । (मां
 इनकी घाप हो न समझती हो यह बात नहीं है मैं भी
 नहीं समझ पाता । घापकी मैं समझता हूँ और मेरी घाप
 समझती हूँ—महुघा-मसूर का घान ओ है) । मां को नारायण
 दास की इन 'मौघा-मूसर' की बातों में बड़ा रस मिसता । मां
 खाट पर पड़ी होती तो नारायणदास उनके पर भाँदवाने
 लगते । मां सकोच से पैर हटा लगी और कहती घरे नारायण !
 ओ का करत ? (घरे नारायण ! यह क्या करत हो) ! तो
 नारायणदास भायहूपुवरक पैर लबात और बहुत घरे बाई !
 तुम छठोदन की बाई हो तुमाए पाँच आठार जैसन मे परे
 तुमारे पाँच दबावे को का, छीब भर को भाग कौन कौन लौ
 मिलत ? तुम का घरेसी भगुघान की बाई हा ? तुम ता
 हम सबकी बाई हो । (वाह मां ! घाप गहीर्ने की मां
 हैं, घापके पैर आठार जैनों ने छुए हैं । घापक पर दमाने का
 क्या छूने भर का सीनागम किस-किस का मिलता है ? घाप
 क्या घरकी भगवानदास की मां हैं घाप ता हम सबकी मां
 हैं) । और मां गद्गद् हो जाती और भरे सम्भे काराबास से उग्हें
 ओ पीड़ा हुई तथा घर-बार तक बिच जाने की गरीबी का ओ
 बप्ट हुमा उस केवल भूल ही नहीं जाती उसमें गीरब अनुभव
 करने लगती । सन् १९२६ २७ में मुझे आठार के लिए माता
 जी की रोटियाँ चुगनी पड़ती थी । जब सन् ३८ ३९ में
 नारायणदास घरे घादि सापिया ने मेरी मां को हम सबकी

माँ बना लिया और फिर मेरी माँ को गरीब हॉडिया से एक चमचा दाल और मटेमनी में से चार रोटियाँ घर आए हर भूखे साथी को माँ के स्नेह से घुपकी हुई मिल जाती और इसमें जो सुख जो मस्तोप माँ को मिलता उसे न तो मैं कभी कमा-धमा के दे सकता था न कोई सरकार से प्राप्त राज नीतिक पोटित की पश्चम ही दे सकती थी। और फिर नारायणदास जरे भी ऐसी बार्ड वऊ जिग्जी धादि उनक कार्यक्षेत्र के घर-घर मे हो गई थी। बिना किसी मेदमाय के बाल्मी कोरी चमार ब्राह्मण बनिया सभी घरों की हॉडियों में से उन्हें दाल और हादिक स्नेह से घुपकी हुई चार रोटियाँ सब कहीं मिल जाती थी।

पहले-पहले जब मैंने नारायणदास जरे को गेरुआधारी सम्पासो (उनका सिर मुंडा हुआ नहीं था) के बेश में देखा तो मुझे कुछ हैरानी हुई। एक तो धपनी माक्सवावी बिघारधारा से मुझे सयास विष्कुभ बेकार की बात मगी और फिर २० २१ वय के तरुण नारायणदास का सन्यास तो बहुत ही गठबड़ बात मामूम हुई। कुछ धात्मीमता बढ जाने पर मैंने उनसे कहा— 'तुम यह सन्यासी-फन्यासी का वेश बनाए क्या फिते हो ?' तो उन्होंने उत्तर दिया— 'भैया इससे मेरे स्वराज्य की समस्या हल हो जाती है। मेरी समझ में कुछ भी न आया तो मैंने कहा— 'यार ! क्या बकठ हो ? तुम्हारे स्वराज्य की समस्या ? क्या माने ?' नारायणदास ने धपने साक्षणिक हात्म की जारी रखते हुए कहा— 'बेबी दादा ! सब नेता सोम कहते हैं कि हमने प्रांतीय स्वराज्य प्राप्त

कर लिया और घायल कहते हैं कि यह स्वराज्य कुराज्य कुछ नहीं है। प्रायः मैं नेता लोग मर्त्री बन गए तो प्रांतीय स्वराज्य हो गया और घायल कहते हैं कि जब तक पूरे भारतवर्ष का खाने की नहीं मिलता तब तक स्वराज्य कैसा ? हमने घायली और नेताओं की दोनों की बात मान ली—पूरे हिन्दुस्तान भर के लोगों को खाने का मिलने लगे वह होगा पूरा स्वराज्य कुछ लोगों को मिलने लगे यह हुआ प्रांतीय स्वराज्य। पूरे जीवन भर खाने को मिलने लगे वह होगा जिनगी का स्वराज्य और एक दिन को खाने को मिल जाय वह हुआ दैनिक स्वराज्य। इस सच्योक्ती से मेरे दैनिक स्वराज्य की सम्झना इस हो जाती है। किसी के भी यहाँ से वह कोरी हो चमार हो काँधी हो ब्राह्मण हो बमिया हो ठाकुर हो रोटी माँग के खा लेता है और कोई उसे बुरा नहीं समझता। नहीं तो चमार पहले तो गूद ही रोटी नहीं देता रोटी क्या पानी नहीं पिनाता—किसी की जाति बिगाड़ने के पाप के डर से और दूसरे एक धार चमार के घर रोटी खा सने पर फिर बमिया ब्राह्मण के यहाँ खाने को मिलता नहीं इसलिए आज का परिस्थिति में इस सच्योक्ती का सचपने दैनिक स्वराज्य की समझना इस हाने में सुविधा हो जाती है और जिनसे स्वराज्य मिले वह वास्तव में नहीं हो सकता। क्यों नहीं ? है न ? ' और फिर ठहाका मारकर नागायणदाम हैंमत रहे। सदान्तिक बहुमत में फैसला नागायणदाम का घण्टा नहीं लगता था। किसी भा मिश्रान्त की कसौती उनका लिए ठोस साम्य-विद्यता थी।

परन्तु मेरा यह हृदय विश्वास है कि धारम्भ में उनके संन्यासी बेश में उनके इस 'दैनिक स्वराज्य' की समस्या हल होने में मर कुछ सुविधा हो गई हो वास्तव में प्रत्येक घर में उन्हें जो स्नेह और धर का दया-सूत्रा जो हुआ मिस जाता था उसका कारण उनका धारतीयतापूर्ण व्यवहार था और उनके प्रति सबका यह विश्वास था कि नारायणदास एक सच्चा परिश्रमी निर्गममान कर्मकर्ता है जो उनके प्रत्येक सुख-दुःख में साथ रहने वाला है, कबल मापण काढ़ने वाला महम्मय नेता नहीं। बाहर में अब नारायणदास अपने कार्य क्षेत्र में इस प्रकार पर्याप्त जनप्रिय हो गए तो उन्हें फिर इस संन्यासी बेश की आवश्यकता नहीं रह गई। वे फिर सादा सिवास में ही रहने लगे और बाहर में उन्होंने विवाह भी कर लिया और एक बच्ची का वाप भी बने।

उनके इस दैनिक स्वराज्य की बात मेरे घर पर खूब भली। एक बार नारायणदास मेरे घर बैठ की दुपहरी में ठीक दिन के एक बजे पहुँचे। घर पर सब खाना खा चुके थे। नारायणदास बैठ गए। मैं घर पर था नहीं। नारायणदास माँ से अपनी 'मौझा-मूसर' की मसकटे रहे। माँ को क्या मासूम कि नारायणदास में अभी तक खाना नहीं खाया है और कहीं खाना न मिलने से खाने की टोह में ही वे मेरे घर पहुँचे हैं। माँ ने पूछा कि वे ऐसी दुपहरी में कहीं मटकत फिर रहे हैं तो नारायणदास ने उत्तर दिया— 'बाई साँधी गए ? सुराज के खानेई तो फिर भा गए, साँचडें बाई प्राज बारी कडें घुक्रिया गई मगी बाई से मैने कई कि सो भव तो बाइ यई सुराज

करायें।' (माँ ! सब कहूँ, स्वराज्य के लिए ही तो फिर रखा है। सब माँ आज कहीं कोई पुस्तक काम में नहीं आई इसी से मैंने कहा कि वस धर आज तो माँ ही स्वराज्य करायेंगी)। मन्सा माँ नारायणदास क इस स्वराज्य का प्रय क्या समझनी ? अब माँ ने कहा कि आज के कमी घट गट बाले कर रहे हैं तो नारायणदास न अपने स्वराज्य का प्रय उन्हें बतलाते हुए कहा— य सा आई तरो कोम जो नैकक भूठी कई होय। सुराज का होत ? मय लो बन स सारो ला मिसन लगे जोई नई ? सो आज साव लो मिस जाय सा आज का सुराज। (माँ ! तेरी सीयष जो मन बग भी भूठ कहा हो। स्वराज्य क्या होता है ? यही न कि स को वैन मे साने का मिसने लगे ? सो आज सान का मिस जाये तो आज का स्वराज्य हो गया)। माँ उनकी बात मुख मुद्रा धीर हावभाव से समझ गई कि नारायणदास भूख है। उस रोज कोई त्योहार या धीर घर पर साग-मुड़ी खीर आदि कुछ अच्छा पाना बना था। माँ ने नारायणदास को खाना परेसा। नारायणदास खाने लगे। इतने म में था गया। नारायणदास को देखा सा उनस ऐसी कुछ बातें बरन सया कि प्रमुक मण्डल में कितने कांपस सदस्य बने बहूँ के मण्डल का हिमाब-बिताब बड़ा गडबड़ भासूम हाता है प्राणि क्योंकि उस समय में भरीमी जिना कांपस कमेटी का आफिस सक्टरी था। नारायणदास केवम है हाँ करते जात थे कुछ ठीक उत्तर नहीं दे रह थे। मैंने कहा—“यह है हाँ क्या करते हो ? कुछ ठीक-ठीक कहते क्यों नहीं ? नारायणदास ने निवासा गल क नीचे उतारा धीर

दुकड़े-कड़े किये जाकर सहोद हो गया। वह कभी भच्छी तरह नहीं रहा कभी भच्छी तरह नहीं रहा।

नारायणदास सरे भी चन्द्रशेखर धाजाद की तरह ही एक जन-पुत्र थे। अपनी राजनीति और अपनी राजनीतिक विधान उन्हीं भी स्वर्ण में रहकर उसी में से सीखा था कांसिज या पुस्तकी में पढ़कर नहीं। उनके मन में प्रभूत मिथ्यान्त नहीं, अपने साक्षात् परिचय की अपनी भारतीय मरीच धर्मिष्ठ, कुमस्कारप्रस्त पीयडेहास भूमी जनता ही सदा रही। कांग्रेस में रहकर वे कई बार जेल गए परन्तु स्वराज्य के बाद जब उन्होंने कांग्रेस में पदों की छीनाभपटी देखी और साथी कार्यकर्ताओं में भाग-विनाममय जीवन की इच्छा देखी तो उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी और अपनी कमर और अधिक बचकर, अपना श्रोत्रा समाल कर अपनी किसी से उधार माँगी हुई लड़कड़िया साइकिल पकड़ कर कम्युनिस्ट पार्टी में पहुँच गए। पहले नारायणदास सरे के हाथ में तिरगा रखा करता था जब लान म्हा रहने लगा।

जब हैदराबाद का धाम-सत्याग्रह जमा था तो नारायणदास उसमें भी धम गये थे। जब वापस आए तो मिले। मैंने उनसे पूछा— 'आप और धाम-सत्याग्रह? ता सीधा कोई सैद्धान्तिक उत्तर न देकर आपने कहा— हादा! बये रहने से भाड़ा और बैठे रहने से सिपाही विगड जाता है धरे यह तो बसत करने जसी बात है।

नारायणदास सरे ने कभी धरमाचार या लक्ष्मीका रोमा नहीं रोमा। माजिदों ने भी जब कभी उनके साथ रहता

व्यवहार किया या गसनफहमी के कारण अनुचित बतवि भी किया तो रोप या द्वेष से उन्होंने कभी वैसा व्यवहार स्वयं नहीं किया। उनके प्रति किये गये अन्याय के लिए जब कभी मैंने समवेचना प्रकट की तो भी उन्होंने यही कहा कि भैया कोई मिनिस्टर या एम० एम० ए० तो मैं हूँ ही नहीं कि मुझे अपनी कुर्सी छिन जाने का डर हो। मरा यह भोला और भ' घर से मिल जाने वाली गेटियाँ सलामत रहें इधर नहीं तो उधर उधर नहीं तो भी कहीं काय करता ही रहूँगा। और वे बराबर भाँसी जिम में नहीं तो टोकमगड राज्य के गाँवा में काम करते रहे और कार्य करते-करते ही शहीद हो गए।

टोकमगड राज्य में कई बार जमीनगं और ठाकुरा ने उन्हें समझाया और समझाया कि नारायणरास बहुत बड़ बड़ के बातें न करो इसी में भसाई है नहीं तो ठाकुरों का गुस्सा जानवे ही हो। किसी दिन तुम्हारी बोटी-बाटी मियार खा जायेंगे। परन्तु नारायणरास की कार्यशीलता में कोई अन्तर नहीं आया। एक रोज बडागाँव से उन्हें एक घस्य गाँव को जाना था जहाँ उन्हें एक समा में सम्मिलित जाना था। साथियों को कुछ ऐसा मासूम हुआ कि नारायणरास के लिए भाग में खतरा है। उनसे बहुत कहा गया कि घाबरा जाओ और भाग जाओ। परन्तु यह कहकर कि जिस घबराटासने लगे सो फिर काम हा हुआ। अपने लिए कोई बस्तरवन्द मोटरवाड़ी तो घायगा नहीं। इसी गडगड़िया साइकिल पर ही वा घूमना है और यह बात तो रोज की है। व घकेमे अपनी लखड़िया

पर सवार होकर रात रहते ही बड़े तड़के घम पड़े और मार्ग में मार डाले गये ।

चन्द्रसेखर आजाद देश की आजादी के लिए साम्राज्यवादियों की गोली खाकर शहीद हुए, नारायणदास गरीब किसान प्रजा की आजादी के लिए जमींदार राजाशाही की गोली खाकर शहीद हुए । दोनों की शहादत मुझे एक ही ही समी । चन्द्रसेखर आजाद को कीर्ति अधिक मिली नारायणदास सरे का कम बहुत कम यह केवल परिस्थितियों के फेर की बात है ।

कहावत है 'जाति न पूछो साधु की' इसी प्रकार शहीद की राजनीतिक जाति भी नहीं पूछी जानी चाहिए । शहीद तो शहीद है जिसके रक्त से स्वतंत्रता का पीघा बनपटा है सदा अन्य आवश्यक शहीद उत्पन्न होते रहते हैं । शहीद तो सरा सोना है परिस्थितियाँ कभी उस पर चन्द्रसेखर आजाद का ठप्पा लगा देती हैं, कभी नारायणदास सरे का ।

—भगवानदास माहौर

७ सुलक्ष्म

मुना या दल में जो व्यक्ति है जिसका नाम है 'बिलेजर'। एक दिन जब भगतसिंह का चिट्ठी लेकर 'बिलेजर' वगैर मोटिस के डा० ए० वा० कानज बानपुर में मेरे कमरे में था धमका तो पता चला कि -नव घारे में मन अपने दिमाग में जो नक्शा बना रक्सा था वह गनन था।

मैंने सोचा था बिलेजर शायद गाँव का रहन वाला कोई नौजवान किसान होगा—मिरदार या कम पढ़ा शिक्षा लेकिन जिस्मानी तीर पर तगदा व्यक्ति जिसके चेहरे पर गाँव के कठिन परिश्रम ने अपने निशान अक्षयन में ही अंकित कर दिये होंगे। रंग भी साफ़ तो नहीं ही होगा। लेकिन जब सरदार का पर्चा मेरे हाथों में देकर 'बिलेजर' बतकस्तुत्रा में मुस्कराया तो मुझे उसके बारे में अपना अधिकारी धारणाएँ बसनी पड़ी।

साधारण दोल दोल गोरा-चिट्ठा रंग निहायत सूबसूरत धुंधराले बाल बड़ी-बड़ी ठीरती हुई आँखें आई-तोई आशक्ति मुसायम बहरा—'बिलेजर' धीरे कुछ भी हो गाँव का किसान नहीं है यह मैंने पहली ही मुसाबात में भाँप लिया। वह मेरे कमरे में कई दिन रहा। इसी बीच एक दिन के लिए भगतसिंह

भी घाया भीर सब पता चला कि 'विलज्ज' का घसली नाम सुखदेव है।

सुखदेव छोटी-छोटी बातों पर उहाका सपाकर हँस पड़ता था। कभी-कभी अगर दूसरा कोई उसकी हँसी में योग म भी दे तो भी वह धकेल ही हँसते-हँसत लोट-पोट हो जाता। उसने इस हँसी का पहला प्रदर्शन दिया मेरे पार्टी नाम पर। मेरा दान का नाम 'प्रभात' था। वह नाम सुनते ही हस पड़ा और इतना हँसा कि बेहम हो गया। जब उसकी हँसी का प्रवाह बस कम हुआ तो मैंने पूछा इसलिए इतना हँसन की कौन बात थी ?

'साले काम करेया कालिकारियो का भीर नाम रखेया कवियो जेमा ! कोई कविता सुनाने की फरमायश कर बैठा था जगसे भ्रूकछा फिरेमा। रामप्रसाद स्वामनारायण, सालताप्रसाद—यह सब नाम क्या मर मये ये ? इतना कह कर वह फिर लोट-पोट हो गया।

मैंने कहा "यह लो पार्टी के अन्दर का नाम है बाहर का नाम है प्राणनाथ।

'किसी सौदिया से साबका पडा लो नाम लेने के बजाय प्राणनाथ लो से अप्सो से वारें करयो धास नभाये हुए उसने कहा।

कम्म इसके कि वह फिर हँसना शुरू कर दे मैंने कहा 'भीर तीसरा नाम है हरमारायण।

'हाँ यह नाम ठीक है' उसने कहा, 'भीर देख बाहर यह हरमारायण ही चलेगा भीर अन्दर के लिए प्रभात माने

लेता है, लेकिन तुम्हें प्राणनाथ कहने के बजाय तो मैं गोसी मार सेना पसन्द करूँगा ।

इसके बाद वह ऐसा पामोश हो गया माना किमा ने उसकी हँसी पर प्रचानक प्रश्न सगा दिया हो । हँसते हँसते प्रचानक गम्भीर हो जाना उसका स्वभाव था ।

और से हँसते समय उसके शत्रुभाव में एक बघरानी मामूमियत सी आ जाती थी और हम हँसते जब वह प्रचानक पामोश हो जाता तो एक अज्ञात पाया स्वागत उस पर हावी हो जाता मानो वह कि ही गहर विचारों में डूब गया हो । सगना उस कोई गहरा विचार उसे अन्तर ही-अन्तर कुरेव रहा हा । बातों और सम्न्यासा पर जिस ही जिस में मन्टों प्रकसे सोचते रहना भी उसका स्वभाव था ।

और सबसे अज्ञानताक भी उसकी मुस्कराहट जिसक पीछे अराध के साथ-साथ हृदय पर नफरतमरा अन्त साङ्ग-साङ्ग उभर आता था । समाज की करीतियों रुद्धियों राजनतिक मतमेशों क प्रति गहरी उपद्रा और बिद्रोह का प्रतीक भी उसकी मुस्कराहट । यहाँ तक कि कभी-कभी प्रस फननाओं क आघात को भी वह प्रपना मुस्कराहट की उफेगा में डुबो देता । एक बार साहीर बासटन जैस में भूख-हड़ताल के सिस्मिले में हम लोग का पिटाई चल रहा थी । डॉक्टर हमें अबदस्ती दूध पिलाना चाहता था लेकिन एक-एक को बाहू में करने का काम था जैन-अधिकारियों का । जैन का बड़ा बरोगा बारह-बंद्रह तगटे सिपाहा और कनी लिए एक एक का कोठरियों स प्रस्वतान पहुँचाने में व्यस्त था । उन्हे

सुखदेव की कोठरी खुलवाई । खुलते ही सुखदेव धोर की तरह निकल कर भागा । दस दिन के घनशन के बाद भी उसने ऐसी दौड़ लगाई कि अधिकारी परेशान हो गये । उस दिन का भूया घादमी भी इतना दौड़ सकता है इसकी उन्हें धारणा नहीं थी । बड़ी कठिनाई से जब वह काबू पाया तो उसने मारपीट शुरू कर दी—किसी को मारा किसी को गूदगुदाया, किसी को काट लाया । इन सब बातों से दरोगा बेहद चिढ़ गया था । डॉक्टर के पास ४ जाने से पहले उसने सुखदेव की पूछ मरम्मत करवाई । वह मार खाता गया धोर दरोगा की धार देखकर उपेक्षा के भाव से मुस्कराता रहा । सुखदेव की सखारतमरी मुस्कराहट से दरोगा धोर भी चिढ़ गया । जब कभी धोर सिपाही उसे टाँग कर अस्पताल ल चले तो उसने टाँगे फकारनी शुरू कर दीं । जो कदी सुखदेव की टाँगे पकड़े या उसके विस्फुल्ल पास धाकर हटर से धमकाते हुए दरोगा ने उस ठीक से पकड़ने का आदेश दिया । दरोगा को अपने इतने पास दसकर सुखदेव ने धोर के भटक से एक टाँग छुड़ा ली धोर उससे दरोगा के सीने पर इतने जोर का धक्का दिया कि बेचारा दो कम्म पीछे जा गिरा । देखने वालों का श्यास था कि इसके बाद सुखदेव पर बेहद मार पड़ेगा लेकिन दरोगा भेंप मिटाने के लिए ठाक तरह से से जाने का आदेश देकर वहाँ से चला गया । सुखदेव नफरतमरी निगाह से मुस्कराता रहा ।

घाते ही मेरे साम को लेकर उसने जो नाटक किया उससे पहले ही दिन से हम दोनों में काफी बेतकल्पुकी हो

गई। वह मेरे कमरे में चार-पाँच दिन रहा। एक संगठनकर्ता के नाते भगतसिंह की अपेक्षा सुखदेव मुझे कहीं अधिक ज्ञाना। दस की घोर दस के साथिया की बहुत सी ऐसी छोटी छोटी भावभक्तताएँ थीं जिसकी धार भगतसिंह का कभी ध्यान भी नहीं जाता था लेकिन सुखदेव उन पर घण्टों साचना और विस्तार से उनका हिसाब रक्खना था। सही मानी में अगर भगतसिंह पंजाब पार्टी का राजनीतिक नेता था तो सुखदेव उसका संगठनकर्ता था—एक एक ईंट रखकर इमारत सड़ी करने वाला।

जहाँ एक तरफ पहले दिन की मुलाक़ात में ही सुखदेव की हसी और उसकी भाँषों का गहरे लोखपन का मुझ पर असर पड़ा वहाँ दूसरी तरफ उनकी बेटीम पाशाक देखकर हसी भी घाई। उसने जैसे ऊँच धनीगड़ी पायजामे पर उससे भी मला खादी का डीसा-खाला कुर्ता पहन रक्खना था। कुर्ते के सारे बटन खुले हुए थे और वह गले से गिमक कर गाय कंधे को नगा छोड़ता हुआ बसौर पर उठर धामा था। सिर पर सामा सोगा की गोम टापी थी जिसक किनारे भाषी दूर तक उस और धूस क पत जाकर मामजामा जैसे सग रहे थे। पैरों में बहुत कीमती नामे रंग का धूत जूता था।

अपने धरीर, रहन-सहन और पहनावे का बारे में उसे दूसरों का हस्तक्षेप गवारा न था, इसलिये जैसे ही मैंने उसे उपरोक्त पोशाक के लिए टोका तो वह चिड़ गया। “मैं किसी सामे के यहाँ शादी करने नहीं धामा हूँ। तुम्हे मेरी पोशाक अच्छी न लगती हो तो धायें बन्द कर मे, उसने

जबकि श्रिया । २ इन नाम के नाम पर जब उसे समझया कि
यह मांग इस प्रकार की पोशाक नहीं पहनते तो वह मान
गया और जब तब रंग साफ़ धोती और कमीज पहनाया रहा,
टोपी भी नही लगाई ।

जसा उपर कह आया है मुन्नादेव का दस के घंटे का
नाम बिन्दुवार था । यह नाम उसके इसी गदारा जैसे अमनसुख
व्ययहार के कारण ही दिया गया था । स्वभाव से जिद्दी होने
के कारण उपर्युक्त या उससे मिलते-जुलते पहनावे को काफ़ी
दिना तक उसने अपनी साधारण पोशाक बनाये रक्खा ।

१९२८ में बानपुर से प्रारंभ होकर जब मैं पञ्जाब पहुँचा
तो काफ़ी दिनों तक अमृतसर में मुन्नादेव के साथ रहने का मुझे
अवसर मिला । यहाँ भी उसका यही पहनावा चल रहा था ।
टोपी निसक कर मिर के पिछले भाग पर आ टिकी थी और
पैरों में कीमती जूते की जगह फटे हुए पुराने देसी जूते ने
ले ली थी जिसे वह जूते के बजाय चप्पल के तौर पर ही
इस्तेमाल करता था । सुबह से शाम तक इसी पोशाक में वह
अमृतसर के अन्दर भ्रमण करता ।

एक दिन दोपहर को वह कहीं से घूम कर आया । मैं उस
समय एक उपन्यास समाप्त कर रहा था । पुस्तक खोल कर
एक तरफ फेंकते हुए उससे कहा क्या सारा दिन घर में घुसे
बीठे रहते हो यहाँ कौन मुझे पहचानता है ? असो कहीं घूम
आएँ । गर्मियों के मौसम में दोपहर के समय घूमने का प्रस्ताव
भी मुन्नादेव ही कर सकता था । लेकिन जब एक बार यह
कीड़ा उसके दिमाग में घुम गया तो फिर उससे जान छुड़ाने

का कोई सवाल ही नहीं था। सास मिग्नठें की उपवास बड़ा रोषक है, कुछ ही सफ रह गये हैं समाप्त कर लूं फिर भर्तूंगा—लेकिन उसने एक न सुनी। क्या करता ! मैं जेमे घैठा था वसे ही उठकर उसके साथ चलने लगा। उसने जिव की पञ्जाबी पोशाक में निकरूं।

सुखदेव जहाँ अपने शहर के बारे में बिल्कुल जगसीन था वहाँ अपने साधियों को गिलाने और पानाने में उन बड़ी खुशी होती थी। वह मेरे लिए एक बहुत अच्छी नई सलवार से आया था। साथ में पंजाबानुमा लम्बी कमात्र कोट कुस्ला पगड़ी और एक बकिया जूता भी शरीर आया था। इस बारे में सुखदेव भगतसिंह से बिल्कुल उल्टा था। भगतसिंह अपना शोक अपना खाना-पीना अपनी पोशाक के सामने दूसरे साधियों की आवश्यकताओं की बात बहुत कम सोचता था। इसके विपरीत सुखदेव अपने साधियों के साथ और उनकी आवश्यकताओं के सामने अपनी बात बहुत कम सोचता था।

सुखदेव के आग्रह से मैंने उसकी लाई हुई पाशाक पहनी। उसने अपने हाथ स पगड़ी ठीक की। फिर दूर हटकर निरीक्षण किया। हाँ अब तुम पंजाबी लगते हो। चला।

“तुम भी कपड़े बदल लो। मैंने आग्रह किया।

‘बस बस। आया है बड़ा गाजियन बन कर। मैं कपड़े प्रपडे नहीं बदलता।

‘लेकिन मेरी इस पोशाक के साथ तुम्हारा इन कपड़ों में चलना वहाँ तक ठीक होगा !

‘सोग समझ सेंगे कि मैं तेरा बीकर हूँ बस। और

उसने मेरी एक न सुनी ।

सुखदेव को बेसे के फल और उसके हार बेहद पसन्द थे । एक मंदिर के सामने हार विकले देसबर उसने दो हार खरीदे एक अपने गं में डालकर दूसरा हार मेरी ओर बढ़ा दिया । मैंने हार अपने कर हाथ में पकड़ लिया । वह ज़िद करने लगा कि मैं उसे गले में पहनूँ । यह जवाब पाकर कि मुझे हार पहन कर चलना अच्छा नहीं लगता दो मिनट तक तो वह चुप रहा फिर बोला 'तुम्हें फसों की सुघरू अच्छी नहीं लगती तो जा लू और कुछ लूँ । यह कहकर उसने वह हार भी लेकर वहाँ हाथ की कलाई में सपट लिया ।

उसे मुट्ट भी बहुत पसन्द थे । प्रायः रास्ता चलते तीन चार मुने हुए मुट्टे वह अपनी बगल में दबा लेता और एक को दोनों हाथों से पकड़ दोनों से दाने निकाल कर खाता हुआ चलता । रास्ते में अगर कोई जान-पहचान वाला मिल गया तो पतकसुध्री के साथ एक उसे भी पकड़ा दिया । इनकार के माने होते गानी खाना । हार खरीद कर आगे बढ़े तो मुट्टे बेचने वाला भी विलाई दे गया । उसने चार मुट्टे खरीदे । दो अपनी बगल में दबाये एक स्वयं खाने लगा और एक मेरी ओर बढ़ाकर ज़िद करने लगा कि मैं भी खाऊँ । मुझे अभीव उलझन भी होने लगी । एक तरफ़ मेरे कीमती कपड़े दूसरी तरफ़ सुखदेव की अपनी यही रोज़वारी पोशाक, उस पर दो गजरे और मुट्टे । 'मैं मुट्टे नहीं खाऊँगा मैंने कहा । बस फिर क्या था वह लगा गालियाँ बोलने । उसे चुप करने के लिए मुझे फिर झुकना पड़ा । मैंने मुट्टा से लिया और

शुष्प से दाने निकाल कर खाने लगा। उसने ध्याग्रह किया कि दाँत से मोच कर खाऊँ। उसका कहना था कि भुटटे का मजा दाँत से मोचकर खाने में ही है। दो-एक बार की ज़िद के बाद जब मैंने सड़क बसते दाँत से नाचकर खाने से साफ़ इनकार कर दिया तो इस बार उसने अपना ध्याग्रह वापस ले लिया।

इसी प्रकार एक बार तिस्रों म भावडी बाजार का सटक पर भगवत्सिंह सुखदेव और जयदेव त्रिभुक्त के समय किसी काम से जा रहे थे। रात होने से घण्टी काफी देर थी और साग त्रिभुक्त लौकर भी नहीं गुठारा जा सकता था। अस्तु समय काटने के लिए निकले। एक मकान के सामने एक बंदिया द्वार उसके दरवाजे में खड़ेखानी बस रही थी। सुखदेव की पांशु पर उस भी अपनी किसी दूसरी बहन का दसास समझ बस्य ने द्वार म पुकारा "ऐ, देखो य मदुआ कहता है सुभ मे शर्ती क सा। जवाब देने में उसे एक क्षण की भी देर न लगा। दाह्या के सहजे में उसने कहा, "ऐसा न करना वीवी जी। फिर हम लोगी रोगी कैसे बसेगी ?

घर आकर जयदेव ने सुखदेव की हरबत पर सग्न एतराज किया। "मुनने बास हम लोग के बारे म क्या सोचत हांगे उसने कहा।

'यही कि मैं किसी क्षदया का दसास हूँ और तुम दोना मेरे शिकार यह कहकर सुखदेव मे हंसना शुरू कर लिया। जयदेव क बार-बार आपत्ति करने पर उसने तब दिया 'अगर इस अपरिचित घर में लोग हमें बान्तिवारी दल का सन्स्य म समझकर बंया का दसास समझें सा यह हमारी सकमता

है। फिर छेड़ने के सहजे में बोला 'घोर उधर से गुजरने में अगर किसी ब्रह्मचारी के ब्रह्मचय को खतरा हो तो वह धाँसा पर हाथ रख ले या पट्टी बाँध कर बसा करे।' यह कहकर उसने फिर हँसना आरम्भ कर दिया। अपनी आभारा पोशाक की स वकता पर उसे बड़ा सतोप मिला।

हठी होने के साथ-साथ सुरभेव मक्की भी था। अगर एक बार उसे किसी बात की भ्रू सवार हो गई तो किसी मजास कोई उसे अपने निगय से डिगा सके। एक बार आगरे में उसे अपनी सहनघमित की परीक्षा सने की भ्रू आई। एक वहाना भी मिन गया। विद्यार्थी जीवन में जब क्रान्तिकारी दम से उसका सम्पर्क हुआ था उसने अपने बायें हाथ पर 'घो३म्' और अपना नाम गुदबा लिखा था। फरारी की हासत में पहचान के लिए यह बहुत बड़ी निशानी थी। आगरे में बम बनाने के लिए नाइटिक एसिड खरीद कर रक्खा गया था। किसी को बताये बयैर उसने बहुत-सा नाइटिक एसिड 'घो३म्' कहा अपने नाम पर सगा दिया। शाम तक जहाँ-जहाँ एसिड सगा था वहाँ गहरे अस्म हो गये और चारा हाथ सूज गया। प्वर भी था गया। ऐकिन इस सब के बावजूद न तो उसने अपनी तकसीक का किसी से बिक्र किया न उक को घोर न उसकी कुहसवाना में कोई कमी आई। हम सोगों को उसकी कारस्तानी का पता तब पसा जब दूसरे दिन गहाने के लिए उसने अपना कृता उतारा। हालत देखकर जब आजाद और भगतसिंह नाराज हुए तो उसने हँसते-हँसते कहा 'घिनान्त की निशानी भी मिन आयनी घोर एसिड में फिटनी असत है

इसका अनुभव भी हो जायगा।' इसका वाद वह पार-पार्श्व दिन भागरे में रहा करीब-करीब सभी साधियों में दबा, इसाब और मरहमपट्टी के लिए प्राग्रह किया लेकिन उसने किसी की एक म सुनी। वह तो तबस्वीफ सहने की अपनी क्षमता की परीक्षा से रहा था। वह घदन्त्र अपना सारा काम करता रहा और उसी हान्त में साहौर चला गया।

थोड़े दिनों में एसिड का धाव भर जाने पर उसने देखा कि नाम का कुछ निशान धव भी गेप है। उसने उसे भी मिटाने का निश्चय कर लिया। एक दिन शाम को वह दुगा भाभी के यहाँ पहुँचा। भगवती माई उस समय बही गये थे और भाभी रसोईपर में खाना बना रहा थी। सुखदेव भगवती माई के कमरे में जा भर बैठ गया। काफी देर तक उसका खामोश रहने पर भाभी की उत्सुकता हुई कि वह क्या कर रहा है। जा कर देखा तो दग रह गई। उसने मज पर एक मोमबत्ती जला रखी थी और बड़े दरमीनाम से उसकी ली पर हाम दिय बैठा था। जिस स्थान पर उसका नाम लिखा था वहाँ की सारा जल चुकी थी लेकिन इस बार वह काम धूरा नहीं छोड़ना चाहता था। भाभी ने लपक कर मामबत्ती उठा ली। जब उन्होंने उसकी इस करतूत पर उसे डाटा तो वह मुम्परा भर दिया बोला कुछ नहीं।

भागरे में एक बीमार साधी क लिए प्राण्डी लाकर रक्सा पई थी। उन्होंने दो ही बार बम्बब इस्तमास की होगी कि उन्हें प्रागरा छोड़ देना पड़ा। प्राण्डी की बीतस देयकर मुम्बेव का साराब के लये का अनुभव प्राप्त करने की भक सवार हुई

और उसने दूसरों की धाँख बचाकर अभी बातें साफ कर दो। इसके छोटी देर बाद ही उसे भगतसिंह के साथ दिस्त्री जामा था। जसमे के लिए उठा तो उसके पैर सड़खड़ा गये। पूछने पर उसने साफ-साफ घता दिया। जब भगतसिंह ने उस गाड़ी से न जाकर राम की गाड़ी से जाने की बात कही तो सुखदेव बिगड़ उठा

‘मैं तो यह जानना चाहता हूँ कि घाँखिर इसके नशे में ऐसी कौम-सी बात है कि लोग इसके पीछे खोबाने रहते हैं और यह धनुभव में हाथ में रहकर ही कर सकता है। बेहोशी का धनुभव कभी राही धनुभव नहीं कहा जा सकता।’ यह कहकर वह सामान उठाकर जसने की तयार हो गया। बाद में भगतसिंह ने बताया कि रास्ते में एक बड़ा घर उसके पैर जकर सड़खड़ाये लेकिन बातचीत और व्यवहार में उसने यह जाहिर नहीं होने दिया कि वह नशे में है।

कुछ साधियों का मत है कि सुखदेव एक कमजोर तबियत का व्यक्ति था और उसमें अधिक समय तक एक निश्चय पर जमे रह सकने की क्षमता का अभाव था। मेरे ज्ञान से सुखदेव उससे उस्ता था। वह अपने इरादों का पक्का था और एक बार किसी काम को करने का निश्चय करने के बाद किसी को भी मजाल न थी कि उसे उस काम के करने से रोक सके। अपने फैसलों के धामे दूसरों के फैसलों को मानना तो उसने सीखा ही न था। हाँ अमल में अमर किसी समय उसे ऐसा एहसास हो जाय कि उसका फसला गलत था तो दूसरों की आराजगी बचानी या सोक-साज की परवाह किए बिना

वह उसी मुस्तीदी से पीछे भी हट सकता था। अपने इस स्वभाव के अन्तगत जेल में उसने कई ऐसे कदम उठाये जिनसे हम लोगों को काफी परेशानी का सामना करना पड़ा।

पहलो सूख-हठताल के आरम्भ होने के दस दिन बाद भी उसमें कितना बोझ था इसका उल्लेख ऊपर किया था चुका है। लेकिन उसके सारे विरोध के बावजूद अधिकारियों ने जब उसे गिराकर रबर की मली नाक के रास्त पेट में उनार ही की तो अपनी हार पर उसे लिखिमाहट अनुभव हुई। उस रात देर तक वह अस्पताल की बरफ में टहलता रहा। दूसरे दिन से दूध पिलाने का क्रम दोनों समय चसने लगा। पाठ-पाँच दिन लगातार डाक्टरों के हाथों हार खाने के बाद वह बड़ा खिन्न हो उठा। पेट से दूध निकाल देने के लिए उसने गले तक धौंसो डालकर उल्टी करने की कोशिश की। एक-दो दिन कुछ सफलता भी मिला लेकिन उसके बाद गला इस बसरत का आदी हो गया। उसने सुन रक्खा था कि मक्खन निगल जाने से उल्टी हो जाती है। अस्तु ज्योंही डाक्टर दूध पिलाकर हटा उसने एक मक्खनी पकड़ी धीरे धीरे पाना के साथ उसे निगल गया। लेकिन उस पर इसका भी कोई असर नहीं पड़ा। इन्हीं सब प्रयोगों में करीब दस दिन धीरे धीरे गुजर गये। डाक्टरों ने दूध की मात्रा बढ़ा दी थी। फलस्वरूप उसका वजन भी बढ़ खला। अन्त में डाक्टरों को परास्त करने के लिए उसने ऐड़ी के पास की नस काटकर रात में धीरे धीरे धीरे का छून निकाल देने का निश्चय किया। हजामत का ब्लेड लेकर बैठा भी। फिर क्या था सोच कहेंगे फाँसी के डर से मुझे मैं आत्महत्या

करने की कोशिश की। सुसदेव धीरे डर। यह विचार घाटे ही उमने झट पक दिया। उस रात बह सोया नहीं। दूसरे दिन जब डाक्टर दूध पिमाने आया तो उसने उसक हाथ से यस्तन लेकर स्वयं ही दूध पी लिया। सुसदेव ने साधियों से पूछे वगर अनशन तोड़ दिया यह समाचार सब जगह चर्चा का विषय बन गया। उन लेकर तरह-तरह की लोका-टिप्पणी होने लगी। कुछ साधियां ने तो उसे देखकर मुँह सब धुमा लिया। लेकिन सुसदेव का निर्णय ही चुका था और अब उसे बापम सामा किसी के बस की बात न थी।

दो-तीन दिन बाद जब रविवार को सेन्टस जैसे से मगतासिंह आया तो उमने असग ले जाकर सुसदेव को समझने की कोशिश की। उमका उत्तर साफ था— 'सूक्ष्म-हृत्ताम की मफ्तता है किसी के मरने में। अनशन से डाक्टर मरने नहीं दग और गला काट कर मैं मरना नहीं चाहता।

मगतासिंह ने प्रस्ताव रक्खा कि डाक्टरों के दूध पिमाने के काम में बाधा डाल बगैर बह रवर की ममी से दूध लेता रहे। सुसदेव ने मुस्करा कर कहा 'मे अपने से घोला नहीं कर सकूँगा।

सन् तीस के आरम्भ में हम लोगों को दूसरी बार अनशन का सहारा मना पड़ा। जब सुसदेव ने उसमें हिस्सा लेने की इच्छा प्रकट की तो साधियों ने सोचा उसे अपने पिछले व्यवहार पर पक्काताप है। इस बार अधिकारियों ने दूध पिमाने में अल्दी नहीं की। पन्द्रह दिनों तक तो उन्होंने किसी को हाथ तक नहीं ममाया। अचानक पन्द्रहवें दिन राम को सुसदेव की हलाकत

धुराब हो गई—मूँह में छान पड़ गये जवान गँठने सगी बोलने की शक्ति भी जाती रही और हाथा-पैरों की अगुगलियाँ अकड़ गईं। डाक्टर को खबर दी गई, चागे घोर भामवीठ मच गई, हम सोग भी काफ़ी परेशान थे।

सुखदेव की मृत्यु में कोई तूफान न गड़ा हो जाय इस डर से हम सोगों को अस्पताल से हटाकर कोठरिया में भेज दिया गया।

वात यह थी कि इस बार सुखदेव ने घाग्म स ही पानी पीना भी छोड़ रक्ता था। इस रात को उसने हम सोगों को भी नहीं बताया था। डाक्टरों को इसका एहसास हुआ उसकी हामत देखकर। उन्होंने उसे पानी पिाने की बाधिया की ता उसमें न जाने कहीं की स्फूर्ति आ गई और वह गिरना-पड़ता उठकर भागा। यह उसका आखिरी विरोध था। चाडो दूर जाकर उसके पैर सड़सड़ाये और वह बेहाग हाकर गिर गया। डाक्टरों ने उसी हासत में माक के रास्ते नया स उसे पानी पिनाया और पाँच मिनट के अखर वह उठकर बठ गया।

सुखदेव ने जुधा लेसा था और वह फिर हार गया। अगर वो-लीन अष्टे डाक्टरों को उसकी हामत का पता और न सगता तो यतीगदास के बाट अनसन का वह दूमरा दाहीर होता। लेकिन जब एक बार डाक्टरों ने पानी गले के नीचे उगार दिया तो उसने अपनी हार स्वीकार कर ली—भूय-हूडताल में उसकी दिसअस्वी समाप्त हो चुकी थी। अब तो रोड की गिय गिय का सबास रह गया था।

उस रात हम सब सोग सुखदेव के लिए काफ़ी चिन्तित

रहे । सबेरे जैसे ही कोठरियाँ खुलीं हमने एक कीदी मम्बरवार की उसका हाम साने के लिए भेजा । पटा घसा गत गत जब डाक्टर उसे पामी पिमाने में सफ़्त्य हा गये तो एक अच्छे सिलाड़ी की भांति उमने हार स्वीकार कर मी धीर धनदान समाप्त कर दिया ।

सुखदेव का इस प्रकार धनदान समाप्त कर देना कुछ साधियों का बहुत बुरा सया । धन एक मम्बे सधर्ष के धासार उनके सामने थे । उनके व्यवहार में सुखदेव के प्रति एक बहिष्कार की मी साबना घा जाने पर भी उसने कमी कोई सिकायत नहीं की धीर न ही किसी के सामने अपने काम की सफ़ाई पेश की । यह भी उसके स्वभाव का एक अंग था ।

दूमरा के सामने रोना, किमी के प्रति ममता का प्रबधन, सहानुभूति चाहना या सहानुभूति का पात्र बनना वह कमबोरी समझता था । इसका यह मतमब नहीं कि उसे किसी से सगाब नहीं था या वह कमी रोया ही नहीं । यों सुखदेव दस के सभी साधियों की धाराम धीर तकसीफ़ के लिए काफ़ी परेधान रहता था । लेकिन ऊपर से ऐसा खैया 'कुछ परवाह नहीं' या 'मेरी बला से' का होता । धमिकांठ साधी भी उसकी इस धादत से वाकिफ़ थे धीर इसीलिए उसके बिहो भङ्की होने के बावजूद कुछ को छोड़ कर बाकी सब का सगाब धन्ठ तक उससे बना रहा ।

दस में धाने के बाव से पाटीं की भनाई धीर धादसं की पूर्ति इन दो के सामने बूखे भागों को उसने एक क्षण के लिए भी ऊपर स्वात नहीं दिया । धाराम-तकसीफ़ ज्ञान-पहमने का

शौक प्यार-मुहब्बत दोस्तों के लिए सगाव घादि मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ सुखदेव में भी थीं लेकिन उसका जीवन में इन सबका स्थान आदर्श से नीचे था। व्यक्तिगत स्तर पर उसे सबसे अधिक ममता थी भगतसिंह के प्रति। प्यार नाम की जो भी पूंजी उसके पास थी वह सारी फी सारी उसने भगतसिंह को ही सौंपी थी। जब कभी आगरा या ग्वाल्थियर में सुखदेव आ जाता ये दोनों एक दूसरे से ऐसे लिपटत मानो और कोई हो हो नहीं। एक कोने में बठकर बात करने में वे रात गुजार देते। राजनैतिक सिद्धान्तों से लेकर पंजाब की अलग-अलग पार्टियों के अलग अलग नेताओं और कार्यकर्ताओं की गति-विधि आदि सब पर टीका टिप्पणी होना और समय आने पर आदर्श के लिए अपने इसी सबसे प्यारे दोस्त को मौत के मुँह में भेजने में उसे संकोच नहीं हुआ।

दस की केन्द्रीय समिति का जिस बैठक में दिल्ली असेम्बली में बम फेंकने का निर्णय किया गया उसमें सुखदेव नहीं था। भगतसिंह का आग्रह था कि इस काम के लिए उस अशक्य भेजा जाय लेकिन बाकी सदस्यों ने उसकी यह बात नहीं मानी। उस समय साइड्स की हत्या के सिमसिमले में पंजाब की पुलिस भगतसिंह की समाप्त में थी। उसके पकड़े जाने के मानी ये फाँसी। समिति ने भगतसिंह की बात न मानकर दूसरे दो साथियों को भेजने का निर्णय किया। दो-तीन दिन बाद जब सुखदेव आया और उसे हमारे निर्णय का पता चला तो उसने उसका सकल विरोध किया। उसका कहना था कि पकड़े जाने के बाद अदालत के मजबूत से दस के सिद्धान्त आदर्श उद्देश्य और

बम-विस्फोट के राजनीतिक महत्त्व को भभी प्रकार भगवत्सिंह ही रस सकता है। इस सम्बन्ध में केन्द्रीय समिति की बैठक से पहले उसकी धीरे भगवत्सिंह की बात भी हा खुकी धीरे उसने भगवत्सिंह से घाघ्रह किया था कि वह स्वयं इस काम को करे। जब केन्द्रीय समिति के दूसरे सदस्यों से वह अपनी बात न मनवा सका तो उसने भगवत्सिंह का धनग से जाकर बात की।

उसने व्यवहार में बड़ा कठोरता थी। वाता-वातों में उसने भगवत्सिंह को काफी सख्त बातें भी कह डालीं—‘तुममें प्रहकार था गया है तुम समझने लगे हो कि तुम्हारे ही सिर पर लक्ष का सारा आरोमदार है, तुम मौत से डरने लगे हो कायर हो, प्रादि। उसका तक था जब तुम मानते हो कि तुम्हारे सिवा दूसरा कोई दल के उद्देश्य को अच्छी तरह नहीं रस सकेगा तो फिर तुमने केन्द्रीय समिति को यह फैसला क्यों सेने दिया कि तुम्हारे स्थान पर और कोई बम फेंकने जायगा?’

उसने भाई परमानन्द के बारे में साहौर हाईकोर्ट के अधीनों का भी सिद्ध किया कि दल का मस्तिष्क धीरे सुनधार होते हुए भी व्यक्तिगत तौर पर यह व्यक्ति कायर है और सखट के कार्यों में दूसरों का प्रागे झोंककर अपने प्राण बचाता रहा है। ‘तुम्हारे लिए भी एक दिन बीया ही फैसला लिखा जायगा।’ उसने भगवत्सिंह की धीरे धूरते हुए कहा।

भगवत्सिंह ने जितना ही सुलक्षेव के आरोपों का प्रतिरोध किया वह उतना ही कठोर होता गया। भगवत्सिंह के यह कहने पर कि तुम मेरा धपमान कर रहे हो उसने कठोर दम्बों में उत्तर दिया—‘मैं अपने मित्र के प्रति धपना कर्तव्य पूरा

कर रहा है।' अन्त में भगतसिंह यह कहकर उठ पड़ा कि 'आगे से तुम मुझसे कभी बात न करना।'

भगतसिंह के आग्रह पर कन्द्रीय समिति की बैठक फिर से बुलाई गई। सुखदेव बचस घठा रहा। बोला एक शब्द नहीं। भगतसिंह की जिद के सामने समिति को अपना फेंसना बदलना पड़ा। सुखदेव उसी शाम किसी सँ बात किए वगैर साहौर घसा गया। दूसरे दिन जब वह साहौर पहुँचा तो उस समय भी उसकी आँखें बहुत सूजी हुई थीं। शायद वह बहुत रोया था। उस दिन उसने न कोई कमबोरी दिखलाई और न एक आँसू बहामा लेकिन अन्तर से वह काफी हिम गया था। उसने ध्येय की पूर्ति में अपनी सबसे प्रिय बस्तु की बाजी लगा दी थी।

भगतसिंह के मुक़ाबले सुखदेव कम पढ़ता-लिखता था लेकिन उसकी स्मरण-शक्ति काफी खेज थी। शाम वीर पर दर्शन या सिद्धान्त की जिन पुस्तकों को दूसरे साथी हफ्तों में समाप्त कर पाते सुखदेव उन्हें दो दिन में ही पढ़ लेता। मोट्स उसने कभी नहीं बनाए, फिर भी सरसरी निगाह से पढ़ी पुस्तकों के बिस्तृत उद्धरण महीनों बाद भी उससे पूछे जा सकते थे। जेल के साधियों में भगतसिंह के बाद समाजवाद पर सबसे अधिक धगर किस्ती साथी ने पढ़ा और मनम किया था तो वह सुखदेव था।

सुखदेव के आत्मिकारी जीवन पर सबसे बड़ा कसक गिरफ्तारी के बाद पुलिस के सामने उसका बयान है यहाँ भी न... नाथों को ठीक तरह से समझी

न करके साधियों ने उसके ऊपरी व्यवहार को ही अधिक महत्व दिया। धीरे-धीरे भी हो एक बात साधिकार कही जा सकती है कि मौत का डर अन्त तक एक क्षण के लिए भी उसके पास नहीं फटका और न ही साहस में वह किसी से पीछे रहा।

उसका बयान देना अमृत था इसमें दो मत नहीं हो सकते और उससे और कुछ नहीं तो दस की प्रतिष्ठा को काफ़ी आघात तो पहुँचा ही। लेकिन यह बयान उसने अपनी वचन में स्याल से या दस को मुकसान पहुँचाने के स्यास से नहीं दिया। उसने उन्हीं मकानों और स्थानों का पता बताया जिनके बारे में उसे पता था कि वे छाड़े जा चुके हैं। सहारनपुर के जिस मकान में मे. डा० गयाप्रसाद और अयदेव रह रहे थे उसका पता दो ही व्यक्ति जानते थे सुसदेव और फ़रीन्द्र। सुसदेव चाहता तो हमारा पता लेकर पुलिस को अपनी सञ्चार्ड का इरमीनान दिमा सकता था। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। हम सहारनपुर के मकान में उस समय तक रहते रहे जब तक फ़रीन्द्र नहीं पकड़ा गया। इसी प्रकार उसने किसी व्यक्ति का असली नाम और पता भी पुलिस का नहीं दिया। बयान के पीछे भाषणा जो—हाँ, हमने यह सब किया। अब तुम जो चाहो कर सो। उसके बयान में स्वयं उसे ही सबसे अधिक मुकसान पहुँचाया।

केस के दौरान में सफ़ाई आदि के सवाल पर भी वह सब से अधिक उदासीन रहा। वह केस की रीढ़ी में उसी हव तक भाग लेने का पक्षपाती था जिस हव तक अदालत के मज को

क्रान्तिकारी भावनों के प्रचार के साधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सके। सत्र की प्रदामत से न्याय की प्राशा रखना वह नादानी समझता था। सत्र पक्ष के किसी बर्मचारी से चाहे वह प्रदामत का हो, चाहे पुलिस का चाहे जेल का न तो उसने सौजन्य की प्राशा की और न स्वयं ही व्यवहार में उसके प्रति सौजन्य करता। उसका प्रसमी रूप उस समय देखने में आता था जब कभी पुलिस या जेलवासियों से मारपीट होती। हँस-हँसकर मारने और मार खाने में उसे मजा आता था।

शुद्धदेव को क्रान्तिकारियों के उद्देश्य की सफलता पर कितना अडिग विश्वास था इसका प्रमाण फाँसी से कुछ ही पहले महारमा जी के नाम लिखा उसका पत्र है। क्रान्तिकारियों से आन्दोलन स्वीकृत कर देने की अपील का उत्तर देते हुए उसने लिखा—“क्रान्तिकारियों का ध्येय इस देश में सोसलिस्ट प्रजासम्य प्रणाली स्थापित करना है। इस ध्येय में संघर्ष के लिए बारा भी गुंजाहस्त नहीं है। मेरा क्यास है आपको भी यह धारणा न होगी कि क्रान्तिकारी ठर्क हीम होते हैं और उन्हें केवल विनाशकारी कार्यों में ही आनन्द आता है। हम आपको बतला देना चाहते हैं कि यथार्थ में बात इसके विस्कुल विपरीत है। वे प्रत्येक कदम आगे बढ़ाने के पहले अपने चारों ओर की परिस्थितियों पर विचार कर लेते हैं। उन्हें अपनी जिम्मेदारी का ज्ञान हर समय बना रहता है। वे अपने क्रान्तिकारी विधान में रचनात्मक प्रयत्न की उपयोगिता का मुख्य ध्यान देते हैं यद्यपि मौजूदा परि-

में उन्हें केवल विनाशात्मक धंग की ओर ध्यान देना पड़ा है। वह दिन दूर नहीं है जबकि उनके (क्रान्तिकारियों के) नेतृत्व में ओर उनके मग्ने के नीचे जन-समुदाय उनके ममाजवानी प्रभातन्त्र के उच्च ध्येय की ओर बढ़ता हुआ विस्तार पड़ेगा।

इसी पत्र में एक ध्येय ध्यान पर धपनी फ्रांसी की सजा के बारे में उसने लिखा— 'साहूँर पड़यन्त्र के तीन राजवन्ती जिन्हे फ्रांसी देने का हुकम हुआ है ओर जिन्होंने संयोगवश देश में बहुत बड़ी श्वाति प्राप्त कर ली है क्रान्तिकारी दम के साथ कुछ नहीं हैं। वास्तव में इनकी सजाओं को बदल देने से देश का उतना कल्याण न होगा जितना इन्हें फ्रांसी पर बड़ा देने से होगा।

ऐसा या मुक्तदेव—फल से भी कोमल ओर पत्थर से भी कठोर। डर जिसके पास कभी नहीं पटका ओर शत्रु के साथ समझौते की बात जिसने एक क्षण के लिए भी नहीं सोची। लोगों ने उनकी कठोरता ही देखी ओर उसे न समझ पाकर उस के साथ धर्म्याय भी किया। लेकिन उसने कभी इसकी शिकायत नहीं की। धपनी कोमल भावनाओं को प्यार ओर ममता को निजी भीड़ समझ कर धन्त तक वह उन्हें अपने धन्त ही छिपाए रखा।

